लिखित तप अङ्गिकार करना चाहिए। वह तप किस विधान से किया जाय ? यह वर दत्त कुमार और गुण मञ्जरी कन्या का मूल कालिक उदाहरण देकर स्पष्ट रूप से समझा दिया जाता है।

वर दत्त कुमार की आख्यायिका

जम्बु द्वीप भरत क्षेत्र में पद्मपुर नामक एक अद्वितिय मनोहर नगर था। जहाँ वीर धीर, प्रजा पालक, न्यायी, गुणग्राहक, नीतिज्ञ और अत्यन्त चतुर धर्मात्मा, 'अजितसेन' नामक राजा राज्य करता था। इसी राजा के रूप लावण्यादि विविध गुण सम्पन्ना धर्म-परायणा, 'यशामती' नाम की राणी थी। विनय शीलादि देवोपम गुणों से सुशोभित, महान् भाग्यवान, अतीव रूपवान, राज्य चिन्हालंकृत 'वरदत्त' नामक राजकुमार इसी राणी की कुक्षी से उत्पन्न हुआ था। जब राजकुमार की अवस्था आठ वर्ष की हो गई तो राजा ने उसको विद्याध्ययन के लिए कलाचार्य के सुपूर्द कर दिया। कलाचार्य के घोर परिश्रम करने पर भी मन्दबुद्धी होने के कारण शास्त्रादि गहन विषय तो दूर, रहे किन्तु एक शब्द भी न सीख सका। शनैः २ राजकुमार ने युवावस्था में पदार्पण किया। इसी बीच में प्रारम्भ संचित अशुभ कर्मोदय से राजकुमार

को भयङ्कर गलित कुष्ट रोग ने आघेरा। जिससे राज कुमार महान् कष्ट-कारागार की काल--कोठरी में जा गिरा। माता-पिता अपने प्राण प्रिय पुत्र को इस प्रकार असह्य दुख से दुखी देखकर बहुत ही चिन्तातुर हुए और रोगोपशांति के लिए लाखों रुपया व्यय कर दिया किन्तु किसी भी प्रकार रोगोपशम नहीं हुआ। अस्तु।

इसी नगर में एक सप्त कोटि द्रुमाधिश (द्रुम-अशर्फी) " सिंहदास " नामक सेठ रहता था। उसके ' कर्पुर तिलका ' नामक धर्म परायण विदुषी पत्नी थी। अपितु उभय दम्पती जैन--धर्म--पालक थे संतानके नाम पर केवल चन्द्र मुखोज्वला, अनन्त गुण भूषिता ' एक गुण मञ्जरी , नामा मनोहर बालिका थी। बड़े लाड प्यार से पाली हुइ यह रूपवती बालीका। कुमारावस्था को पारकर शनैः २ यौवनावस्था में आ गइ। इधर यौवन आया और उधर पूर्व भव संचित अशुभ कर्मोदय से गुण मञ्जरी के शरीर में कई भयङ्कर रोगों ने आकर घेरा डाल दिया। कुछ ही दिनों में गुण मञ्जरी गूंगी हो गई। तब सिंहदाससेठ ने अपरमित द्रव्य व्यय अपनी पुत्रीका के रोगोपशमन के लिए किया, किन्तु कोई लाभ नाहीं हुआ. पुत्री

युवती हो चुकी थी, अत उस के विवाह के लिए भी कइ धनी मानी सेठों से उसने नम्रता पूर्वक निवेदन किया, किन्तु गूंगी के साथ विवाह कौन करता ? इसी चिन्ता में उभय दम्पति दिनों दिन घुलने लगे।

कुछ ही समय के बाद जन्म सुधारक, दुःख विनाशक, भवोदधि तारक, षट् कायिक जीवोंके प्रति पालक, जगम युग प्रधान, चतुर्ज्ञान धारक श्री मज्जैन धर्म-दिवाकर 'श्री विजय सेनाचार्य' पांचसो चेलों (मुनियों) सहित पद्म पुर के बाहर 'पुण्य वाटिका '' में पधारे। इधर शहर में मुनि पदार्पण का शुभ-सवाद पहुचते ही सभ्या वध नर नारि बहुमूल्य वस्त्राभूषणोंसे अलकृत हो जिन-वाणी श्रवणार्थ मुनि सेवा म उपस्थित हुए। सेठ सिंहदास भी सह कुटुम्ब गुरु-चरणों में उपस्थित हुआ और सेवा में तल्लीन हो गया। उधर नगर स्वामी राजा अजीत सेन भी चतुरङ्गिणी सेना और सह परिवार मुनि दर्शन सेवा और वाणी श्रवणार्थ श्री विजय सेनाचार्य की सेवा में उपस्थित हुआ।

तब दर्शनार्थ आई हुई नागरिक जनता को मुनि श्री ने सुललित मनोहर अमृतमय शब्दों में सदुपदेश सुनाना प्रारम्भ किया। प्यारे बन्धुओ!

और बहनो ! मुक्ति-मार्ग की प्राप्ति के लिए सब से प्रथम ज्ञान की पुर्णतया आवश्यकता है। उक्तं च " पढमं नाणं तवो दया " इति वचनात् जिनेश्वर देवने फरमाया है कि पहले ज्ञान और फिर दया। क्योंकि संसार के समस्त पदार्थों के अंतरंग स्थित नित्यानित्यत्व का बोध कराने वाला केवल ज्ञान ही है। कि ज्ञान की प्राप्ति होने पर समस्त-मुक्ति-मार्ग सहायक गुणों की प्राप्ति हो जाती है। अस्तु। उक्तंहि--

नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एयमग्ग मणुपत्ता, जीवा गच्छंति सोग्गइं ॥

इति वचनात्

उ. अ. २८ गा. ३

अर्थात्–ज्ञानकी प्राप्ति होने पर दर्शनकी प्राप्ति होती है। दर्शन की प्राप्ति होने से चारित्र की और चारित्रकी प्राप्ती से तप अर्थात् सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की प्राप्ति होने पर आत्मा सीधा मोक्ष की ओर जाता है। मुक्ति मार्ग की प्राप्ति के चार साधनोंमें से ज्ञान को सबसे प्रथम स्थान दिया गया है। जहांपर सम्यग् ज्ञान है, वहीं पर सम्यग् दर्शन भी है। और जहांपर सम्यग् दर्शन हैवहां सम्यग् ज्ञान अवश्य है। जहां ज्ञान व दर्शन

दोनों हैं, वहां सम्यग् चारित्र की उपस्थिति
स्वयंही हो जाती है। अब, जहां सम्यग्
सम्यग् दर्शन और सम्यग् चारित्र यह तीनों
मिल होजाते हैं, वही मोक्ष का मार्ग है। अ
समस्त सूत्रों में ज्ञान का स्थान सर्व से प्रथम
है। अतएव मुमुक्षु पुरुषों का कर्तव्य है कि वे
ज्ञान की आराधना करें और अन्य भाई व
से भी सतत ज्ञानार्जन करवाने का प्रयत्न
किन्तु मन वचन और काया से कभी ज्ञान
विराधना न तो करें और न करावें। क्योंकि
से विराधना करने से शून्य मनवाला अर्थात्
हीन होता है। वचन द्वारा ज्ञान विराधना
वाला मूकत्व भाव (गूंगेपन) को प्राप्त होता
और काया से विराधना करने वाले के शरी
कुष्ठादि भयङ्कर रोगों की उत्पत्ति होती है।
मन वचन और काया इन तीनों योग द्वारा विर
करने से द्रव्यादि सम्पत्ति नष्ट होती है।
माता, पिता, सुत दारा आदि का वियोग होत
अनेक प्रकार की आधि, व्याधि प्रादुर्भूत होत
इस प्रकार उपदेश श्रावक उपदेश श्रवण कर "
दास " सेठ ने मुनि श्री से इस प्रकार प्रश्न
कि, हे भगवन्! मेरी पुत्री " गुण मञ्जरी "

भव में ऐसे कौनसे दुष्कृत्यों का समाचरण किया था कि जिससे उसके शरीर में ऐसा भयङ्कर रोग उत्पन्न हुआ ! प्रत्युत्तर में आचार्य श्री ने फरमाया कि तुम्हारी पुत्री के शरीर मे रोगोत्पत्ति होने का कारण सुनिये !

घात की खण्ड के पूर्व की ओर सुरम्य 'भरत-खेट न' नामक एक नगर था। 'जिनदास सेठ' अपनी धर्म पत्नी " सुंदरी " नामा सेठानी के साथ आनन्द पूर्वक निवास करते थे। इनके आसपाल, तेजपाल, गुणपाल, धर्मपाल, और धर्मसार नामके पांच पुत्र तथा लीलावती, रङ्गावती, मङ्गावती और कनकावती नामा चार पुत्रियां थी। सेठ ने एक दिन शुभ काल देख कर अपने पांचो पुत्रों को विद्याध्ययन के लिए सुयोग्य अध्यापक के सुपुर्द किए। बालक लाड प्यार में पलेथें, इस कारण पढने लिखने से तो दूर रहे किन्तु दिन रात खेल कूद में ही लीन रहने लगे। जब एक दिन अध्यापक ने उनकी इस प्रकार चंञ्चलता और क्रिडासक्तीके लिये भर्त्सनाकी और ताडना भी दी। इस प्रकार भर्त्सना और ताडना से वें इतने दुखी हुए कि रोते हुए अपनी माता के पास गये और उससे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। इसपर माता ने क्रोधित

होकर सब पुस्तकें आग में फक कर जला दी, पट्टी फोड डाली और बेटों को बुला करके बोली पुत्रों तुम्हें पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं। तुम्हें पढ़ कर क्या करना है। पढ़ते हैं, वह भी मरते हैं और बिना पढ़े भी। फिर व्यर्थ ही दांत कटाकट क्यों की जाय? अपने गृह में असीम द्रव्य है, बैठे २ खाओगे तो भी जीवन भर पर्याप्त होगा, फिर चिन्ता किस बात की है। अब कभी पढ़ने के लिये न जाना। यदि अध्यापक बुलावे तो उसको गालियां देना पत्थर मारना और मेरे पास भग कर चले आना। इस प्रकार अशिक्षिता माता द्वारा भड़काये जाने पर समस्त लड़के उन्मत्त होकर खेल कूद में ही आनन्द मनाने लगे।

पुत्रों को इस प्रकार उन्मत्त होकर क्रीडासक्त देख कर सेठने एक दिन सेठानी से पूछा कि लड़कों को पढ़ने क्यों नहीं भेजती हो? लड़के मूर्ख रह जायगे तो इन्हें लड़की कौन देगा? इन्हें पढ़ने के लिये भेजा करो। तब सठानी ने उत्तर दिया कि आप जान और आपके लड़के। मैं उन्हें थोड़े ही रोकती हूं। न जाय तो उसका मैं क्या करू। यदि ये अध्यापक के पास नहीं जाते हैं, तो आप स्वय ही क्यों नहीं पढ़ाते। किस के मारने के लिये लड़के

थोडेही हैं। पुत्र पिता के आधीन और पुत्रियें माता के आधीन होती हैं। बेटे की चिन्ता पिताको और बेटी की फिक्र मां को होती है। इस लिये लडके पढे या न पढे यह सब आपही का दोष है, इसमें मैं कुछ नहीं कर सकती।

इस प्रकार अशिक्षिता सेठानी का प्रत्युत्तर सुनकर सेठजी चुपचाप अपने नित्य कृत्यों में लग गये। धीरे २ धार्मिक ज्ञान का सतत आराधन करने लगे, और स्वकीय द्रव्य का पाठशाला विधवाश्रम, अनाथालयादि में व्यय कर सदुपयोग कर नित्य धर्म ध्यानादि में प्रवृत्त हो आत्म कल्याण करने लगे।

इधर पांचो पुत्र युवावस्था को प्राप्त हुए, किन्तु अन पढ होने के कारण कोई भी उन्हे कन्या देने को तैयार नहीं होता था, प्रत्युत्त अरे! यह तो मूर्ख हैं, मूर्ख कहीं विवाह के योग्य होते हैं, कहकर उपहास करते थे। सेठजी अपने पुत्रों का इस प्रकार उपहास सुनकर एक दिन धर्म पत्नी से कहने लगे। तेरी कुशिक्षा से ही पुत्र मूर्ख रह गये। तेने उनकी पट्टिएं फोडकर और पुस्तकें जलाकर ज्ञान की महान् आशातना कर के तेने ज्ञानावर्णीय कर्मों के असीम दलिये एकत्रित

कर लिये हैं, ऐसे महान् दोष का बदला किस जन्म में देगी ! इस प्रकार सेठ जी के वचन सुनकर सेठानी ने प्रत्युत्तर दिया कि यह सारा दोष आप ही का है, मेरा इस में किंचित मात्र भी नहीं । तब सेठजी ने कहा कि पापिन् ! अपना दोष मुझ पर डालती है ? तब सेठानीने उत्तर में कहा कि पापी तू ! और तेरा बाप !! जिसने मुझे वैसाकर ऐसी कुशिक्षाएं दी । इस भांति सेठानी के दुर्वाक्यों से क्रोधित हो सेठजी ने उसपर पत्थर दे मारा जिसकी मस्तक में मार्मिक चोट लगने से उसी समय मर गई । और अब तेरे घर में ' गुण मञ्जरी ' नामा पुत्री होकर आई है । पूर्वभव में ज्ञान विराधना करने के कारण ही इसके शरीर में रोगोत्पत्ति हुई है ।

इस प्रकार मुनि के वचन श्रवण कर ' गुण मञ्जरी को जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न होगया । जिससे अपना पूर्व भव का समस्त वृत्तांत जान लिया । तत्पश्चात् मुनिचरणों में निवेदन करने लगी कि दीनबन्धो ! आपका कथन अक्षर शः सत्य है । इसी बीचमें सेठजी ने प्रश्न किया कि कृपासिन्धो ! इस कन्या की यह व्याधि किस प्रकार शांत हो सकती है ? गुरु महाराज ने प्रत्युत्तर दिया कि

देवानुप्रिय ! " पढमं नाणं तओदया " अर्थात् सर्व प्रथम ज्ञान की भक्तिकर उसकी आराधना करें। जिस से सर्व प्रकार का आनन्द मंङ्गल होगा। तब सेठजी ने पुनः प्रश्न किया कि मुनिवर ! ज्ञान की भक्ति और आराधना किस प्रकार की जाय ? प्रत्युत्तर में मुनि राज ने फरमाया, हे मोक्षाभिलाषी! प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी का उपवास करें। पांच २ लोगस्स के पांच कायोत्सर्ग करे। दो २ नमोत्थुणं एक २ कायोत्सर्ग के साथ देवें। पांच दिन व एक मास पर्यन्त अमुक २ पांच फल अथवा पांच हरी नहीं खाउंगा ऐसा नियम ग्रहण करे। उपवास के दिन पौषध कर देवसी, रायसी, उभय काल का प्रतिक्रमण आता हो तो अवश्यही करे। नहीं तो किसी दूसरे से ही सुने। ज्ञान कीर्तन करे तथा ज्ञानी पुरुषों के गुण-ज्ञान करे। और देवसी रायसी प्रति क्रमण के अन्त में इस ज्ञान पंञ्चमी के स्तवन को पढे।

"पञ्चमी तप तुमे करोरे प्राणी, जिम पामो निर्मल ज्ञान रे।
पहिलुं ज्ञानने पछी किरिया, नहीं कोई ज्ञान समान रे ॥ १ ॥
नंदी सूत्र में ज्ञान वखाण्यु, ज्ञानना पाच प्रकार रे।
मति श्रुति अवधि ने मन पर्यव, केवल ज्ञान श्रीकार रे ॥ २ ॥
मति अठावीस श्रुती चउदे, अवधि छे असंख्य प्रकार रे।
दोय भेद मनपर्यव दाख्युं, केवल एक प्रकार रे ॥ ३ ॥

चंद्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा तेस्‌ अधिक प्रकाश रे।
केवल ज्ञान समूं नहीं कोई लोकालोक प्रकाश रे ॥ ४ ॥
पार्श्वनाथ प्रसाद करीने म्हारी पूरो उम्मेद रे।
समय सुन्दर कहे हूँ पण पामूं, ज्ञाननो पांचमो भेद रे।

"ॐ ह्रीं नमो नाणस्स"

इस पदकी २२ माला पर्यंकासनादि आसन से उत्तर पूर्व दिशा की ओर मुंह कर मौन युक्त हो जपकरे। यदि प्रमाद वश जप रहजाय तो पारणे के दिन जप किये विना भोजन नहीं करे। यदि शहर में हो गुरु गुराणी हो तो उनके दर्शन कर माङ्गलिक सुने तथा पारणे के समय गुरु गुराणी को प्रतिलाभ अर्थात् पारणे के पहले अवश्यही पात्र दान दें। यदि गुरु गुराणी का योग न होतो स्वधर्मी बालक तथा बालिकाएं और यदि इतनी शक्ति न हो तो एक बालक और बालिका तो अवश्य ही जिमावे इस प्रकार पांच वर्ष और पांच मास पर्यन्त ज्ञान की आराधना करे। उक्त नियम की पूर्ति के दिन यथा शक्ति निम्नाङ्कित विधि पूर्वक उजमना करे। जिन शासन की प्रभावना बढावे। प्रसन्न मुख हो स्वधर्मिणी बहिणों के साथ मंगल गान युक्त पांच पुस्तकें पांच उनके बांधने के चोरस वस्त्र, तथा पांच ठवणियें आदि तथा पौषध आदि के काम में

आवे ऐसे कम्बल, केसले, दरियें आदि सामग्री संयुक्त गुरु महाराज के दर्शन कर उक्त सब वस्तुएं ज्ञान भण्डार में चढावे और ज्ञान प्रचारार्थ ५।) ज्ञान भण्डार में जमा करावे। विशेष शक्ति हो तो व्याख्यान के समय श्रोताओं के बैठने के लिए बडी दरी अथवा चंदवा वगैरा भी चढावे और स्वधर्मी प्रत्येक बंधु के घरमें लड्डू की प्रभावना वितरण करे। एवं प्रीति पूर्वक भोजन द्वारा प्रेम तथा वात्सल्यताकी वृद्धि करें। पढनेवाले असमर्थ बालकों को भोजन, वेतन, पुस्तकादी द्वारा यथाशक्ति सहायता करे। तथा विधवाश्रम, कन्या पाठशाला आदि संस्थाओं में भी यथाशक्ति दान प्रदान करें। आदि उपरोक्त सभी वस्तुएं देने की शक्ती न हो तो, शक्तयानुसार थोडा बहुतही द्रव्य ज्ञान भण्डार में अवश्य चढावें। इस प्रकार पांच वर्ष और पांच मास तक ज्ञान-पञ्चमी की आराधना करने से अवश्य ही आनन्द मङ्गल होता है।

यदि प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी की आराधना करने की शक्ति न हो तो जीवन पर्यन्त प्रत्येक वर्ष कार्तिक शुक्ला पञ्चमी की आराधना करने पर भी उपरोक्त फल की प्राप्ति होती है.

इस प्रकार गुरूपदेश श्रवण कर सेठजी बोले कि-स्वामिन ! मेरी पुत्री प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी करने में असमर्थ है, इसलिए कृपया प्रति वर्ष की कार्तिक शुक्ला पञ्चमी की आराधना किस प्रकार की जाय, सो विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिये

प्रत्युत्तर में मुनि श्री ने फरमाया कि देवानु प्रिय ! जीवन पर्यन्त प्रत्येक वर्ष की केवल एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का उपवास और पौषध व्रत सयुक्त उभय काल का प्रतिक्रमण करे। तथा गुरु गुराणी के दर्शन कर, माङ्गलिक श्रवण करे और हरी वस्तुओं के कुछ त्याग व्रत धारण करे स्वधर्मीयों को प्रभावना करें। तथा प्रीति भोजनादि द्वारा स्वधर्मियों में प्रीति तथा वात्सल्य की अभिवृद्धि करें। अनाथभ्रमादि संस्थाओं का दान देकर उनका संरक्षण करें। तथा अव शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार ही करे। इस प्रकार मुनि श्री का सदुपदेश श्रवण कर गुण मञ्जरी ने प्रत्येक वर्ष की केवल एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के उपवास का नियम धारण किया।

इसी सुअवसर में राजा अजीत ने भी मुनि श्री से प्रश्न किया कि गुरुदेव ! वरदत्त नामक राजकुमार के शरीर में कुष्ट की

उत्पत्ति किस प्रकार हुई ? और ऐसे कौन से अशुभ कर्म इसकी आत्मा ने-उपार्जन किये हैं, जिससे यह विद्या विहीन भी रह गया! कृपया इस का विस्तार पूर्वक विवेचन किजिये। प्रत्युत्तर में मुनि श्री ने फरमाया कि राजन् ! राजकुमार वरदत्त ने पूर्व भव में ज्ञान की विराधना की थी इसी कारण से यह विद्या हीन हुआ है। इसका समस्त वृतान्त मैं विस्तार पुर्वक कहतां हुं, तू दत्तचित्त होकर सुन। इसी कवल कल्प जम्बू द्वीप के भारत क्षेत्र में श्रीपुर नामक एक रमणीय-नगर था। उस में वसु नामक एक शेठ निवास करता था। उसके वसुसार और वसुदेव नाम के दो पुत्र थे, एक दिन सेठ के दोनों पुत्र खेलने के लिये जंगल में निकल गये। वहां " सुन्दरसूरि " नामक मुनि का समागम हो गया। दोनों महाजन पुत्र मुनि के चरण कमलों में पञ्चाङ्गनमन कर मुनि श्री की वाणी श्रवणार्थ समीप बैठकर सेवा करने लगे। तब मुनि श्री ने देशकाल देख कर पिपासुओं को सुमधुर शब्दों में संसार की असारता दिखलाई। जिससे दोनों पुत्रों को अपूर्व वैराग्य उत्पन्न हुआ और अपने प्रिय माता पिताओं की

आज्ञा लेकर उक्त मुनि वर्य के समीप दीक्षा ग्रहण कर दोनों ही मुनि शुद्ध चरित्र के अनुगामी बन। दोनों ही मुनिओं ने गुरु सेवा कर महत् ज्ञानाभ्यास किया। किन्तु वसुदेव नामक मुनि विशेष गुरु भक्त और विनय सम्पन्न होने के कारण विविध शास्त्र सम्पन्न तथा अन्य कई विद्याओं के विशेष पारदर्शी बन गये। गुरु महाराज ने उन्हें सुयोग देखकर आचार्य पद से विभूषित किये।

कुछ समय के पश्चात् आचार्य वसुदेव स्वकीय पांच सो शिष्यों के परिवार को ज्ञानाभ्यास कराते हुए जनपद देश में विचरण करने लगे। एक दिन शयनानन्तर शिष्य मण्डली में से मुनि जन कोई सूत्रार्थके लिये, कोई भवन पति, व्यन्तर, ज्योतिष और देवविमानवासी देवताओं का स्वरुप एवं उनके गतागत के विषय जानने के लिये क्षण २ के पश्चात् पृथक् २ आचार्य महाराज की सेवामें जाकर प्रश्नोत्तर करने लगे। जिसके कारण आचार्य श्री रातभर में थोडी निद्रा भी नहीं लेने पाये तब आचार्य श्री के मन में ऐसा कुविचार उत्पन्न हुआ कि मेरे बडे भ्राता वसुसार 'जी ने पुर्व भव में महान् पुण्योपार्जन किये हैं, कि जिस के कारण वे बडे आनन्द पूर्वक सारी रात्री सोते रहते हैं।

उनके अल्पज्ञ होने के कारण ज्ञान ध्यानादि गहन विषय पूछने के लिए कोई भी मुनि उनके सन्निकट नहीं जाता है। और वे अपनी इच्छानुसार सोना, बैठना, उठना, खाना, पीना आदि सब कार्य करते रहते हैं। न किसी प्रकार की चिन्ता है, और न असंतोष। मूर्ख जन अपनी आयु बडेही आनन्द में व्यातीत करते हैं। ऐसी मूर्खता मुझे ही क्यों नहीं प्राप्त हुई। यदि ऐसी मूर्खता मुझेही में रहती तो बडे आनन्द की बात थी। मूर्खता में बहुत से गुण दृष्टी गोचर होते हैं। मूर्ख मनुष्य को प्रायः किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होती। मूर्ख भोजन भी अधिक करते हैं। लज्जाको तो वे समझते भी नहीं। दिन रात आनन्द से पडे रहते हैं। कार्या-कार्य का उन्हें कोई विचार नहीं रहता, और मानापमान में सदा एक से रहते हैं। रोग रहित और शरीर से हृष्ट कष्ट होते हैं। इस प्रकार अनेक गुण विभूषित होने के कारण मुर्ख संसार में सुख पूर्वक जीवन व्यापीत करता है। इस कारग में भी आज से किसी को एक पद भी नहीं सिखाउंगा और अपना पढा हुआ भी सब भूल जाउंगा। इस प्रकार कु विचार कर बारह दिन तक मौन धारण की, और एक भी शिष्य को ज्ञान, ध्यान, पठन,

पाठनादि नहीं कराया। कुछ कालानन्तर उक्त पाप
की आलोचना किये बिना ही आर्त ध्यान संयुक्त
आचार्य श्री यहां से मर कर मानसरोवर की
निकट वर्ती अटवी में हंस रूप उत्पन्न हुए। कुछ
काल के पश्चात् हंस रूप आचार्य श्री का जीव
यहां से मर कर राजन् मेरे घर पुत्र रूप में उत्पन्न
हुआ है। किन्तु पूर्वोपार्जित ज्ञानावर्णी कर्मोदय से
अथवा ज्ञान का अहंकार करने से मूर्खत्व और
कुष्टादि रोगों की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार मुनि
वाक्य श्रवण कर राजकुमार परवस मूर्छित हो
भूमि पर गिर पड़ा। कुछ ही क्षणानन्तर मूर्छावस्था
दूर होते ही पूर्व कृत्य और जन्म का स्मरन करने
पर जाती-स्मरण ज्ञान की प्राप्ति हुई। जिससे अपने
पूर्वभव कृत कृत्य राज कुमार ने स्वयं ही जान
लिये। तब राजकुमार ने मुनि श्री से प्रश्न किया कि
कृपा सिन्धो! मेरी यह व्याधि किस भांति दूर हो
सकती है, और मूर्खत्व से मेरा छुटकारा किस
प्रकार हो सकता है! तब मुनि श्री ने फरमाया,
कि देवानु प्रिय! शुद्ध भावना युक्त प्रत्येक महिने
की शुक्ल पञ्चमी के दिन उपवास तथा प्रायश्चित्त
तप आदि पूर्वोक्त जपादि क्रिया करने से
[illegible] और [illegible]

होती है। इस प्रकार गुरु वाक्य सुनकर राज कुमार बोला कि हे प्रभो! जीवन पर्यन्त प्रत्येक मास की शुक्ला पञ्चमी करने में तो मैं असमर्थ हूं, किन्तु सरलता पुर्वक हो सके ऐसा कोई तप हो तो कृपया बतलाइये। मुनि श्री ने फरमाया कि कुमार! यदि इतना करने की शक्ति न हो तो वर्ष २ प्रति एक शुक्ला पञ्चमी, अर्थात प्रत्येक वर्ष में एक कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का उपवास कर पौषध, प्रतिक्रमण, जप, आदि सब क्रिया उपरोक्त विधि पूर्वक करें। इस प्रकार ज्ञान की आराधना करने से समस्त सुख सम्पति और पूर्ण स्वस्थता प्राप्त होती है। तथा स्वल्प काल ही में आत्मा सतत सुखों का अवलम्बन कर लेती है। इस प्रकार गुरु वाक्य श्रवण कर 'वरदत्त' नामक राज कुमार ने प्रत्येक वर्ष की कार्तिक शुक्ला पञ्चमी का तप आजन्म आराधन करने का नियम गुरु मुख से धारण किया। राज कुमार ने गुरु श्री के सन्मुख प्रतिज्ञा की कि गुरुदेव! आज मैंने श्री मुख से जो व्रत धारण किया है, उसको आपके कथनानुसार आजीवन यथाशक्ति पालन करूंगा। इसी प्रकार राजा, रानी आदि समस्त अन्तः पुरवासियों ने भी ज्ञान पञ्चमी का तप धारण किया, और सहस्त्रों

नागरिक भी इसी व्रत पालन की प्रतिज्ञा कर अपने २ कर घर गये। अस्तु।

उक्त तप के प्रभाव से राजकुमार 'वरदत्त' की समस्त व्याधियाँ नष्ट हो गई। शरीर पहले की अपेक्षा विशेष हृष्ट पुष्ट और सुन्दर बन गया। तब नृपति अजीतसेन ने राजकुमारके साथ अत्यन्त लावण्यवती और रूपवती एक सहस्र कन्याओं का पाणि ग्रहण कर दिया। और अपने नेत्रों के तारे प्राण प्यारे पुत्र को इस प्रकार सुखी देख कर परम हर्षित होते हुए धर्म ध्यानादि नित्य कृत्यों में प्रवृत्त हुए।

कुछ ही काल के पश्चात् 'विजय सेनाचार्य' अपने अनेक शिष्योंके परिवार सहित पर्यटन करते हुए 'पद्मपुर नगर के बाहर पुष्प वाटिका में पधारे। उनके समीप उपस्थित हो, उपदेश श्रवण कर राजा को वैराग्य उत्पन्न हुआ। राजा महलों में आकर राजकुमार वरदत्त को राज मुकुट पहना कर राजा ने सहर्ष दीक्षा ग्रहण की, और आत्म कल्याण के मार्ग में प्रवृत्त हुए।

वरदत्त नृपति ने भी कतिपय वर्षों तक अपने राज्यान्तर्गत मनुष्यों पशुओं और पक्षियों का नीति पूर्वक पालन किया। पश्चात् अपने पुत्र को

राज सिंहासन देकर स्वयं दीक्षा धारण की और गुर्वाज्ञानुसार जिनाज्ञा के आराधन मार्ग में उतर पड़े।

इधर सिंहदास सेठ की पुत्री "गुण मन्जरी" के भी 'ज्ञान-पञ्चमी' के तप के प्रभाव के कारण संपूर्ण रोग दूर हो गये, और पहले की अपेक्षा रूप सौन्दर्य में अत्याधिक अभिवृद्धि हो गई। तब पिता ने अपनी सुकुमारी लाडिली पुत्री का शुभ पाणि-ग्रहण जैन-धर्म पालक 'जिनचन्द्र' सेठ से कर दिया। उभय दम्पति चिरकाल तक पञ्चेन्द्रिय के सुख भोगते रहे, तथा गुरु मुख से धारण किये हुए पञ्चमी-व्रत तप की पुर्ति की। अंत में गुणमन्जरी ने दीक्षा ग्रहण की और स्व स्वरूपाचरण में निमग्न हुइ।

"वरदत्त" मुनि और "गुणमन्जरी" साध्वी दोनों ने निर अतिचार पूर्वक चारित्र का पालन किया और अन्त में "वैजन्त" विमान में देवत्व को प्राप्त हुए। पश्चात् वहां से देव शरीर परित्याग कर जम्बू द्वीप महाविदेह क्षेत्र की पुष्कलावती विजय और पुण्डरीकणी नगरी में अमरसेन राजा और "गुणवती" राणी की कुक्षि में वरदत्त का जीव आकर अवतारित हुआ। माता पिता ने अपने प्राण

प्रिय पुत्र का "सुरसेन" नाम संस्करण किया। जब सुरसेन आठ वर्ष की अवस्था का होगया तो पिता ने विद्याध्ययन के लिए कलाचार्य के सुपुर्द किया। राजकुमार अल्प काल ही में बहत्तर कला निधान होगये। यौवनावस्था का पदार्पण हो चुका था, अतःराजा अमरसेन ने सो राज कन्याओं के साथ राज कुमार का पाणि ग्रहण कर दिया। कुछ ही काल के पश्चात् राजगद्दी राजकुमार सुरसेन को देकर धर्मानुष्ठान वि क्रियाओं का साधन कर राजा परलोकवासी हुआ।

थोडे समयके पश्चात् उपरोक्त नगरीमें श्रीसीम धरस्वामीजी महाराज पधारे। तीर्थंकर भगवान का आगम सुन कर राजा, उसके अन्तः पुर वाली और सम्पूर्ण नागरिक भगवानकी वंदना और पर्युपासना के लिए गये। तप श्रवणार्थ आई हुई जनता व भूपति को श्री सीमधर स्वामी ने धर्मोपदेश दिया, जिसमें "ज्ञान पञ्चमी" के महात्म्य का दिग्दर्शन कराया। उस में उदाहरण देकर आप ने फरमाया कि जिस प्रकार 'वरदत्त' राज कुमार ने उक्त तप की आराधना की उसी प्रकार आराधना कर अमाम अपूर्व ज्ञान के आराधक बनो। जिससे तुम्हें भी [illegible] प्राप्ति होगी। इस प्रकार

श्री प्रभु के वचनामृत श्रवण कर सुरसेन राजा बोला कि हे प्रभो ! यह वरदत्त कौन और कहां का निवासी था ? तब श्री सीमंधर स्वामी ने उक्त राज कुमार की पूर्व भव सम्बधी संपूर्ण जीवनी आदि से अन्त तक कह सुनाई । जिसके प्रभाव से सहस्त्रोंभवपीडित आत्माओं ने उक्त तप को धारण किया राजा को प्रति बोध हुआ और वैराग्योत्पन्न होगया । राजा गुरु वन्दन कर महलों में आया और स्वपुत्र को राज तिलक करके अन्तःपुर की सो सुंदरियों का तथा सम्पूर्ण रिद्धि का परित्याग कर उक्त श्री प्रभु के कर-कमल से दिक्षा- ग्रहण कर आत्मोन्नति के शुभ मार्ग में प्रवृत्त हुआ । दश हजार वर्ष राज ऋद्धि भोगी और एक हजार वर्ष शुद्ध चारित्र पालन किया । इस प्रकार ग्यारह हजार वर्ष की आयु भोगकर केवल-ज्ञान, केवल दर्शन प्राप्त कर सतत शिव-सुख को प्राप्त हुए ।

"गुण मञ्जरी" का जीव भी वैजयन्त विमान से चवकर इसी जम्बू द्वीप के महा विदेह क्षेत्र और रमणिय विजय में महाशुभा नाम की नगरी में अमर सिंह राजा और अमरवती रानी की कुक्षि से पुत्र रुप में अवतरित हुआ । सुग्रीव उसका नाम संस्करण किया गया । क्रमशः राज

कुमार युवावस्था को प्राप्त हो गया। तब राजा ने पुत्र को राज तिलक देकर स्वयम् दीक्षा ग्रहण की। राज तिलक के पश्चात् राजा सुग्रीव ने सहस्त्रों राज कन्याओं के साथ विवाह कर खूब आनंद भोगा पुर्व पुण्योदय से राजा का सद् गुरु समागम हुआ। और उपदेश श्रवण कर वैराग्य उत्पन्न होगया। ससार को असार समझ कर जेष्ठ पुत्र को राज तिलक देकर स्वय दीक्षा ग्रहण की। तप सयम की आराधना कर चार घन घातिक कर्मों का नाश कर केवल ज्ञान और केवल दर्शन की प्राप्ति की। और केवल ज्ञान सहित एक लाख वर्ष तक पुर्ण चारित्र का पालन कर मोक्ष पधारे।

उप संहार-इसी प्रकार अन्य जो कोई भी भव भीरु आत्मा पुर्वोक्त तप अङ्गीकार कर विधि पुर्वक उसका पालन करेंगे। वह इस लोक व परलोक में सकल सुख सम्पत्ति तथा सौभाग्य प्राप्त करेंगे और अन्त में केवल ज्ञान, केवल दर्शन की प्राप्ति कर मोक्ष को प्राप्त होंगे। अतएव ज्ञान पञ्चमी का सतत आराधना करें!

ॐ सिद्धि सिद्धि मम दिसतु ।।

प्रसिद्ध कर्ता-सुज्ञ श्राविकाओंके नाम.

५ शिवलालजी श्रीश्रीमालकी धर्मपत्नी सौ. जडावबाई.

५ रतनलालजी रुणवालकी मातेश्वरी फूलीबाई.

५ लालचंदजी साढकी मातेश्वरी सोनीबाई.

५ लखीचंदजी कोटेचाकी भग्नि जडावबाई,

४ नथमलजी बोराकी मातेश्वरी सोनीबाई.

४ जसराजजी चतुरमूथाकी धर्मपत्नी सौ. जडावबाई.

२ हीरालालजी नायटाकी भग्नि-वधु, चंपाबाई.

२ भेरूलालजी मेदोकी मातेश्री फूलीबाई.

२ भँवराजजी बोराकी सुपुत्री हर्षाबाई

२ किसनलालजी कुचेरियाकी मातेश्वरी, गुलाबबाई.

२ गुलाबचंदजी चोपडाकी धर्मपत्नी तुलसाबाई

२ व्यंकटलालजी बोराकी धर्मपत्नी सौ. गबदीबाई

१ फूलचंदजी लूणवालकी धर्मपत्नी हरीबाई.

१ चुनिलालजी सिसोदियाकी धर्मपत्नी गोपीबाई

१ घेवरचंदजी दफतरीकी धर्मपत्नी गोटीबाई

१ दीपचंदजी लोढाकी धर्मपत्नी छोटीबाई.

१ माणकचंदजी कोचेटाकी धर्मपत्नी चंन्द्रीबाई.

संतोष मुनि ग्रन्थमाला का १२ वाँ पुष्प

—वंदे वीरम्— 1476

पूज्यपाद श्री रघुनाथजित्सूरीश्वरेभ्यो नमः

सती रत्नावती चरित्र

रचयिता

शान्तमूर्ति-मनोहर व्याख्यानी कविवर्य
मुनिमहाराज श्री १०८ श्री
मोतीलालजी महाराज।

प्रकाशक—

श्री जैन श्वे० स्था० जैनमुनि संतोष भंडार,
मु० सादड़ी (मारवाड़).

वीर सं० २४६१	प्रथमावृत्ति	विक्रम सं०
रघुनाथ सं.१४७	१०००	१९९१

भूतेश्वर प्रिंटिंग प्रेस, कटला बाजार जोधपुर।

भुजंग ने महाराज श्री के पैरको डस लिया । सर्प के डसने से मुनि श्री के शरीर में अत्यन्त वेदना उत्पन्न हुई मुंहसे फैन गिरने लगा पाव में सोजन आगई अगुलीत पडीमीत से रुधिर बहने लगा ऐसी स्थिति में जब सूर्योदय हुआ तब श्रावक श्राविकायें महाराज श्री के दर्शनार्थ आये और इस अघटित घटना को देख अत्यन्त विनती करके पीछे नगर में लेआये और अविलंब डाक्टर महोदय श्री चौधरी-लालजी को बुलाया । डाक्टर महोदय श्री ने आतेही पैर में चीरा लगाकर दवाई भर दी किन्तु शरीर में विषका वेग अधिक होनेसे सहसा शान्ति नहीं मिलती, शनैः शनैः उपचार करने से ११ दिन के पश्चात् कुछ कुछ आरोग्यता हुई-श्रीमान् डाक्टर महोदयने अत्यन्त निपुणता से धीरे धीरे मुनि श्री के शरीर की वेदना का अच्छा उपचार किया जिसके लिये आहोर श्रीसंघ आपका आभारी है । डाक्टर महोदय के उपचार से महाराज श्री का शरीर आरोग्य होनेपर यह तपप्रधान सती रत्नावती का चरित्र मुनि श्री ने लिखा । जिस को देख हमने सोचा कि यदि यह चरित्र प्रेसांकित होजायेतो इससे अनेकों नर नारी आत्मिक लाभो पार्जन करसकते हैं बस इसी शुभ भावना को लेकर हमने इसे प्रेसांकित करवा आप श्री के कर कमलों में समर्पण किया है एतदर्थ आशा ही नहीं दृढ विश्वास है कि आत्मो न्नति के इच्छुक स्वधर्मी बन्धु इस छोटीसी पुस्तक को पढ अपनी शक्त्यनुसार तदनुरूप आचरण करेंगे किम्बहुना

भवदीय—

श्री० जै० श्वे० स्था० जैनमुनि सन्तोष ज्ञान भंडार

अ० स्यापडी (मारवाड़)

॥ श्री गौतमाय नम ॥

अथ रत्नावती सती व्याख्यान लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

श्री वीर प्रभु शासन पति केरी, सेव करे मघवान ।
चरन कमल प्रणमुं सदा में, दीजो शिवपुर स्थान ॥ १ ॥
साचा सतगुरु सेवीयेरे, चाले खांड़ा धार ।
ममता मोह निवार के मुनि, करता पर उपकार ॥ २ ॥
प्रणमुं शारद मातकोरे, वचन सुदारस देह ।
गौतम गुण धारक नमुंरे, लब्दी पात्र सस नेंह ॥ ३ ॥
दीप मालिका की कथारे, सुनिये चित्त लगाय ।
आलस निन्द्रा टार श्रवण कर, पातिक दूर पुलाय ॥ ४ ॥
तप कर जीव उज्वल बनेरे, पोहछे मोक्ष मजार ।
रत्ना वती सती धर्म प्रभावे, सफल किया अवतार ॥ ५ ॥

ॐ

भूमिका

प्रिय पाठकवृन्द !

इस बातको विचारशील पुरुष भलीप्रकार जानतेही हैं कि मानव जीवन को सार्थक बनाने में तपके सदृश और कोई दूसरा साधन नहीं है, इस तप के प्रभावसे ही अष्ट कर्मों का नाश होता है, जीव निकलंक होकर मोक्षपद प्राप्त करसकता है । तप से अन धन रूपयश–महिमा बल आदि सभी श्रेष्ठ पदार्थ मिलते हैं । अल्प समयमें ही सती शिरो-मेणि श्री रतनावती ने तप के प्रभाव से जो आनंद अनुभव किया था उसका सुचारु वर्णन इस पुस्तक में अंकित है । मन शास्त्रों के धुरंधर विद्वान् बाल ब्रह्मचारी शांतमूर्ति तपोधनी स्वर्गीय स्वामीजी महाराज श्री श्री श्री १००८ श्री श्री संतोषचन्द्रजी महाराज के सुयोग्य शिष्य शान्तमूर्ति प्रवर्तक मुनि महाराज श्री श्री १०८ श्री धैर्यमलजी महाराज कविवर्य मनोहर व्याख्यानी मुनि महाराज श्री १०५ श्री मोतीलालजी महाराज विद्याप्रेमी मुनि श्री पुकराजजी महा-राज स्थाणे ३ से भव्यजीवों को सदुपदेश देते हुये सादड़ी मारवाड़ से विचरते, विचरते जालोर पधारे । आप श्री का चातुर्मास इस वर्ष भीनमाल के निकट ग्राम दासफा में श्रीसंघ के अति आग्रह से निश्चित होचुका था, अत: आप जालोर अधिक नहीं विराजसके + सिर्फ ४ दिन ही विराज कर आषाढ वदि ११ के दिन ५ बजे विहार करके नगर के बाहर जा ठहरे । आषाढ वदी द्वादशी के प्रात कालको अनुमान के ५ बजे मुनि महाराज श्री १०५ श्री मोतीलाल जी महाराज लघुनीत परठने को जाते थे कि अकस्मात् कृश्न

भुजंग ने महाराज श्री के पैरको डस लिया । सर्प के डसने से मुनि श्री के शरीर में अत्यन्त वेदना उत्पन्न हुई मुंहसे फैन गिरने लगा पाव में सोजन आगई अधुलीत बहीमीत से रुधिर बहने लगा ऐसी स्थिति में जब सूर्योदय हुआ तब श्रावक श्राविकायें महाराज श्री के दर्शनार्थ आये और इस अघटित घटना को देख अत्यन्त चिन्ता करके पीछे नगर में लेआये और अविलंब डक्टर महोदय श्री जौहरी लालजी को बुलाया । डाक्टर महोदय श्री ने आतेही पैर में चीरा लगाकर दवाई भर दी किन्तु शरीर में विषका वेग अधिक होनेसे सहसा शान्ति नहीं मिलती शनैः शनैः उपचार करने से ११ दिन के पश्चात् कुछ कुछ आरोग्यता हुई-श्रीमान् डाक्टर महोदयने अत्यन्त निपुणता से धीरे धीरे मुनि श्री के शरीर की वेदना का अच्छा उपचार किया जिसके लिये साधोर श्रीसंघ आपका आभारी है । डाक्टर महोदय के उपचार से महाराज श्री का शरीर आरोग्य होनेपर यह तपप्रधान रत्नी रत्नावती का चरित्र मुनि श्री ने लिखा । जिस को देख हमने सोचा कि यदि यह चरित्र मेर्पाकित होजायेतो इससे अनेकों नर भारी आत्मिक लाभो पार्जन करसकते हैं बस इसी शुभ भावना को लेकर हमने इसे मेर्पाकित करवा आप श्री के कर कमलों में समर्पण किया है एतदर्थ आशा ही नहीं वरु विश्वास है कि आत्मो न्नति के इच्छुक स्वधर्मी बन्धु इस छोटीसी पुस्तक को पढ अपनी शक्त्यनुसार तदनुकूल आचरण करेंगे किम्बहुना ।

भवदीय—
श्री० से० म० स्था० जैनमुनि सतोष ज्ञान भंडार
मु० सादड़ी (मारवाड़)

॥ श्री गौतमाय नम ॥

अथ रत्नावती सती व्याख्यान लिख्यते ।

॥ दोहा ॥

श्री वीर प्रभु शासन पति केरी, सेव करे मधवान ।
चरन कमल प्रणमुं सदा में, दीजो शिवपुर स्थान ॥ १ ॥
साचा सतगुरु सेवीयेरे, चाले खांड़ा धार ।
ममता मोह निवार के मुनि, करता पर उपकार ॥ २ ॥
प्रणमुं शारद मातकोरे, वचन सुदारस देह ।
गौतम गुण धारक नमुंरे, लब्दी पात्र सस नेंह ॥ ३ ॥
दीप मालिका की कथारे, सुनिये चित्त लगाय ।
आलस निन्द्रा टार श्रवण कर, पातिक दूर पुलाय ॥ ४ ॥
तप कर जीव उज्वल बनेरे, पोहछे मोक्ष मजार ।
रत्ना वती सती धर्म प्रभावे, सफल किया अवतार ॥ ५ ॥

॥ ढाल १ ली ॥

प्यार पोदरको दिन हुयरे लाल ॥ ए देशी ॥

जबु दीपना भरतमेंरे लाल, भारत देश मझार, सुखकारी र । मनोहर पुर रलियामणोरे लाल, चौरासी बाजार सु० ज० ॥ १ ॥ जितशत्रु नृप सोभतोरे लाल, दच दयालु गुनखान, सु० कमल प्रभा भारी कामनीरे लाल, पति भक्ता मृदु मान, सु० ज० ॥ २ ॥ विप्रद्विज पुर मांहि वसेर लाल, सेठ सुदत्त धनवान सु० सुमित्रा नामे भार्यारे लाल प्रीत परस्पर मान, सु० ज० ॥ ३ ॥ धर्म ध्यान करतां थकोरे लाल, काल व्यतीतज थाय, सु० सुख मेंज्या रहतां सयोरे लाल, चन्द्र सुपन सुख दाय, सुं० जं० ॥ ४ ॥ सुमित्रा उदरे बसेरे लाल, पुन्य पत जीव उदार, सु० माता मन हर्षित थयरे लाल, सुन्दा मुनि कहिदार सु० ज० ॥ ५ ॥ गर्भो स्थित पूरन थयारे, शुभवार सुरत अनोपम सोभतीरे, जनमें देव कुमार ॥ ६ ॥ हर्षित हो पितु मातबीरे । और सकल परिवार । याचक जनको दान दीये, फिर गावे मंगला चार ॥ ७ ॥

॥ ढाल २ जी ॥

॥ राग माड में छे ॥

महोत्सव कर पितु मातबीरे, अमर सेनदीये नाम ।

पच धाय पालि जतोरे, विलसे सुख अभिरामजी ॥ १ ॥ भवि भाग्य प्रमाणे मोजां मांणे, जांणे सकल जहान ॥ ए टेर ॥ पंडित पामे कला अभ्यासे, विनयोद्यम धर प्यार । थोड़े समयमें वहोत्र कलाको, जानपनो लहे सारजी भवि ॥ २ ॥ पंडितजी ले कुँवर साथमें, आवे सेठ सदन्न । अमरसेन करजोड़ी पिताको, प्रणमें हरष वदन्नजी । भ० ॥ ३ ॥ देख कोमलता कुंवर तणीरे । पितुमन आनन्द थाय, योवन वय थई जान कुंवर की । व्याव करण चित चायजी । भ० ४ । तिणहिज मनोहर पुर वसेरे । सेठ पुरंदर सार । तस घर रमणी है गज गमनी । प्रीतवती गुन धारजी । भ० ॥ ५ ॥ एकदिन प्रमदा सुख भर सूती । देखे सुपन रसाल । पुष्प सुगंधित पंच वरन की, माला दोय उदारजी । भ० ॥ ६ ॥ जागृतही पदमन प्रीतमको । विन वे शीस नमाय । द्वितिया ढाले मुनि मोतीलाल सुन । सेठजी हरष भरायजी । भ० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

सेठ पुरंदर कहे प्रिये, तुज कुक्षी अवतार ।
पुन्यवंती इक बालिका, थास्ये अधिक उदार ॥ १ ॥
प्रमदा सुन हर्षित भई, जपे प्रमष्ठी जाप ।
गरभ दोष टारत कर, दान पुन्य दिल साफ ॥ २ ॥

॥ ढाल ३ जी ॥

॥ थोरो लालचियां ए देशी ॥

गमा स्थित पूरन थयारि । शुभ मुहुरत शुभ वार । मणिपथ सुनलीजो । कांई अनमी मासा रसाल म० ॥ १ ॥ ए टेर ॥ विविध प्रकार महोत्सव कर के । रत्नावती दीयो नाम म० ॥ २ ॥ महिलाकला चोसट ग्रही । और नव तत्वादिक सार । म० ॥ ३ ॥ सामायिक प्रति क्रमण करे । कांई चवदा नियम चितार । म० ॥ ४ ॥ शील दया धरम धरी । और रात्री भोजन टार । म० ॥ ५ ॥ पंच तिथी चावीहार करे । कांई लीलोती परिहार । म० ॥ ६ ॥ विविध कार्य करे धर्मतना । कांई रटे सदा नवकार म० ॥ ७ ॥ इस्त वदन मृग नयनी चाला । चाले चाल मराल म० ॥ ८ ॥ मीष्ट वचन कोकिल सम जानो । उपवे दसत चार म० ॥ ६ ॥ अर्ध चन्द्रवत भाल विराजे । योवन वय हुंसियार । म० ॥ १० ॥ मोतीलाल मुनि इनपर गावे । तृतिया ढाल मझार । म० ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

एक दिवस रतनावतीरे, आती गुरुणी पास ।
अमरसेन देखी सा सुदरी, वस गई हिरदे खास ॥ १ ॥

मित्र भनी सव बात सुनादी, कही सेठको जाय।
सगपन करवा गये पुरंदर, सेठ सदन हरषाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ४ थी ॥

॥ आवो जमाई पावणा जय वन्ताजी ए देशी ॥

आवो पधारो सेठजी । गुनवन्ताजी, मुजलायक कोई काम । वहो पुन्यवन्ताजी ॥ ए टेर ॥ सुद्धदत्त कहे सुणो सठजी । गु० पुरंदर धरप्यार । अहो गु० ॥ १ ॥ तुज तनया मुज पूत्रको, गु० दीजे प्रेम अपार । अ० ॥ २ ॥ जोडी सरिसी जान के गु० भरलीनो हुँकार । अ० ॥ ३ ॥ आरन कारन साचवी । गु० व्याव कियो सुविचार अ० ॥ ४ ॥ आनंद रंग वधामणा, गु० मगल गावे नार अ० ॥ ५ ॥ परन आई बाई सासेर गु० प्रणमे सासु चरणार । अ० ॥ ६ ॥ चाले कुल मर्यादमें । गु० मुक्ता मुनि कही ढार अ० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

धर्मध्यान करतां थकांरे, स्वल्प दिनों के मांय ।
अशुभ कर्म परतापथीरे, लक्ष्मी घसे जाय ॥ १ ॥
लक्ष्मी राखी नां रहैरे, पापोदय जब आय ।
पुन्य छतां पुन्य कीजियेरे, सुख संपती प्रगटाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ५ मी ॥

॥ देशी क्याली ॥

नातकी नारी स्थिर नही लक्ष्मी घर २ फिरती रहे ॥ ए टेर ॥ एक ठिकाने रहे न हर गम । नहिं एक धनीकी नारी । ऊंच नीच घर फिरे भटकती । सारी बात पुंनारीकी । ना० ॥ १ ॥ जिस्के है पुन्य वानी पोत । बोनर मोत्यां मांयो । मिल पुन्यसे खीरनें खाखा । रानादिक सयमानेंकी । ना० ॥ २ ॥ सेठ तणी पुन्यवानी इसकी । माया धन सब आवे । सनैःसने सब माल खजाना । गयां सठ पचतावेकी । ना० ॥ ३ ॥ दासी दास लग सब रस्ते । गई दुकानां उठ । सजन सनेहि नहिं बतलावे । जावें सबही रूठकी । ना० ॥ ४ ॥ है मतलबकी यारी सारी । परतष बातने जानी । देखे तो पाछो हट जाव । नहिं पावे कोइ पानीकी । ना० ॥ ५ ॥ ऐसी हकीकत बनी सेठकी पुत्र पिता घबरावे । तिन तिरियां हुवा बघु धीरपे । दोन पदारथ चावेकी । ना० ॥ ६ ॥ विपत पड्यां से धर्म ध्यानकी । रखो आसता भारी । मोतीलाल मुनि धर्म प्रभावें । टेर आपदा सारीकी । ना० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

लोक बोरू करता फिरे, सेठ सुदत्तकी बात ।
पुत्र वधु मिली करकसार, रस्ते लागी आथ ॥ १ ॥
पुन्य हीण आवे जब घरमें, संपति नास कराय ।
देखो परतक्ष अमर सेनकी, वधु आयां धनजाय ॥ २ ॥
सब जन कहे धिग २ यह नारी, जैनधर्म परसंग ।
दरीद्र पणो इन घरमें घाल्यो, बिगड़ गयो सबढंग ॥ ३ ॥

॥ ढाल ६ ठी ॥

॥ मे[illegible]लामे बेठी हो राणी कमला वती ए देशी ॥

बाई रतनावती सुण चित चिन्तवे । कीधा पूरब भव पाप अघोर । अल्प समयमें धन जातो रयो, कर्म जोरावर दे जकजोर ॥ १ ॥ सांभलहो श्रोता सुख दुःख कीधोड़ा भुगते प्राणीया ॥ ए टेर ॥ म्हारी निन्दाको मुजको डर नही । धर्मनिन्दाको दुःख घटमांय । धर्मकरतां दुःख कोइ नविलहै । पूरब भव करनी कीधी लहाय । सांभलहो ॥ २ ॥ तिणहिज अवसर तिहां ज्ञानी गुर भला । बिचरत पउधारे बाग मजार । आप तीरे पर तारक मुनिवरू, परउपकारी करे धर्म प्रचार । सां० ॥ ३ ॥ हय गय सेना लइ नरवर सज थई । जावे मुनि दर्शन करवा काज, श्रावक

भाविका आता दसनें, पूछ रतना सखी दइ अवाज । सां० ॥ ४ ॥ बोले भावक बाइ आवो बागमें । जैन मुनिजी गुन भंडार । सुनकर रतना वखी चाली सायमें । वन्दे विधि पूर्वक मुनिवरधार । सां० ॥ ५ ॥ धर्म सुनावे मुनि मधुरी ध्वनी, शिवरे निर्मल चित्त श्री नवकार । तप जप करनी कर शिवपुर सुख लेइ । जन्म जरा दु:ख टारन हार । सां० ॥ ६ ॥ धर्म प्रभावे काल उत्तर आवे । धारे तप अष्टम आनन्दकार । कर्म निका चित इनसे सब टर गावे मुन्ना मुनिवर कर प्यार । सां० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

अष्टम तप उलोकर, दीप मालिका दिन ।
मौनकरी इक आसनें, बठे निर्मल मन ॥ १ ॥
देव डिगार्या नां डीगे, तोमन नौंछित थाय ।
भगवित रिधसिध सुखलहे, अस महिमा प्रगटाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ७ मी ॥

॥ वैरी घुंमर की छे ॥

सखी रतनावती धर्मवाबाई । बोले शीश नमाई हेलो ॥ ए टेर ॥ सुगुरु कृपालु हो उपकारी । तुम चरननकी

बलिहारी हेलो । आशा पूरन चिन्ता चूरन । आपद दूर निवारी हेलो । स० ॥ १ ॥ मुनिगुण गाई निजघर आई। सासु सुसर पाय लागी हेलो । मुनि दर्शन कर आनन्द ऊपनो । धर्म करन मती जागी हेलो । स० ॥ २ ॥ इम करतां बहु वासर बीता, धन तेरस दिन आवे हेलो । निजसिर कलंक मिटावन तांई । मतीकहे शुभ भावे हेलो। स० ॥ ३ ॥ अष्टम तप अब करणो म्हारे । अनुमती दो फुरमाई हेलो । सासु कहे वधु लघु वय थांरी । कोमल वय सुख दाई हेलो । स० ॥ ४ ॥ आप कृपासे आनन्द थासी । आपद दूर पुलासी हेलो । आग्या दीजे ढील न कीजे । सुखसे वासर जाती हेलो । स० ॥ ५ ॥ सासु आग्याले धन तेरस दिन । मुख वस्त्रीका मुख धारी हेलो। यतना पूर्वक पचखे मुनि मुखसे । अष्टम तप चोवी हारी हेलो । स० ॥ ६ ॥ निजघर आई बैठी एकाँते । दृढ़ासन सती ठाई हेलो । मन वच काया स्थिर कर शिवरे । नव-पद नवनिध थाई हेलो । स० । ॥ ७ ॥ धन्य बहु मनवस कर लीनो । तप तेलाको कीनो हेलो । बाला वस्था मांहे धारी प्रतिग्या, धर्म करन चित भीनो हेलो । स० ॥ ८ ॥ सासु विचारे अहो पुन्य वन्ती । बहु अरमुझे गुन खानी हेलो । मोतीलाल मुनि सप्तमी ढाले । गावे हरष मन आनी हेलो । स० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

सासु चिन्त धिग २ मुझको, धर्म करयो कछु नांय ।
खाने पीनेमें उमर बितादी, नरभव निकमो जाय ॥ १ ॥
वार अनन्ती भोजन जीम्या, मन तिरपत नहीं थाय ।
तप तेलाको करनो चाखो, कर्मभरी टर जाय ॥ २ ॥

॥ ढाल ८ मी ॥

॥ म्हारे हाथमें नोकर वाकी ॥ ए देशी ॥

सठांणी सेंठी दिल धारी । तप तणो चउवीहारजी । करनो निश्चय एसी भावना । बस रही मनही मझारजी । से० ॥ १ ॥ नम्र भाव कर पूछे पदमन । प्रीतमको घर जावजी । पुत्र वधु अष्टम तप कीनों, से तप करनका भावजी । से० ॥ २ ॥ सेठ कहे तप दुष्कर करनो, सूर वीरका कामजी । धन्य वहु बालापन मांही । जपे जिनेश्वर नामजी । से० ॥ ३ ॥ वृद्ध अवस्था है अब थांरी । तपस्यावणा किम थायजी । शक्ती होवेतो मना नहीं म्हारी । धर्मकरन के मांयजी । से० ॥ ४ ॥ आग्याले प्रीतमकी पदमन । पौदधी शाला मझारजी । पनखाकर तप तणो पपजी । भाई निज घर द्वारजी । से० ॥ ५ ॥ सुण

वस्त्रीका मुख पर बांधी । आसन दीयो बिछायजी । पदमासन धारन कर बैठी । निश्चल ध्यान लगायजी । से० ॥ ६ ॥ वहु अर ध्यान है जब तक म्हारे । ऊठणको है नेंमजी । मोतीलाल कहे अष्टमी ढाले । धर्मसे पूरन प्रेमजी । से० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

वहुअर पासे मासु शुभचित, जपे जाप नमुकार ।
सेठ विचारे धन्य २ यह, बेठी समता धार ॥ १ ॥
मुजको भी श्रेयकार तपस्या, करनी आछी बात ।
तीन दिवस में स्युं मरजावे, बाजी रखे जगतात ॥ २ ॥

॥ ढाल ९ मी ॥

॥ आनन्दका डंका भारतमें ॥ ए देशी ॥

जो धर्म करे निश्चल भावे, जिनका सब कारज सिध थावे, जिनका० दिन २ सुख संपति वढ़जावे ए टेर ॥ निजपुत्र भनी कहे तात जात । मुज दिलकी भावना सुनलीजे, तुज मात बहु तप धारन कर । बेठी समता रस सुख पावे । जो० ॥ १ ॥ मुजदिल तप तेला करनेका, फिर डरनहीं मुझको मरनेका । संग लेसुं खजाना सुकरत

का, पर काम तुझे सब समझावे । जो० ॥ २ ॥ कहे पुत्र पितासे करजोरी । पितु वृद्ध अवस्था है तोरी । तप वेला का यह काम कठिन । सुनतेही दिल मुझ घबरावे । जो० ॥ ३ ॥ कहे पिता पुत्र मत घबरावो । प्रभु शिवरनसें आनन्द पावो । इतनी कहकर गुरु पास गये, विधि पूर्वक अष्टम तप ठावे । जो० ॥ ४ ॥ निज सदन बीच आकर बैठे । एकाँत स्थान यतना करके । नव पदका ध्यान घर हरके । निश्चल चित्तसे प्रभु गुन गावे । जो० ॥ ५ ॥ या अमरसेन देखी रचना । धन्य मात तात शुभ काम कर । यतनी मुझे परमख धर्मसीरे । जिनराज काम सब सुधरावे । जो० ॥ ६ ॥ अष्टम तप सुखकोमी करना, दीवाली दिनतक सुखकारी । मुनि मोतीलाल मधसिंधु सिरि । तप करनी दुष्कर करवावे । जो० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

अमरसेन शिघ्रपत्र आयो, ज्यांरहे मुनि विराम ।
हाथ जोड़ वंदन कर बोले, सारो मुझमन काम ॥ १ ॥
तप वेला मुझको पचखादो, उपकारी अनगार ।
रखता देख मुनि पचखावे, तीन दिवस चोवीहार ॥ २ ॥

॥ ढाल १० मी ॥

॥ देशी हिंडाकी छे ॥

अमरसेन आयो घर सीधो । बेठो पिताप जाईरे । पूर्व विधि मन दृढकर नवपद ध्यान लगाईरे ॥ १ ॥ तप परभावेरे २ मनुप देव हाजिर हो जावेरे । त० ए टेर । निश्चलमन वच काय करी । शुद्ध पंच प्रमेष्टी ध्यावेरे । भावे भावना च्यारु मनमें, जिन गुन गावेरे । तप० ॥ २ ॥ दिन तेरसको बीतो दूजो दिन चवदशको आयोरे । हले चले नहीं स्थिर मन प्रभु से प्रेम लगायोरे । तप० ॥ ३ ॥ कार्तिक वदी अमावस दिवसे । दीप मालिका आईरे । सब नर नारी मंगल गावे । घर२ मांईरे तप० ॥४॥ केइ धोले केई नीपे गुंपे । तसवीरां लटकावेरे । श्वेत नील राता पीला केइ, रंग लगावेरे । तप० ॥५॥ सेठ सदन घर एकही रचना, धवल मंगल कछु नांहीरे । बैठे समताधार वस्यो मन अरिहंत मांहीरे । तप० ॥ ६ ॥ धर्म तना फल मीठा जानो । मोतीलाल मुनि गावेरे । आतमका उद्धार होवे । जगसुयश बढ़ावेरे । तप० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

नागर जन दीपक कीयारे, द्वात कलम धर प्यार ।
पूजी लच्मी देवी, गोरयां गावे मंगलाचार ॥ १ ॥

हेमवत गिरी पर्वत वासी, लषमी देवी नाम।
रूप कीयो कन्या तणोरे, आई नगरमें ताम ॥ २ ॥

॥ ढाल ११ मी ॥

॥ घेतो ओढोगी मावाडी पोली फांवरी ॥

थरि आवे वाँव जातर अपाररे घोडोरे धमके गूघरा ए देशी। आतो देवी आई दीवाळीरी रातमें। आतो सजकर सोले सिनगाररे। देवीरे पगतल गूघरा। आतो रतन जडित पग मोजडी। आतो नेंवरीयांको वाजे रणकाररे। देवी० ॥ १ ॥ देवी पेरया माजु वद बोरखा। ओतो कडीयें कणदोरो सोवन साररे। दे० ओतो हार हीयाबीच फाबतो। ओतो रतन चुडीरो रणकाररे। दे० ॥ २ ॥ ओतो कानां झुटल झिग मिग करे। नकवेसर नाक मझाररे। दे० ओतो सीस फूल रवी तेजसो। सोमें अर्धचन्द्र वत भालरे। दे० ॥ ३ ॥ आतो रखडी है रतन जडावरी। आतो सीस बींधी अहीकाररे। दे० ओतो नील वरण पेरयो कांचूवो। ओतो जडीया हीरा मोती लालरे। दे० ॥ ४ ॥ आतो ओढ्या सिरपर चुंदडी। दीसे सूरज सो भलकाररे। देवीरी चमके चुंदडी। देवी विविध प्रकारे वस्त्राभूषणे सोमे पंच वरण फूलमालरे।

दे० ॥ ५ ॥ महा लक्ष्मी मनोहर पुरमांही । आतो फिर रही घर २ द्वाररे । दे० देवी आई देव्यांरा परी वारसुं । बाजा वाज रया झणकाररे । देवी० ॥ ६ ॥ ओतो पूरब पुन्य पूरन कीया । आतो जिन घर देवी जासी दोररे । देवी० कहे मोतीलाल मुनि इनपरे । गावे जोड़ी गढ़ जालोररे । देवीरी चमके चूंदड़ी ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

लक्ष्मी देवी फिरे घरोघर, वास गली बाजार ।
दीपग जिगमिग करता दीठा, नृत्यगीत अनपार ॥ १ ॥
दीपक उघाड़ा जलेरे, जीव पड़े केइ आय ।
विन उपियोगे बरततारे, जीवकी यतना न्हांय ॥ २ ॥

॥ ढाल १२ मी ॥

॥ सीवपुर नगर सुहामणो ॥ ए देशी ॥

देवीरे फिर २ जोरही, जीवहिंसाको दोष । सुग्यानी देवीरे घट करुंणा वसी, समदृष्टी गुण पोष । सु० दे० ॥ १ ॥ एसोरे कोइ देख्यो नहीं, जीवदया प्रतिपाल । सु० सेठ सुदत्त घर देखने । देवी थई खुसियाल । सु०

दे० ॥ २ ॥ इण पर दीपक किमनही, दखी ज्ञान लगाय। सु० यह ध्याउ पुन्यवंत जीवहै । धर्म ध्यान शुध ध्याय। सु० दे० ॥ ३ ॥ द्वार उघाड देवी आइ । सठ सदनमें चाल । सु० हरखाई देखन सेठकी । देवी कइ उजमाल । सु० दे० ॥ ४ ॥ ध्यान धरयो किन कारणे स्यु धरि मनमांय । सु० भूख प्यास दुःख किम सहो । कारन हो बतलाय सु० दे० ॥ ५ ॥ महा लखमी पुत्र नाम छे । वांछित पूरन हार । सु० जोमन चावेसो मांगलो । संका दूर निवार सु० दे० ॥ ६ ॥ देवी वचन सुण सेठजी, हरखाइ दिल धार । सु० पुत्र बघु बोल नहीं । अबलग मौन विचार । सु० ॥ ७ ॥ काम पडयां कायम रहे जिश धर मगल माल । सु० ॥८॥ मोतीलाल मुनि इमकहै, ए थई बारमी ढाल । सु० दे० ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

रत्नावती करे कल्पनार, रखे सुसर दिगजाय ।
सासन रक्षक देव मुझे अब, करजो धर्म सहाय ॥ १ ॥
हरखाई मुख दखकीरे, देखी देवी ओर ।
मन्य २ कहती वा आई, अमरसेनकी ओर ॥ २ ॥

॥ ढाल १३ मी ॥

॥ ईडर आंबा आंबलीरे ॥ ए देशी ॥

कंवर भणी देवी कहेरे । क्याइन धर्म मजार । क्यों विरथा भूखे मरेरे । बोल २ इणवार ॥ १ ॥ सुगणनर जैन धर्म जगसार ॥ ए टेर ॥ पिता साहब बोले नहीरे । जबलग मुजको नेंम । मौन धरी मनमें रयोरे, पूरन धर्मसे प्रेम । सु० ॥ २ ॥ देवी दिल हरषित थइरे आवे सेठाणी पास, करी परीक्षा दृढरहीरे । थइ मन देवी हुल्लास । सु० ॥ ३ ॥ रतना वती सतीको कहेरे । पाखंड धर्म निवार । ओर धरम दिल धारलेरे । सफल होबे अवतार । सु० ॥ ४ ॥ मिथ्या हटको छोड़देरे । जो तुज जीवन चाय, बहुत कहा सती दृढरहीरे । देवी परसन थाय । सु० ॥ ५ । अवधी ज्ञानसे देखलीरे । हैंसती निश्चल मन्न । धर्मरुच्यो इणने खरोरे । मात पिता कुल धन्न । सु० ॥ ६ ॥ महालक्ष्मी सती पग पडीरे । रिमझिम करती आय । मोतीलाल मुनिइम कहेरे । धर्मीनर सुख पाय । सु० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

दिव्यरूप धारन करीरे, वस्त्राभर्ण सुहाय ।
सेचन्नण घरमें थयोरे, त्रिदशी वचन सुनाय ॥ १ ॥

धर्म प्रसादे सती सुमोरे, फली मनोरथ माल।
अन धनरिध सुख संपदारे, चिन्ता दो सब टार ॥ २ ॥

॥ ढाल १४ मी ॥

॥ वीरा सुँवां सुँवां होय भाईओ ॥ ए देशी ॥

देखो भाई विगर घुलाई। देखो रतनावली दरशाईजी दे० ए टेर ॥ हुवो रतन उजासो भारी। बिन दीपक भुवन मझारीजी। दे० ॥ १ ॥ केइ श्याम नील कइ राता, पीला अरुश्वेत दिखातामी। दे० ॥ २ ॥ केइ योजन तक वो आब रतनाको प्रकाश दिखावेजी। दे० ॥ ३ ॥ देखो भाग्य दशा अब आयी। त्यारूँ ठैल धर्म अनुरागीजी। दे० ॥ ४ ॥ केइ आता जाता देखे, नरनारी अचिरज पेखेजी। दे० ॥ ५ ॥ देखो इन घर रचना काई। क्या सुपन आवे सुख दाईजी दे० ॥ ६ ॥ नहीं सुपन बात सही साची। प्रत्यक्ष दीखे नहीं काचीजी। दे० ॥७॥ मुनि मोतीलाल इमगावे। श्रोता सुख धर्म बढ़ावेजी। देखो० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

द्वार जड़या किन कारणे, क्याहुत रचना भाय।
देखो अंदर चालके, भ्रांती सब मिट जाय ॥ १ ॥

पाडोसी घरमें गये, सेठ घरां तत्काल ।
द्वार खोल देखे तदा, तेज रवी सम भाल ॥ २ ॥

॥ ढाल १५ मी ॥

॥ देशी वाल गुघर वालेकी ॥

इन घरकी रचना भारीरे । क्या होगई रात मजारी क्या होगइ रात मजारी नहीं देखे उमर धारी । इन ए टेर ॥ च्यारूं मौन व्रत कर वैठे । जिन शिवरनमें रहे सेंठे । क्या लच्मी घरमें पेठेरे । प्रभुताका बेहन पारी । इन० ॥ १ ॥ दीवाल दिखे सोनेंकी, मणी माणिक मोती विशेखी, हिरे पन्ने रत्न अपारारे । निशा चमकत नभ ग्रहचारी इन० ॥ २ ॥ रखे चोरी चोर कर जावे । अपनें सिर कलंकन आवे । चल महिपतको सुनवावेरे । इम मिसलत करत अपारी । इन० ॥ ३ ॥ जा कोटवाल के तांई । दी सारी बात सुनाइ । सुन नगर गुप्त कमधज-कोरे । कहि बात सकल विस्तारी । इन० ॥ ४ ॥ महिलां चढ़ महिपत जोवे । किम बात असंभव होवे । देख्यांसे मनड़ो मोवेरे । नहीं मनुष्यांकी इतवारी, इन० ॥ ५ ॥ मुनि मोतीलाल इम गावे । धरमी नर आनन्द पावे । अन धन लच्मी घर आवेरे, देवे सब आपद टारी । इन० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

नृपती नम्रर पसारकले, देखे रत्न उद्योत ।
रानीसा भायो इव दखो, क्या दीपक की जोत ॥ १ ॥

॥ ढाल १६ मी ॥

॥ श्री महावीर पोहता मिरवाणी ए देशी ॥

भाज दीवाली है उजवाली, क्या रंगत दखो इनवारी। भा० ए टेर ॥ रात भमावस की कारी कारी । पूर्णिमा रात्री सम तुम मारी । वीर प्रभु गया मोक्ष मुजारी । गौतम केवल ज्ञान लयारी भा० ॥ १ ॥ इन कारनसे उत्तम जानो । रात दीवालीको रातनखास्रो । शील पालो मृषा भदत्त टालो । जीवदया रख जीव बचालो ॥ भाज ॥ २ ॥ मनुष्य जनमका सार यही है । काम पड़यांसे कायम रहीय । मदिपत ऐसी भावना भावे । शुभमन पंच प्रमेष्टी ध्यावे । भा० ॥ ३ ॥ इनहिज नगरे धरमी नर कोइ । पूरब पुन्य उवासो होइ । जन्म कृतारथ होसी म्हारो । दर्शन दीठे भानन्द भारो । भा० ॥ ४ ॥ सीख गती भावे हरष विशाल । रतन झिगामिग जोती पेखे । भहो इन परमें लिछमीको पाभ्रो । चमकरे पूरे देवल भासो । भा० ॥ ५ ॥ कहे नृपती सुनो सेठसी तुमघर । हो गया

आनंद रंग हरषधर । मौनज खोलो मुखड़े बोलो। साचो धरम धारयो रतन अमोलो। आ० ॥ ६ ॥ करी प्रतिज्ञा सेठजी भारी। निश्चल जाप जपे जयकारी। मोती-लाल मुनि इन पर गावे। धरमीनर सुख सम्पती पावे। आज० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

देख दृढासन मठको, नृप मन करत विचार।
यह च्यारु बोले नहीं, बैठे व्रत मजार ॥ १ ॥
धनरुख वारन कारणे, पेहरा लगावे भूप।
कोटवाल उमराव महिपत, बात करे धर चूप ॥ २ ॥

॥ ढाल १७ मी ॥

॥ हांरे आवे नगर मजार। ए देशी ॥

हांरे सेठ पुन्य अतिजोर। दोर महिपत आवे। हांरे बैठे ढोल्यो द्वार। प्यार धर बतलावे ॥ १ ॥ हांरे देखो धर्म पसाय। सेठ घर रंग रलियां। हांरे देवी प्रगटी आज। काजसबही फलियां ॥ २ ॥ इम बीती सारी रात। प्रात भय जन आवे। हांरे सुनकर नवली बात। सतीका गुन गावे ॥ ३ ॥ हांरे सेठ बघु पुन्यवान। धर्म

कर हुलसावे। हॅरि अष्टमतप परताप। कलक सती मिट जावे ॥ ४ ॥ सती पारे पोषधवास। सासु दिल हरषावे। हरि प्रगट गुने नमुकार। सतीनें वतलावे ॥ ५ ॥ सती फली मनोरथ मास। थई निरदोष सही। हरि पूर्व कथित विधिसेठ। पुत्रदिल हरष भई ॥ ६ ॥ त्यारे उठे पोषध पार। त्यार सब दिलसावे। मुनि मोतीलाल घर प्यार धर्मकर धन पावे ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

सती रतनावती सनमुख ऊभी, महासपमी कर जोड़।
बोले नहीं कोइ दीसे जगमें, करे गुमारी होड़ ॥ १ ॥
धन्यसती तुजे धेन धर्मको, जीव दया प्रतिपाल।
अष्टम तप परभावथीरे। वरत्या जय २ कार ॥ २ ॥

॥ ढाल १८ मी ॥

॥ माणी थारो भाडको रहाँने सांचोको नहीरे ॥ ए देशी ॥

सेठ सेठानी निश्चय आंणीयोरे। श्रीजिन धर्मतने परतापेरे। सपमी दवी भाई घर आंगयेरे। सपतां सुध पंथ प्रमेटी आपरे ॥ १ ॥ सुनिजो भवी भाव धरी जिन धर्मसेरे। राखोये पूरन दिलमें प्रेमरे। सु० ॥ ए टेर ॥

अथवा मुज पुत्र वधूके पुन्यथीरे । सरुतरु फलिया परतच्छ आयरे । अवतो नहीं कमी रहीं कोइ वातरीरे । सुदत्त हर्षा हिये न समायरे । सु० ॥ २ ॥ विनय करी रतनावती वीनवेरे । जावो सुसराजी नरपत पासरे । सुनकर लेइ अमोलक भेटणोरे । आयो घर वाहिर सेठ हुलासरे । सु० ॥ ३ ॥ मुजरोकर सनमुख मेल्यो भेटणोरे । बोले अहो भाग्य पधारया राजरे । मम मनोरथ पूरन साहिबारे फरमावो किरपाकर कोइ काजरे । सु० ॥ ४ ॥ बोले वसुधा पती सेठजी आपकोरे । अहो २ पुन्य प्रबल दिख लायरे । लच्मी देवी दीवाली रातमेंरे । रिमझिम करती घरमे आयरे । सु० ॥ ५ ॥ सुदत्त सेठ कहे नर राजवीरे । यो तुज पुत्र वधु परतापरे । नृपती सुन रतनावती वुल वायकेरे । चीर ओढायो वेनड स्थापरे । सु० ॥ ६ । हुई परसंसा सारा सहरमेंरे । बोले धन २ पुन्य नंती नाररे । संकट पड़ियां धर्मन छोड़ीयोरे । ए थई अष्टा दशमी ढालरे । सु० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

नगर सेठकी पदवी महिपत, सुदत्त सेठको देह ।
राजभुवन विच आय विराजे, नृपती हरष धरेह ॥ १ ॥

मांड कही महा राणीजीको, धीरक पिछली बात।
महाराणी करे हरप घरीन, धनसठी मातरु तात ॥ २ ॥

॥ ढाल १६ मी ॥

॥ मानमद रग बरसायो मेंतो देख समा हुलसाया ॥ ए देशी ॥

महाराणीजी हरप अपारो, आवे सुदर्श सदन मझारो ए टेर ॥ नृप आग्यासे गुन खांणी, महाडोल चढे महा राणी । वस्त्र भर्ण सजी सिनगारो । महा० ॥ १ ॥ आगल मयगल मलपत चाल । हय हिंसारव कर हाले । पग झांझरको ठणकारो । म० ॥ २ ॥ रयकार करत रथ साथे, बाजा बाजत मंगल गावे । साथे दास दासी परिवारो । म० ॥ ३ ॥ नागर जन देखन दोड़ । महा राणीजी आवे कोड़े । पूछे आपसमें नरनारो । म० ॥४॥ मिलया रत्नावती सखी तांई । आवे सुदर्श घर हुलसाई । देखो धर्म धीरो सविचारो । म० ॥ ५ ॥ यांई पुन्य धन्ती पाई । महा सप्तमी रातको आई । भरिया धन धनसे भैंडारो । ॥ ६ ॥ तप तेलाके परतापो । सुदराणीजी आप आपो । गावे मोतीलाल अणगारो । म० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

महा राणीजी आता सुनकर, सेठ सुदत्त हरषाय ।
करी विक्षायत रंग भवनमें, स्वागत बहुत कराय ॥ १ ॥
सेठानी ओर पुत्र वधु मिल, आदर दीध अपार ।
असन पान खाद्यम ओर साद्यम, जीमाया धर प्यार ॥ २ ॥

॥ ढाल २० मी ॥

॥ हांक मतकर गर्व दीवाना । ए देशी ॥

हाँ सती गुन गावो भाई। भानूवत प्रगटी कुल मांई। धन्य सती अवतार बोले महाराणी आईरे । स० ॥ १ ॥ ए टेर ॥ निश्चल चित तप तेला कीना जिनसें मन वाँछित फल लीना, कलंक मिटा सती धर्म प्रतापे आनन्द थाईरे । स० ॥ २ ॥ महाराणी मिल मेहलां जावे । सती रतनावती शुभचित भावे । जप जिनेश्वर जाप साफ दिल हरप भराईरे । स० ॥ ३ ॥ कर सामायिक नेम प्रेमें धर । रखे आसता जिन वँचना पर । करे आंबिल उपवास सती दृढ़ आसन ठाईरे । स० ॥ ४ ॥ सेठ सेठानी शुभचित भावे । वीर प्रभुके नित गुन गावे । ध्यावे देव अर्हत सेव सद्गुरु चित ल्याईरे । स० ॥५॥ मरता बचावे अनाथजो आवे । खान पानदे वस्त्र पेनावे । खरचे धन अनपार ज्ञान पुस्तकके मांईरे । स० ॥ ६ ॥ दिनें दीवाली तेलो करतां

धीर प्रभुको ध्यान जो धरतां । कहे मुनि सुजानन्द फन्द कर्मोके टर्टाइर । स० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

पती मझा रत्नावती, विलसत सुख संसार ।
शुभ सुपने एक पुत्रका, जन्म थया शुभवार ॥ १ ॥
जन्मोत्सव कर विविध प्रकार, नाम दीये पुन्य पाल ।
बध चन्द्र वत मास विराजे, देव कुँवर उणिहार ॥ २ ॥
पुरुष कला परवीन कुँवरजी, योवन वय हुँसियार ।
शुभ लगन पुन्यवंती बाला, परणावे घर प्यार ॥ ३ ॥

॥ ढाल २१ मी ॥

॥ आज सहरमें बाई जोगीसर आया । ए देशी ॥

तिण अवसर मुनिराज पधारे । गुण सुन्दर गुण दरीयोरेलो । महिपाल विचरत ज्ञान दिवाकर । मिथ्या अधर मिटायरेलो ॥ १ ॥ धन्य सुगुरु सरण परउपकारी । पंच महाव्रत धारीरलो । धन्य० ए टेर ॥ महिपति मुनि आगमन सुणीनें । हर्षितहो घनधारीरेलो । सेन्य सभाई राजा रांणी । आवे धाग मझारीरेलो । धन्य० ॥ २ ॥ सेठ सेठानी पुत्र बहु फिर । नागर जन मन धारारेलो । विधि पूर्वक मुनिवन्दन करके । बैठे सनमुख सारारेलो । धन्य० ॥ ३ ॥ अथिर जगत सुपना सम माखे । मातपिता

परिवारोरेलो । सब संग छोड़ी परभव जासी । पुन्य पाप वेहु लारोरेलो । धन्य० ॥ ४ ॥ नरतन पायो पुन्य सवायो । करणी धरमकी कीजोरेलो । परोपकार भलाई करके, लाह्वो धर्मको लीजेरेलो । धन्य ॥ ५ ॥ सुखि उपदेश राजा राणी । सुदत्त सेठ सेठाणीरेलो । अमरसेन सती रत्नावती दृढ़ । वैराग दिलमें आंणीरेलो । धन्य० ॥ ६ ॥ पुत्र भणी घर सुपरत करनें । मुनि संग महाव्रत लीनारेलो । खटकायां प्रति पार मुनीजी, जन्म मरनसें चीनारेलो । धन्य० ॥ ७ ॥ करणी उत्तम कर संयम पाली । स्वर्ग गती सुख पायारेलो, जन्मांतर मोक्ष सिधासी, आवा गमनको मिटायारेलो । धन्य० ॥ ८ ॥ दिन दीवाली महातम तेलो, मन चंचल स्थिर करसीरेलो । वीर प्रभु का ध्यान जो धरसी । तेशिवपुर सुख वरसीरेलो । धन्य० ॥ ९ ॥ संप्रदाय पूज्य रघुपति केरी । वसुधामें भई ज्हारी-रेलो । संतोष चन्द्र मुनि शिष्य परंपर । धैर्यमाल सुख कारीरेलो । धन्य० ॥ १० ॥ मोतीलाल मुनि जोड़ सुनावे । इकवीस ढाल बनाईरेलो, मुनि नारायण चन्द्र कथनसें । गढ जालोर के मांईरेलो । धन्य० ॥ ११ ॥ नुन्याधिक हो दक्ष सुधारी । वांचो गुरुगम धारीरेलो । उन्नीस साल नीवे नव ठांणे । माघ शुकल शुभवारीरेलो । धन्य ॥ १२ ॥

॥ कलश लिख्यते ॥

शुद्ध चरित्र पाली दोष टाली मोक्ष धाम सिधावसी ।
अष्टम तप परभाव देखो, सास्वता सुख पावसी, ॥ १ ॥
सती साहस धारी मनमारी, इकासन व्रत आदरी ।
भावना शुभ मनराखी देवता सानिध करी ॥ २ ॥
एह कथा सुन रसिक श्रोता, भावधर दिलमें धरो ।
पाप टारो धर्म धारो, तपकरनी उज्वल करो ॥ ३ ।
है आतमका उधार तपथप । साधना सांची करो ।
मुनि मोतीलाल आनन्द हितकर, वेग भव सिन्धु तिरो ॥४॥

॥ इत्योम् ॥ शान्ति ॥ शान्ति ॥ शान्ति ॥

पुस्तक मिलने का पता—
श्री जैन श्वे० स्था० जैनमुनि संतोष भंडार,
मु० सादड़ी (मारवाड़)

रचयिता—

प्रसिद्ध वक्ता पंडित मुनि श्री

चौथमलजी महाराज

प्रकाशक—

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति

रतलाम.

चतुर्थावृति २००० | मूल्य)||| | वीराब्द २४५९ संवत् १९९०

॥ ॐ ॥

सीता बनवास-दिग्दर्शन.
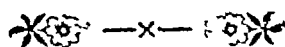
तर्ज.—गजरल इमरजी कहेतो हंसकर बोलना ए।

सीता है सतवती नार, सदा गुण गावना रे। तस्य शील तणे परताप, फली मन भावना रे॥ टेर॥ लंका जीतीने रघुनाथ। लेकर सीताजीको साथ। हनुमत, सुग्रीव, लछमण भ्रात। आये अयोध्या के माय; हुवा रंग बधावनारे॥ १॥ एक दिन सीता सेज मुझार। रैन में सुपना लिया उदार। युग अष्टापद अतिसुखकार। जागत प्रेम मगन हो, गजपति पिउपै आवना रे॥ २॥ विनय सहित जोडे दोऊ पाणी। सुपना दर्शाया मृदुवाणी। कहे श्रीरामचंद्र हित आणी। पुत्र दो होसी सुंदर थारे, वंशवधावना रे॥ ३॥ आई मनहर ऋतू वसंत। वन में तरुवर रम्य फलंत। कोकिल मोर सुशब्द करंत। खेलन फाग बागमें नवरंग, होज भरावनारे॥४॥ काली घटा चढी अति भारी। फुआरा छुटरया सुखकारी, हिल मिल खेलत है नरनारी। तिण अवसर सीताका दाहिन, नयन चलावना रे॥ ५॥ सियाकी कंपन लागी काया। हा! फिर कैसा संकट आया। छाती भरी नयन जल छाया। पहले क्या थोडा दुख सहन, किया बनवासनारे॥ ६॥

रघुपति जीतम्य धैर्य बधाय । हे प्रिय प्यारी मत मुरझावे । निमम करम से दुख बिरलावे । होगम जैसा होवनहार, करम फल पावनारे ॥ ७ ॥ रज निष्कलन श्रीरघुराम । सीताका अति मान कराया । घर घर यश कीर्तन फैलाया । जनकदुलारी सति पति मर्जी हय मनावनारे ॥ ८ ॥ महिमा सीताजी की वस्त । सोकों भारमा अभिको वस । जाहिर होगई सीता एक । एसी करके कोई तमबीज, मान उतारनारे ॥ ९ ॥ सांपन सूली शस्तर घाव । तीक्ष्ण दावानल को ताप । ताते अभिको सोक स्वभाव । प्रीति जोड़ फजीती करके फिर टन आवनारे ॥ १० ॥ कैसा दशकधर का पाव । सीता लिख दिया सरल स्वभाव । लागो सोकोंको जब दाव । दास्यों मम नगरमें घर घर, बात उड़ावनारे ॥ ११ ॥ रघुराजी को चग्या दिखाया । सीता का यह कर्म बताया । प्रति दिन पूर्व कलंक लगाया । पग्गइ भ्रांति रामके चित सः प्रेम हटावनारे ॥ १२ ॥ पुरमें बसे सात अधिकारी । प्रभु पै चल आय विचारी । मुख नहिं निकसे बात हगारी । घर घर घूमत लागा रामजमो, बतलावनारे ॥१३॥ कहो किस कारण आये भाई । कैसा हाल नगर के माही । निर्भय हाके दो दरशाई । क्या तुम्हें दरद लागा दुखदाई क्यों कपावन्यार ॥ १४ ॥ कहें तो क्या समझोगे आप । नहिं कहें स्वामी द्रोहका पाप । हुई यह जैसे छछुंदरि सांप । सीता माताका अपवाद सुणी दिल दाजनारे ॥ १५ ॥ दो कर जोड़ अधोमुख हाकर । भाख्यो बात चली सो घर घर ।

क्यों नहीं खाव मिले फल सुन्दर । मधुकर विन लीधे किम रहत, फूल की वासना रे ॥ १६ ॥ पखगी देख पखी पडे जैसे ! लपट नरने नारी ऐसे । जो मिले भोगे विन रहे कैसे । सीता रावण के घर रहकर; किम बच आवनारे ॥ १७ ॥ रावण मोह्यो सीता जोई । लेगयो तिणवेला नहीं कोई । मारग में थे पिण वे दोई । जाणे कौन हुई क्या बात, लोक सभावनारे ॥ १८ ॥ सीता अपयश भाजन पूर । तो पिण रखली राम हुजूर । राग रत्तामें अवगुण दूर । मोटा वासण जो अवढाय, छोत नहीं जानना रे ॥ १६ ॥ निंदा कररहेलोक अनेक । सुणता पडे श्रवण में छेक। सीता हुई के ना हुई एक । हिरदे सोच विवेक विचार, कुयश मिटावनारे ॥ २० ॥ सनातन सूर्यवश बडेभाग । आज तक लगा न कोई दाग । कीरती फैल रही अथाग । क्यों हुवे इण कुल में यह कर्म, प्रभु पत राखनारे ॥ २१ ॥ ऐसी सुण पुरजन की वाण । लागा रोम रोम में बाण । अब किम करुं होय घर हाण । जो रहे ढग उधरका बिगडे, लौकिक लाजनारे ॥ २२ ॥ रामजी निशी शहर में जावे । सीता अपयश अति सुण पावे । अयोध्या सारी शोर मचावे । पूरण परचा रजक मुख, सुणकर आवनारे ॥ २३ ॥ कोपातुर होय राम कहे खास । दूंगा सीताको बनवास । सुण के लक्ष्मण करे अरदास । नहीं भावज में दोष लिगार, प्रभु विचारनारे ॥ २४ ॥ मेरु चले, नीर तरे पत्थर । अगनी शीतल, पश्चिम दिनकर । शशि अगार झरे, अमि अहिवर ।

सो पया सीता शियल न सके, निश्चय आननारे ॥ २५ ॥ निर्दयी जीव सया निस्तारा । अथवा पुरुष तेरा जग सारा, सागर फार सबै फेरे पारा । सीता शील कभू नहीं क्षोभ, कोप निवारना रे ॥ २६ ॥ जग में ऐसी नार न दूजी । निश्चल शीलवती जिम पुजी । प्रभुजी यह तुमने क्या सूजी । सीता है निर्दोषी नाहक मती सतावनारे ॥ २७ ॥ उस दिन राजभोग तज छिन में । प्रभु संग सती सिधाई वनमें । क्या थी कसर पतिव्रत पन में । कैसा संकट तुम संग सहन किया सो चितारनारे ॥ २८ ॥ वडकवन में पड़ा वियोग । मरगये मानुष जैसा सोग । सो दिन उतरगये उपयोग । सुनके लोक वचन को सीता, भाव निकालनारे ॥ २९ ॥ घरघर भजन लोक कहावे । [इनकी कथनी चित न लावे । नयनों आंसू झरमर आवे । मेरी तनिक अरज हिय धार, वैम मथावनारे ॥ ३० ॥ सीता गर्भवती सुसमाल । पूरण अष्टमास का काल । कैसे वा इसे बाहर निकाल । जाने किम आवेगी समघर, जैसी मातनारे ॥ ३१ ॥ प्रभुजी कहे भनुज से वान । मत तू फिर मत बोल बयान । लखमण हुआ अधिक हैरान । मोटा भ्रात बाप समान; करें किम सामनारे ॥ ३२ ॥ सुग्रीव कहे जोड़ी जोड़ हाथ । निर्मल कंचन सीता मात । क्या कही गलमजटी ने बात । आकर कहती माती या न ध्यान रघुनाथनारे ॥ ३३ ॥ वीर कहे वचन सुणो अनुचर के । । जिस दिन रावण लेगयो हर के । सीता नियम लखन रघुवर के । राम कुशल की खबर

मिले तब अन्न जल खावनारे ॥ ३४ ॥ जब मै देखी लंक उद्यान रोती, होती अधिक हेरान। मुद्री देख सुणी मुख बात, हर्षित होगई दिन इकवीस, तणा किया पारनारे ॥ ३५ ॥ विभीषण कहेयू होके दीन। मै भरुं साक्षी करे यकीन। रावण घररही धर्माधीन, उलटे मुख हो करती बात, देदे धुतकारनारे॥ ३६ ॥ रावण भेजी मंदोदरि ताई। जिनको दूति कही दवाई। दशानन साथे करी लडाई। फिट फिट फिट फिटकार लगा इन मुख दिल लावनारे॥ ३७ ॥ चोर निशाचर और अन्याई, बनसे लायो मुझे चुराई। क्षत्रीपन के मसी लगाई। धिक् इस प्रार्थना से श्रेष्ठ, तुझे मरजावनारे ॥ ३८ ॥ मूर्ख गिरी से सिर टकराया। सर्प टिपारे हाथ चलाया। शस्त्र उलट पकड सुख चहाया। काल नजर तुझे देखू क्यों मुझ, जीव जलावनारे ॥ ३९ ॥ आवे इद्र स्वर्ग से चाल। उनकी भी नहीं चले मजाल। तो तू किस गिनती मे स्याल। जो तू सुख चाहे तो प्रभु पै, वेग पठावनारे ॥ ४० ॥ केशरीसिंह मूछ का बाल। अहिवर सिर की मणी रसाल। वीर शरणागत कृपण माल। सती पयोधर इतना जीवित, हाथ न आवनारे ॥ ४१ ॥ जो तू लाता स्वयम्बर जीत। यह थी राजन कुल की रीत। इस दुष्कृत से होगा फजीत। गई तेरी पुण्यवानी बीत, प्राण हैं पाहुनारे ॥ ४२ ॥ तुझ घर सहस्र अठारा राणी। तो फिर मुझे उठाकर आणी। पीलण तेज पुंज तिल घाणी। सपद तरुवर छेदन काज, कुल्हाडी लावनारे ॥ ४३ ॥ दशसिर काटन कैंची जान। लंक जलावन

नाग समान । पनोती पग आइ पहचान । मानकी, ज्ञान की लेश्या हार तू क्यों मनमावनारे ॥ ४४ ॥ कह बदे बदे बे महत्व; लगिया पर रमणीके पम, जगमें निन्दित हुआ अत्यत, कामन दीप सिखाये कामीपतंग लुभावनारे ॥ ४५ ॥ जितने पग परविय हित ढाबे, उतने प्रसपात कलपाबे, ऐसी पुराण में दरसाबे, कोटिश कष्ट नरक में जनम क्यों हारनार ॥ ४६ ॥ मैं हूं सती लगामत हाथ । हटजा दूरदुष्ट बदजात । सेना लेकर वीर पुनाथ । बेग पधारो इस राक्षस से, मुझे छुडावनारे ॥ ४७ ॥ सीता रक्खी धरम की कार । प्रभुजी सत्य करो इतबार । तो भी राम न मानी लिगार । सारथी रथ में बिठाई बन में, छोडी आवनारे ॥ ४८ ॥ घटवी अति भयकर खास । जहां नहीं कोई मिलन की आस । कहींभे राम दिया बनवास । भरसी भोग विकट बन त्रास, न पीछी लावनारे ॥ ४९ ॥ रोने लगा सकल परिवार । महल में होगया हाहाकार । कैसी आन बनी करतार । सत्य शिक्षा देवन हार; हुआ मलसावनार ॥ ५० ॥ सिया से कभी न बरते राम । छोबी तत्क्षय सुन कुनाम । ये हैं सब बिन मतलबके काम । जैसे अंजनी नाम उज्ञानी कर्म कुनामनारे ॥ ५१ ॥ सारथी रथ सजकर जब लावे । बिठाइ सीता को लेजावे । आ बन में सब हाल सुनावे । सुन मुरझाई सीता सारथी हुआ बिलखावनारे ॥ ५२ ॥ सीतल पवन सचेतन थाय । रोती बोले सीता माय । कहीये माधवनामने जाय । बिन तकसीर अकेली बन में; क्यों विटकावनारे ॥ ५३ ॥ माता तुम

हो सबगुण संपन्न। दोपित कर काढी रघुनन्दन । मै तो नौकर जाति विलं छिन्न । खोटे किंकर पन का काम; हुकुम उठावनारे ॥ ५४ ॥ प्रभुजी पलमें प्रीति तोड । भेजी सीता को इस ठोड । देखी काई सियामें खोड । कुछतो कहनाथ। यह कारण; किस अपराधनारे ॥ ५५ ॥ जो कुछ थी क्यों नहीं कहदी पेली । जलवल होती राख की ढेली । इस वन में कुण म्हारे बेली । सग नहीं सेहली वनमें अकेली, वन विहामनारे ॥ ५६ ॥ घरणे बेठी नहीं झगडती । फौजा ले नहीं पिउ से लडती । विष नहीं खाती न कुवे पडती । सीतादेती नही शराप, न करती सामनारे ॥ ५७ ॥ लपट नर की सुन कोई वात । प्रीतम पलट्यो आज विधाता । एक दम दीनी केम असाता । राक्षस राक्षसणी से पूछ के, निर्णय करावनारे ॥ ५८ ॥ आशा मेरे मन थी ताजा । जनमसी पुत्र बाजसी बाजा । सो सब होगये काज अकाजा । प्रभु नहीं पूछी मन की बात, बढा पछतावनारे ॥ ५९ ॥ प्रभुजी मैं तो अवगुण गारी । तुमतो सागर सम गिरधारी मुझपे करणा नाथ विचारी । मुझ दासी ने रखलेता यह, बन डरावनारे ॥६०॥ मैंतो पूर्व पाप जो कीधा । बोली झूट. आल पर दीधा । हणीया जीव अछाणया जल पीधा । कीनी निंदा, नियम व्रत खड्या तलाव सुपावनारे ॥ ६१ ॥ सेव्या आश्रव पाप अठार । कीनी अधम पथ से प्यार, पोषी इन्द्रिय विषय विकार । साधू श्रावक का व्रत लेकर करी विराधनारे ॥ ६२ ॥ के मै जल सू आग बुझाई । दव दीधी आग लगाई । भाडा, चूना, ईट, पचाई ।

खाया कन्द मूल फल करके, अधिक सराहनारे ॥ ६३ ॥ के मैं अनरथ कर्म कमाया । फल अरु फूल बीज बिथाया । बैंगन भरता करकर खाया । केरी निंबू में भर खार, अचार नखावनारे ॥ ६४ ॥ के मैं तरवर आल मरोड़ी । पाती, कलियां, कोंपल तोड़ी । छवि कम किये मू मोडी, सुखिया नाज धूप में धरियां, और पिसावनारे ॥ ६५ ॥ दीपक चलत उघाड़ा धरिया । जिन में पड़ पड़ जन्तु मरिया, धीवर कर्म कसाई करिया, क मैं खाया मदिरा मांस, या मोजन रातनारे ॥ ६६ ॥ के मैं सोक भवे दुख दीना । जननी बाल बिछोहा कीना ॥ मारग लूट द्रव्य हरलीना । मंत्र उचाटन मूठ चलाय ॥ किसे दी त्रासनारे ॥ ६७ ॥ के मैं किसी का गर्भ गलाया । खापी शील कुशील कमाया । सती के सिरपे कलंक चढाया ॥ पिता और पत्नी के आप सर्मे वैर बसावनार ॥ ६८ ॥ क मैं सासू बहू लड़ाई । मत्री मंत्री प्रीति घड़ाई । सघ भगाड़ी जल में सड़ाई । औसिन गायी विल नहीं भागी, करी उथापनारे ॥ ६९ ॥ के मैं भरम करेसा लाभी । नाटक नाच देख हुई राजी । हिंसकर खेली भातिश बाजी । मोटा आरम करमादान करी हर्षावनार ॥ ७० ॥ क मैं तपसी साधु सताया । कैसा मबका मह उदय आया । सो तुम जानत हो जिनराया । छूटे नहीं निकाचित बंध भवन्म भुगतावनारे ॥७१॥ मेरे कर्मों की है मार । प्रभु में नहीं है दोष लगार ऐसी समता दिल में धार । बाली सारबी सुख मम जावत; पिछले सुनावनोरे ॥ ७२ ॥ राम राज्य के राज्य मुभार । सुखिया बसे सकल

नरनार । मै दु ख भोगूँ विपिन निरधार। प्रभुजी मेरा ही दुर्भाग्य, अंक विधि मातनारे ॥ ७३ ॥ जवास्यो सूखे घनवर्षण में । उल्लू देख सके नहीं दिन में । केर फले न वसत ऋतू में । जलधर रवि, ऋतु दोपन कोय, दोप कर्मो तनोरे ॥ ७४ ॥ सीता रघुवर विन दु खी वनमें । तुम भी मुझ विन प्रभुजी मनमें । तज दी आके लोक वचन में । तिम कोई दुष्ट वचन से धर्म मती छिटकावनारे ॥ ७५ ॥ मैं तो हुइ के न हुइ स्वामी । मुझ विन क्या तुम घरमें खामी । अर्जी सुनियो अंतर्यामी । निज काया और कुटुम्व तणी । करजो प्रति पालनारे ॥ ७६ ॥ आखिर सीता की यह वाणी । प्रभु तुम सूरज वशी भाण । दिन दिन होजो कुशल कल्याण । फलजो सुर तरु जू जगमें सु यश वर्तावनारे ॥ ७७ ॥ सारथी कहिजे मुझ आशीश । चिरजी रहो अयोध्या ईश । लक्ष्मण सेवा करो निश दिन ॥ सारथी सीता वनमें छोड़के । रथ पलटावनारे ॥ ७८ ॥ सीता पग पग पे मुरछावे । ग्रीष्म ताप सही नहीं जावे, दर्भांकुरसे चरन विंधावे । सती का दु ख से दुःखी हो सहस्त्र, किरण अस्तावनारे ॥ ७९ ॥ बैठी तरुवर के तल रानी । रोवत भर २ नयना पानी । वनचर देख अति कंपानी । धरियो परमेष्ठीको ध्यान दुःख मिटावनारे ॥ ८० ॥ वन में नार अकेली जोय देखी लोक अचभे होय । यह तो वन देवी है कोय । आया वज्र जंग तहा भूप, श्रावक जिन राजनारे ॥ ८१ ॥ भयाकुल होय सती उसवार । अग तणा सव अलकार । भूपति आगे धर्या

उसार। हे भगिनी मत दरशस लाव, घोर नहीं जाननारे ॥८२॥ बहिनी कौन! कहां से भाई!। इस वनमें क्यों रोती माई। विम हुई हो सिम ये शरणाई मैं हू भावक व्रतका धारी, शक मत लाव नारे ॥ ८३ ॥ बीती बात सुनाईताम । सुन के भूप क्रिया प्र- णाम । चलिये बहिन हमारे धाम । मैं तुम भाई धम को भामडल सम जाननारे ॥ ८४ ॥ सती को शिविका बीच बिठाई । लाया निज महलों के मांह । करे सती धर्म ध्यान हुलसाई । टलियां दुःख मिलिया सुख, पुरय प्रगटावनारे ॥ ८५ ॥ सारथी आया है जब चाल । सुनाया सती के दुखका हाल । सुनकर रामभद्र तत्काल । मुरछा खाके पड़ गये लक्ष्मण, आय उठावनार ॥ ८६ ॥ सुध बुध विसरगय रघुवरे । कहां गुम सीता सती पुकरे । सूना भवन लगे यम घरे । सीता बिन जीना धि कार, पीछी मिलावनारे ॥ ८७ ॥ कैसा होगया ज्ञान अजान । सीता प्यारी माया समान । मैं तो लोक कहन में आन । पीछे विदुषी सती को दुःख हुवा पश्चतावनारे ॥ ८८ ॥ बोले लक्ष्मण सुनो रघुनाथ । सोचे विगड्यां मानुष बात । ऐसा भव क्या आवे हाथ । पुन शोधन करले भावां, क्यों धमराव मारे ॥ ८९ ॥ आये बैठी सुरत विमान । शोधि धयी न मिल्य निशान । पीछे चल आये निज स्थान । सोकें होगई राजी पूरण हुई मनकाममारे ॥ ९० ॥ सिया करे गर्भ तणी प्रतिपाल । वनमें युगल पये दो बाल न लव, कुश दीना नाम रसाल । भगिया गीतार्थ से विद्या, धाम सुहावनारे ॥ ९१ ॥

एक दिन माता मुख सुनी वात । तत्क्षण कोपे दोनों भ्रात । लेकर दल अक्षौहिणी साथ । आये राघव से लढवा निज, बल दिखावनारे ।। ९२ ।। भेजा दूत राम पे आया । बीडा भाल नोक झेलाया । बलिया दो जगजननी जाया । आये आण मनावन काज, हुक्म सिर धारनारे ।। ९३ ।। सुनकर राम लखन कोपाये । फौजे लेकर सन्मुख आये । मुख से बोलत लव कुश धाये । गीदड़ रावण को मारा अब, क्षत्री पन दिखलावनारे ।। ९४ ।। अडी जब दोनों फौजें आन । बजे रण बाजा उड़े निशान । नूर नूरानी सुभट बलवान । खडा रणक्षेत्र में सुलतान, वीर रस छावनारे ।। ९५ ।। बख्तर, तोप, तेग अति चलके । शस्तर विविध प्रकारे झलके । शक्ति तेज चढी दोई दलके । निज निज स्वामी की जय कारण, मरण मुख धावनारे ।। ९६ ।। नीर सम तीर चले सर सर्र । छूट रही तोपें भी धर धर्र । देख कायर कंपे थर थर्र । धूज गई धरणी रजसे रविका, तेज छिपावनारे ।। ९७ ।। लव जब भिडा राम से आन । कुश लखन पै ताना बान । हृदे में लगा हुए बेभान, मूर्छित होय पडे रथ माय, सुभट रथ वारनारे ।। ९८ ।। लक्ष्मण सावचेत में आया । स्यदन पीछा रण में लाया । फिर भी परास्त हुवे हरि राया । तबतो हो कुपित त्रिखडी, चक्र चलावनारे ।। ९९ ।। चलाया राम लखन कई शस्तर, फिर २ आवे पीछा चक्कर । मनमें सोचे हरि और हलधर । है कोई विद्याधर बलवंत, राज्य अब जावनारे ।। १०० ।। आयुध सेवे देव हजार

चकर दशमुख मारन हार । सो सब पदल गये इसबार । हाथी घोड़े इनकी जीत, जीवित क्या कमनारे ॥ १०१ मगिनी मिल मामण्डल वीर । सुन के उत्तरण लव कुश मीर । मामा आय से रणवीर । मीडियो राघव दल से खेचर, दिल शकावनारे ॥ १०२ ॥ सुग्रीव पूछ मामण्डल साई । ये कौन आये शूर चलाई । तुम क्यों मिले इन्हों में जाई । ये सुत मायेशा सीता का, आया जाननारे ॥ १०३ ॥ खेचर मिल सब मसलत ठाइ आपन किस पै करें चढ़ाइ । पितु और पुत्र सफी यह लड़ाई । शस्त्र छोड़ अलग आ बैठे खेनिक रामनारे ॥ १०४ ॥ सोचे तब लक्ष्मण रघुराज । रण तब मागे सुभट समाज । निश्चय पलट गये दिन आज । पथवी लेने को हरि हलधर, खूब मगटावनारे ॥ १०५ ॥ इतने नारद ऋषि चल आया । राघवजी का भरम मिटाया । ये कोई है सीताके जाया, मिलवा आमा आप दिखायाँ, युद्ध न ठवनार ॥ १०६ ॥ गोत्रीपर नहीं चाले शस्तर । सो किम मारे मे निम पूतर । प्रथम जिनेश्वर श्री आदेश्वर । जिनका पुत्र भड़ा भरतेश, चक्री पद पावनारे १०७ चलाया चक्र बाहुबल साथ । आमा पलट करी नहीं घात । सुनिया हाल श्री रघुनाथ, देखा जोरावर भगजात, गात फूलावनारे ॥ १०८ ॥ मिलवा राम चाल्या ततकाल सब पग लागे दोनों बाल । देखी सब जन हुआ खुशाल । आये पुत्र पिता के भवन, रंग बधावनारे ॥ १०९ ॥ पितासे पुत्तर करत जबाब क्या कहे सुख दुख सागर आप दीन्हा बिन सोचे संताप, अवगुण होमी तो क्या जगत फजीत करावनारे ॥ ११० ॥

लक्ष्मण, सुग्रीव अंगद हनुमान । विभीषण और मित्री राजान । बोले राघव से हित आन । शील शिरोमणि सीता नार, उसे अब लावनारे ॥ १११ ॥ तब कहे रामचद्र आल्हाद । मिटे किम लोकोंका अपवाद ॥ करे वह धीज मिटे अपराध, हनुमत सीता लेवन पुंडरीक, नगर सिधावनारे ॥ ११२ ॥ सिया से हनुमत भाखे बात ; समति कर राम लखन सब साथ । भेजा मुझको यहा रघुनाथ । चालो पुष्पक बैठा विमान, न देर लगावनारे ॥ ११३ ॥ बिठाई सीताको विमान । आये महेंद्र बाग दरम्यान । लक्ष्मण पावा लागे आन । माता भवन पधारो करके, माफ अशातनारे ॥ ११४ ॥ सिया कहे करू धीज खचीत । जिससे हो सब को परतीत । मिटे सब लोकों की बदनीत । रचायो अग्नीको तहा कुड, भूंड, नरनारनारे ॥ ११५ ॥ तीन सौ हाथ गोलाई जान । उडा धनुष दोय परमान । चन्दन भरके धरी कृपान । धग धग करता लाल अगार ज्यू, केशु फुलावनारे ॥ ११६ ॥ हजारों पुरवासी मिल आवे । दीनता कर करके समझावे । प्रभु अग्नि में मत छिटकावे । सीता है बिलकुल निर्दोष, अर्ज स्वीकारनारे ॥ ११७ ॥ राघव कहे सुनो लोक गवार । तुम तो भेड़ जात ससार । क्या तुम जिव्हा का इतबार । कछुए सम क्षण बाहर क्षण, भीतर हो जावनारे ॥ ११८ ॥ लोक सब हाहाकार मचाय । निर्दोषण सीता के ताय । डारे आज अगन के माय । हे जगदीश दयानिधि करके, दया बचावनारे ॥ ११९ ॥ जानकी आई अनल के तीर । नयन से टपक रहा है नीर ।

पड़ी मे कैसी प्रभुमी मीर । पूर्वकृत कर्मों की तकसीर, कर्म दुःख बनारे ॥ १२० ॥ धर्म, साधु, सिद्ध, जिन भगवान । शरण में गहू करो कल्याण । मनसा, वाचा, कर्मणा जान । वो सत्साक्षी रवि, शशी लोकपाल, दिशि भारनारे ॥ १२१ ॥ सीता कहे सुनो बाल गोपाल । पैलो स्वप्ने पण पति टाल । तो तू ज्वाला दीजे बाल। नहीं तो भस्मी मिट तत्काल, नीर हो आवनारे॥ १२२ ॥ ऐसे कह के सती सवाल उठ रही घोर अगन की ज्वाला, उसीमें कूद पड़ी तत्काल, दसत सब जन सरर नेत्रांबू टपकावनारे ॥ १२३ ॥ तत्क्षण निर्मल भये परताप । आये देवी देवता आप । मेटा सीता का सताप । होगया अग्नि का जल कुंड, फूल बरसावनारे ॥ १२४ ॥ पंकज पद्म विविध जल कंद । सुर निर्मल फूल विकसत । सारस हस सजोड रमन्त । पाळ्या पचरत्न मय मणि, सोपान सुहावनारे ॥ १२५ ॥ माहात्म्य सत्य शील का सार । देखत कोटिगण ससार। सती ने दीना कलंक उतार। हर्षित होगये सज्जन दुर्जन, मन शरमावनारे ॥ १२६ ॥ सिया से राम कहे पछिताय मेंबी तुमको बनखंड माय, दीन्हा दुरमन प्रेम बुझाय मन वच काय सकल अपराध माफ करा सावनारे॥ १२७॥ कैसी महिमा सियों की भारी । जय जय बोले सब नर नारी । जगवल्लभ हुई जनक दुलारी । प्रगटा पतिव्रता का धर्म, सुयश जग छावनारे ॥ १२८ ॥ रामजी बजा बर्त नगारा । हनुमंत उदधि कूद सिधारा । लंका बाग नाश कर डारा । शक्ति भाव भरी लक्ष्मण के, भाल न आवनारे ॥ १२९ ॥ रावण दुरकटक

कहवाया । जिनको प्रभुजी मार गिराया । लंका गढ़ में हुकुम चलाया । सती को बन में मिला सुसाज, भक्त जिनराजनारे ॥ १३० ॥ दो पुत्तर बलवंता जाया । हरि हलधर का पाव डिगाया । अग्निकुंड नीर छवि छाया । ये सब सीता शीयल प्रताप, विघन विरलावनारे ॥ १३१ ॥ सिया कहे सुनो सकल समाज । कब हो नीर अगन का आज । पर यह रही रघुकुल की लाज । सूरजवंश दिवाकर पुराय, प्रभू का माननारे ॥ १३२ ॥ खाल का नीर पूजनीक थाय । लोह के घात कनक बनजाय । अधर्मी पुरुष धर्मी कहलाय । ये त्रिहु नसा, पारस, सद्गुरु महात्म जाननारे ॥ १३३ ॥ नयनाश्रुत कहत मुरारी । मुझ संग चलो भोग सुख प्यारी । सती कह झूठा जगत दुःखकारी । प्रभुजी भोग भुजंग समान, वचन वीतरागनारे ॥ १३४ ॥ जग में लगा अलीत पलीत । सुख में दुःख संताप ख-चीत । मूरख करे भोग से प्रीत । त्रिविध त्यागन करके नाथ, निजात्म तारनारे ॥ १३५ ॥ सियाने लीना संयम भार । सम दम उपशम गुण को धार । तेंतीस दिन का कर संथार । पहुंची द्वादशवें सुरलोक, इंद्रपद पावनारे ॥ १३६ ॥ गजमें ऐरावत एक जान । अश्व में कमलापति प्रधान । उदक में गंगोदक एक मान । क्षीरवर सागर एक ही मंत्र, एक नवकारनारे ॥ १३७ ॥ एक है सुदर्शन गिरिराज, भोग में शालिभद्र सिरताज । योग में स्थूलि-भद्र महाराज । दानी में कर्ण, दशार्णभद्र मानी एक जाननारे ॥ १३८ ॥ ऐसे लिया सर्व जग देख । सीता हुई जगत में एक ।

होगई तिरिया श्रेष्ठ अनेक । दुलभ सीता जैसी नार, फेर प्रगटा-वनारे ॥ १३९ ॥ ऐसा पतिव्रत धर्म सुखकारी । बहिनों धारी लीजो सारी । कीर्ति फैलेगी जग भारी । ऐसा शील रत्न को धार, वश उजवालनारे ॥ १४० ॥ गुरु हैं मेरे हीरालाल । कीन्हा चौथमल को निहाल । उन्नीसौ चहोत्तर का साल । ओड़ा कोरी चल के माघ, जो देश मेवाड़नारे ॥ १४१ ॥

॥ ॐ ॥ शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

ॐ

रचयिता:—
पण्डित मेवाड़ी मुनिवर्य
श्री चौथमलजी
महाराज.

ऋषिदत्ता-चौ[illegible]

प्रकाशक:—
सेठ बगतावरमलजी
नारमलजी
मुक्काम अंजड़.

प्रथम सस्करण	मूल्य	वीर स. २४५५
१०००	सदाचरण.	विक्रम सं. १९८५

प्रस्तावना

नूनं नाशयते कलङ्क निकरं, पापाङ्कुरं कृन्तति ।
सत्कृत्योत्सवमाचिनोतिनितरां, ख्यातिंतनोतिध्रुवम् ॥
हन्त्यापत्तिविषादविघ्नवितातिं, दत्तेशुभां सम्पदं ।
मोक्षस्वर्ग पदं ददाति सुखदं, सद्ब्रह्मचर्यं धृतम् ॥

प्रिय पाठकवर्ग! गतकालमें क्रोडों कुलाङ्गनाएं होगई हैं। जिनकी ख्याति प्रत्येक मजहब के सद् शास्त्रों में पायीजाती है, जो आजकी कुलवतियों को नैतिक शिक्षा का पूर्णतया पाठ पढागई हैं। यह ठीक है कि सदाचारपन की कसौटी कराने को अनेक आपत्तियें आ उपस्थित होती हैं; किन्तु वह स्वल्प कालमें ही प्रायः लुप्तसी होजाती हैं। संसारमें कीर्त्तिरूपी बिजली चमक ऊठती है। गई हुई सम्पत्ति पीछी लौट आती है। बिछुड़े हुये सज्जनों का संयोग सौभाग्य शीघ्रही प्राप्त होता है। आखिल दुनियां में विश्वास पात्र ही नहीं किन्तु पूज्य भाव प्रकट होता है। किंबहुना उभयकुलों को उज्वल करती हुई सत्य धर्म की नौकामें बैठकर विश्वार्णव से उत्तीर्ण होजाती हैं।

आज इसी आशय पर यह "ऋषिदत्ता" चरित्र आप श्री के करकमलों में सादर समर्पण करताहूं। जो

श्रीमज्जैन शासन दिवाकर सकल सुगुणालंकृत बालब्रह्म चारी पूज्यवर श्री १००८ श्री एकलिङ्गदासजी महाराज के सुशिष्य कविरवि सरस व्याख्यानी पंडित मुनि श्री "चौथमलजी" महाराज ने निर्माण किया है। प्रियवरो चरित्र क्या ? एक आत्मोन्नति की सीढी समझना; मैंने इसे मुनिश्रीजी के मुखसे २० रोज तक निसरपुर शहरमें श्रवण किया है तबही मे मुग्ध होरहा हू। मुनिश्री की इस अनुचर पर कृपा हुई है सो इस प्रकाशित कर अमूल्य अर्पण करताहूं।

विनीत—

नाहरमल ऊँकारमल

अजड़ (निमाड़)

॥ ॐ ॥

※ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः ※

सति शिरोमणि ऋषिदत्ता चरित्र

॥ दोहा ॥

शासनपति श्रीवीरके, नमन करी चरणार ।
सरस कथा कहूं शीलकी, ऋषिदत्ता अधिकार ॥१॥

तर्ज-ख्यालकी—सुनियो श्रोताजन पूर्ण प्रेमसे, यह चरित्र रसीला ॥ टेर ॥ जम्बू भरत रथमर्दनपुर में हेमरथ महिपाल । सुयशा रानी सुखदानी सुन्दर रूप रसाल ॥ शूरवीर सब कलावन्त सुत "कनक कुँवर" सुखमाल, अजी यह चरित्र ॥ १ ॥ कम्बेरीनगरी नृप कृत ब्रह्म लवणसुन्दरी नार । पुत्री नाम रुखमणी कहिये तन दामन अनुसार॥ सकल कला परवाण देख नृप चिन्ते चित्त मझार, यह० ॥ २ ॥ मिले योग्य वर कोन ठिकाने मंत्री कहे विचार । रथमर्दनपुर राज कँवर हे कामदेव अवतार ॥ सत्य कहूं महाराज मिले नहीं उन जैसा संसार, यह०॥३॥

श्रीफल देकर भेज्यो मन्त्री हिमगय के दरबार। सदा विजय हो शब्द बोलके श्रीफल धर्‍यो सिवार ॥ सगपण मानो राजवी सेरे मत करियो इनकार ॥ यह ॥ ४ ॥ श्रीफल ले सतकार देइने विदा किया ततकाल । निज नगरी आ हाल सुनाया सुन हर्‌ष्यो भूपाल ॥ ब्याह तणी रचना रची सेरे घर २ मंगल माल ॥ यह ॥ ५ ॥ स्वागत कारण आवे सामने चल्या कँवरी ईश । उभर मावको करी चढाई हेम रथ अवनीश ॥ कर धर राजा कनक कुँवर को बैठायो गज शीश ॥ यह ॥ ६ ॥ चतुरंगी सेना सजि संगमें बडा २ उमराव । रस्ते लगा भूप घर आया चली मात दरियाव ॥ विषम भयंकर जंगल में आ दीन्हा तिहाँ पडाव ॥यह०७॥ उदक ढूंढते अनुचर फिरते आया सरवर ठोर । सुभग बाग चौतरफ किनारे छायरह्या घनघोर ॥ कुँवरी एक सुन्दरि बहपि बांध अम्बके डोर ॥ यह ॥ ८ ॥ हुय-अचम्भित है बनदेवी विद्याधरणी कोय । इण सम दूजी कौन जगतमें रह सुभटगण जोय ॥ कन्या डर भागी उस बनमें तत्क्षण अदृश्य होय ॥ यह ॥ ९ ॥ भ्रमठ आय कुँवर के आगे दरसाइ यह बात । सुनत स्नेह पूर्व को जगियो विकसित होगई गात ॥ लखी कानसों ठोर बतावो जल्दी मुझको भ्रात ॥ यह ॥१०॥ उसी जगह चल आया सब बन लखी घूल्यो भौंही । देखत नैन तृस नहीं होवे यह कुण कहाँसे आइ ॥ सना देख डरी कुँवरी फिर भागी उस बनमाँही ॥ यह ॥ ११ ॥ गई दृष्टि से कुँवर विकल हो डोलन लग्या

निश्वास । धस्यो बागमें तापस दीठो करतो योग अभ्यास ॥ जटाधार तन वृद्ध तापतो कुंवरी बैठी पास ॥ यह ॥१२॥ देख कुंवर खुश हो तापसके चरण नमायो शीश । चिरंजीव तुम रहो कुंवरजी दीनी शुभ आशीश ॥ क्योंकर चल यहां आविया सरे किस नगरी का ईश ॥ यह ॥ १३ ॥ रथ-मर्दनपुर राय हेमरथ का नन्दन महाराज । कम्बेरी नरवर की कन्या जाऊं परणवा काज ॥ दर्शन दीठो आपको सरे सफल हुओ दिन आज ॥ यह ॥१४॥ राजरेख तन ऊपर दीखे आप लिया कीम जोग । तापस कहे सुण राजकुंवर यह इस विध बणियो नोग । नगरी इक ताम्बावती सरे सुखी बसे सब लोग ॥ यह ॥ १५ ॥

सुण राजकुंवरजी, मैं निज वीती परकासूं वारता ॥ टेर ॥

तहां नृपत हरिषेण एकदा होय तुरंग सवार । उलटे बाग उडाय लेगयो विकट विपन मंझार ॥ तापस का आश्रम देखाया एक सरोवर पार ॥सुण०१६॥ तापस मत धारण कर औषधि विषहर लेके राय । निज नगरी आ कइयक जनका दीन्हा जहर हटाय ॥ महिमा फैली बहुत भूपकी देश दिशान्तर मांय ॥ सुण ॥ १७ ॥ कालान्तर एक पुरुष आयके करी विनय अरदास । मंगलावति नगरी प्रियदर्शन पृथ्वीपती का वास ॥ विद्युत्प्रभा राणी उर उपनी प्रतिमती गुण रास ॥ सुण० ॥ १८ ॥ फणि-धर दंश दिया महाराजा कीन्हा बहु उपचार । प्रभू पधारो जहर उतारो यो मोटो उपगार ॥ तुरत तिहां जा

रामसुता का दीन्हा गरल उतार ॥ सुण० ॥ १९ ॥ धन्य
याद दे परणा दीनी लेआया निज महेर । सुखसे नाटक
हावता सरे प्रीतमती के लेर ॥ एक समय राजा इम
चिन्त सर्मी पुण्य की महेर ॥ सुण० ॥ २० ॥ साधन
करूं पुनर्मेव देके निज नन्दन का राज । राणी से कह
मुख से रहिजे मैं मारूं निज काज ॥ प्रीतमती कहे तुम
बिन क्षिणभर मैं न रहूं महाराज ॥ सुण ॥ २१ ॥ पछ
लागी नाथ आपके कैसे जावो छाड । मैं पिण रहस्यूं
संग तुम्हारे साधो जोग समोड ॥ जोग बाप यह राग
भयंकर तुम इम किम इक ठोड ॥ सुण० ॥ २२ ॥ जा
मुझ का राज आप गये तो करस्यूं आतम घात । समझाई
समझी नहीं सरे आखिर लीन्ही साथ ॥ दोनोंहि तापस
व्रत लीन्हा विश्वभूति के हाथ ॥ सुण० ॥ २३ ॥ कुछ
समयान्तर रानी के तन गर्भ चिन्ह दरसाय । पति पूछ
यह अनर्थ कैसा अब किम लाज रहाय ॥ अपयश होसी
जगत में सरे अंगुली लाग बताय ॥ सुण ॥ २४ ॥
भोगारम्भ का गर्भ नहीं यह गृहस्थाश्रम का थान । मोल
धर्म में नहीं अनाई गुप्त रत्यों आधान ॥ धिक् दुष्टन सब
बात बिगाडी मैं मुझ संगमें आन ॥ सुण० ॥ २५ ॥
महिला मोह में अन्ध हुआ तब या उपज्या संताप । एक
क्रोड अस्सी लख नरको कौषिक लीन्हा पाप ॥ रमणी
मूर्छित खेत संजाधिप आप नर्क में आप ॥ सुण० ॥
॥ २६ ॥ दे कपोल तल हाथ सोगया चिन्तातुर नृप होय।

प्रात हुआ देखा तो तापस नजर न आया कोय । दोनों भटकत आगे आया जीर्ण झूंपी जोय ॥ सुण० ॥२७॥ जंघ क्षीण इक वृद्ध तपश्वी बैठा देख नरेश । हाथ जोड पूछा सब तापस चलेगये किस देश ॥ ते कहे तेरा दुराचार लख रमगये ले निज भेष ॥ सुण० ॥ २८ ॥ मैं अपंग बैठो इण मठमें, करू प्रभू को ध्यान । थैं तिरिया संग योग रतको नष्ट किया राजान ॥ घरका रह्या न घाटका स तूं हुआ रजक का श्वान ॥ सुन० ॥ २९ ॥ नारि ठगारी महन्त पुरुष को करदे दास समान । ब्रह्मा विश्नू ईश शशि सुर इन्द्र हुवे हैरान ॥ पाराशर शृंगी कई बिगडे साक्षी देत पुरान ॥ सुन० ॥ ३० ॥ धरत खेद इण मठमें वसीया पुत्री जन्मी ताम । ऋषी पणे प्रस्त्री सो दीन्हा "ऋषिदत्ता" तसुनाम ॥ नव दिनकी हुई बालिका सरे माता गई पर-धाम ॥ सुण० ॥ ३१ ॥ पत्र पुष्प फल खिला २ के पिता करी प्रतिपाल । क्रमसर ते मोटी हुई सरे, तेरा वर्षकी बाल ॥ गांव नगर मानव नहीं जाणे कथा कंकर क्या लाल ॥सु० ॥ ३२ ॥ गज गमणी मृग नयनी बयनी कोकिल कंठ समान । शशि वदनी, अरु शीलवती, गुण किम करूं एक जबान । सुर अवछर भी देख इसे हो दिलोजान कुरवान ॥ सु० ॥ ३३ ॥ अम्ब सुवन में खेलत तुमको देख डरी भग आई । या मुज कुंवरी आद्य अन्त तुम सन्मुख कथा सुनाई ॥ कुँवरी कुंवर परस्पर दोनों हद से गये मोहाई ॥ सुण० ॥ ३४ ॥ बसुरि बिंधो मृगवत भेदी ब्रनडा की

मत धात । सुभट कहे देरीहुवे स प्रभु चला उठावो मात ॥ प्रम विह्वल घरन, सुभटोकी कान घरी नहीं बात ॥ सुण० ॥ ॥ ३५ ॥ प्रीत जुड़ी दोनोंकी दखी पिता हय पित होय । परणा दीन्ही संग कुंवर के योस। नयन निधाय ॥ अवि घछम सुप्त लाडलीसरे दुःख न दखा कोय ॥सुण०॥३६॥ पिता कंठ विलगी अति रोई विश्वासी कर प्यार । तूं कुल धवी कव हुक्म में रहिजे कुल आधार ॥ कहे कुंवर से या सुत धरण क्षिण क्षिण करसा सार ॥ सुण०॥ ३७ ॥ भूपति गया निज धनमें करता आतम का उद्धार । दिल पलट्यो रुक्षमण से मिलगई विषमें सुन्दर नार ॥ रस्ता छीन्हा निज नगरी का कहे सुभट सरदार ॥ सुण० ॥ ३८ ॥ पीछा कैसे पलट पधारा रखिये कुल की लाज । रुक्षमण के मिनपमें होगा जगत फजीती आज ॥ चकनवाला बका करा कुंवर नहीं सुन अवाज ॥ ये चरित्र रसीला, सुणियो० ॥ ३९ ॥ रथमर्दनपुर बाग आविया खबर सुनी भूपाल । धनसे पदमण परम पधान्या उत्सव किया विशाल ॥ चौथमल कहे ठाठ पाटसे आया महलां चाल ॥यह च ॥४०॥

दोहा—सासू स्वसुरादिक तणो कौन विनय व्यवहार ।
सो प्यारी जाने नहीं शिव मांव आचार ॥ १ ॥

तर्ज पूर्वोक्त—अनुपम रूप प्रथम तस तनका फिर सखिया श्रृंगार । रतन जड़ित का नख शिखताई पहनाया अलंकार ॥ देखनवाला कथ नहीं सकता कवि किम पावें

पार ॥ यहच० ॥ ४१ ॥ देव दो गुंदक जैसे दोनों करता भोग विलास । कुलाचार प्रियतम वतलाया सास श्वसुर सहवास ॥षट्गुण नीति रीति सिखलाई धर्म कर्म अभ्यास ॥ यह० ॥ ४२ ॥ नूतन महल बनाविया सरे सोवन कलश चढाय । मुक्ताजाली पूतली सरे विविध चित्र चितराय । भामण के वश पड्यो भमरजी सेज छोड नहीं जाय ॥ यह० ॥ ४३ ॥ कम्बेरी नृप खवर सुनी मन उपनो बहु सन्ताप । हा ! हा ! कैसा अनर्थ वनमें परण पलटगये आप ॥ मूर्च्छित होगई रुखमणी सरे करके घोर विलाप ॥ यह० ॥ ४४ ॥ झूरन लगी नैन से धारा वरसत श्रावण मेह । तेल चढी तजि वालमा सरे धरियो वनचरी नेह ॥ पिउड़ो वशकर लेगई दुष्टन किमकर राखूं देह ॥ यह ॥ ॥४५॥ धन्य नार संसार में स पिउ साथ बसे सुख वास । धिक् २ मैं नहीं मरी बालपन डायन करी न ग्रास ॥ क्यों छोडी मा शीतलासरे भुक्तावन दुख त्राश ॥ यह ॥ ४६ ॥ किया पूर्व भव पाप अठारा किसी जीवको मारा । झूंठ उचारा कर्म ठगारा शील भंग कर डारा । जंगल जारा भ्रष्ट जमारा कर मानव भव हारा ॥ यह ॥ ४७ ॥ ज्ञानी विना कौन अब मेरा करें आज निस्तार । प्रीतम अब कैसे मिले सरे जीना जग धिक्कार ॥ सुलसां नामा योगिनी सरे चल आई तिणवार ॥ यह ॥ ४८ ॥ मंत्र तंत्र कामन उच्चाटन करती कर्म अनेक । छल कर के पूर्ण भरी सरे सुगुण मिले नहीं एक ॥ पीत वशन कर लिया कमंडल शिर सिंदूरीरेख

॥ यह ॥ ४९ ॥ दुख भरती कुँवरी का दखी पूछन लागी मात । कुंवरी पकड़ाई चरणमें सर मली पधारी मात ॥ अब तरा आधार हमारा करसी कष्ट निपात ॥ यह ॥ ५० ॥ धर मस्तक पर हाथ जोगनी पूछे कौन हवाल । मुझ वर ब्याहन आवत परणी पदमण विपिन विशाल ॥ बिन ब्याही मुझ छांडगयो इस दुख से आप निकाल ॥ यह ॥ ॥ ५१ ॥ धैर्य धार बाई मैं तेरा शीघ्र सुधारूं काम । श्रपिदत्ता से दिल पलटादूं तो सुलसां मुझ नाम ॥ चल आई रथमर्दनपुर में करवा कर्म हराम ॥ यह ॥ ५२ ॥

थाई हरचाटी सुलसां जोगिनी, दुष्कृत्य करनको ॥ टेर ॥

अन्धकार कर नगरी मांही मिरगी मार चलाई । एक मनुष्य को मार रुधिर ले श्रपिदत्ताणं जाई ॥ सतीके मुख लगा मांसकी पिण्ड पास धर आई ॥ दु० ॥ ५३ ॥ मच्यो कुलाहल पुरमें अधिका कुंवर जाग परभात । देखा रमणी मुख सोणितमय मांस पिंड सहु हाथ ॥ हुवा घोर दुख दिलमें यह क्या ? बनी भयकर बात ॥ दु० ॥५४॥ या सति ऐसी नहीं अघावे मुख चाक स्वच्छ कीन्हा । मांस पिंड एकान्त पटकदी सोगयाथा पास नगीना ॥ जाग्रत हुयें लगा रस रंगमें कुंवर भेद नहीं चीन्हा ॥दु०॥५५॥ फिर दूजी रहणी में इणविध देख हुवा मय भ्रंत । नीन्द मुक्तकर बोला हे प्रिय ! तु दीसे गुणवन्त ॥ सुख मुख खून खराबिया पुर में मानुष रोम मरंत ॥ दु० ५६ ॥ इस

लच्छन तूं हे राक्षसणी, मैं ऐसी नहीं जाणी। वचन सुनत प्रियतम का सुन्दर रोम २ कम्पाणी ॥ नैना पानी ढलक पड्यो सुध बुध तज के मुर्छाणी ॥ दु०॥५७॥ कंत सचेतन कर कहे प्यारी मत करिये दुख कोई। मैं निश्चय जाणूं पुन्यवन्ती सदा बोली अति रोई। हे प्राणेश्वर यह दुर्घटना अकस्मात किम होई ॥ दु०५८॥ बालपणे माता मरी सरे मोटी कीनी बाप। वैर विरोध किसी संग मैंने किया नहीं कछु पाप ॥ प्रबल पुण्य परताप हमारे बालेश्वर हुवे आप ॥ दु० ॥ ५९ ॥ क्यों आया संकट मुझ ऊपर जाणों श्री भगवन्त। दी धीरज पति प्रेम पोषके प्यारी रहो न चिन्त ॥ देवयोग पण तुझ मुझ मांहीं अंतर नहीं पडंत ॥ दु० ॥ ६० ॥ दुराचारिणी सुलसां नितकी ये करतूत रचावे। कुवर सदैव धोय शुद्ध करदे रखे प्रगट होजावे ॥ बिल बिलाट करते पुर वासी भूप समीपै आवे ॥ दु० ६१ ॥ कुण कोप्यो यमदूत हमेशां मानुष्य मरे अकाल। उच्चाटन करदिया नगर में शुध लीजे महिपाल। भूपत मंत्री भेज तलासी करवाई ततकाल ॥ दु० ॥६२॥ देव दोष नहीं वदे ज्योतिषी मंत्र तणा परभाव। खट दर्शन जोगी सन्यासी पड़िया बहुत पडाव ॥ घर २ पै तोफान रचावे जिनका दुष्ट स्वभाव ॥ दु० ॥ ६३ ॥ जैनमती साधू निर्दोषी शिव मारग विहरत। कंचन कंकर सम गिणे सरे जगत उदासी संत॥ ले भिक्षा निर्दोष पक्षिवत् संग्रह नहीं करन्त ॥ दु० ॥ ६४ ॥ खट काया प्रतिपाल कभी दुख देवे नहीं

किम ताई । दूजा दुष्ट भेषधारी हैं ज्यांकी प्रतीत नांहीं ॥ सुरत निकाला आंगी अगम एक न रह पुर मांहीं ॥ दु० ॥ ६५ ॥ दे द धक्का सब का काळ्या सुलसी मिली जलाल । रम्भी निकल नगरमें ईने फैलाया बजाल ॥ जटा बिखर हाथ तन नंगी सिफरी रग कर छाल ॥ दु० ॥ ६६ ॥ राज सभा में आकर बाली नरपति न्याय विचार । सबल धकी नहीं जीते सो तुम लगे निबल के लार ॥ रायकुंवर के घर राखसणी कर रही अत्याचार ॥ दु० ॥ ६७ ॥ जो तुम देखन चहो बताऊं तुम घर लागी लाय । एक रात के लिये कुंवर को अलग करो महाराय ॥ नजर देख इन्साफ करी मत धिरया किसे सवाय ॥ दु० ॥ ६८ ॥ मम्मस्वता बस राय मानली नीच रांड की बात । सन्ध्या समय बुलाय कुंवर को पास बैठायो तात ॥ हे वत्स तूं कुल दीपक मेर एकाएक अग आत ॥ दु० ॥ ६९ ॥ रात दिवस रहे महलां मांही रंग रस में गलतान । कोटवाल उमराव मुसद्दी हाकिम और दिवान ॥ तू नहीं बैठ राज्य सभा में किम होगा पहिचान ॥ दु० ॥ ७ ॥ मालगुजारी भंडारां की तुझे खबर नहीं कोय । फौज रिसाला सलतन दफतर तू नयना नहीं जोय ॥ आज हमार पास बैठक लिखो फैसला दाय ॥ दु० ॥७१॥ प्यारी में दिल टलचले सर एकल रही पर्यंक । अब किम जाऊं उठने सरे पडी पिता की शंक ॥ रख आजकी रात प्रिया के शिर पे आय कलंक ॥दु०७२॥ घोर दरद दिल कुंयर के सर जाण एक जिनम । भूतारी

योगन किया वैसा जैसा करत हमेश॥ प्रात सभामें आकर बोली देखो चिन्ह नरेश ॥ दु० ॥ ७३ ॥

रानि कनक कुंवर की, मान्या मानुष्य इण दुष्टण डायिनी ॥टेर॥

राजा और दीवान प्रोहित हाकिम भट दासी–दास । देख रुधिर आमिष सब बोले या डायिन बद-मास ॥ कनक कुंवर मूर्च्छित पड्यो सरे पिता लियो विश्वास ॥ रानि ॥ ७४ ॥ रे मूरख क्यों मुरझ रह्या तूं छाने कर्म छिपाय। भली हुई तूं कुशल रह्या को दिनजानी गटकाय॥ चिरंजीव सुलसां रहो सरे काढी दूर बलाय ॥ रानि॥७५॥ नरपत हुक्म लगाया पकडो करदो टुकडा दोय । मुश्की बान्ध पीटते जावो मद्य बजारां होय । आले कांटे लगा फूकदो शोर सुणो मत कोय ॥ रानि ॥७६॥ दास्यां मिल दागीना हरिया काढी महलां बहार । कोइ चपेटा मुष्टी मारत कोइक चरण प्रहार। कोई घसीटे भूमी तलपर मुखसे बोलत गार ॥ रानि ॥ ७७ ॥ कृष्णानन करखर बैठाई गल बिच मींगणमाल । शिर धर छोगा निम्बका सरे धूल उछालत बाल । इस भांतीकर मद्य चौहटे लेआया चंडाल ॥ रानि ॥ ७८ ॥ कोई कहे मुझ पती विनास्यो कोई कहे सतान । भुआ भतीजी प्रेम बधूका लिया प्रेतनी प्रान ॥ सतिका दुख नहीं वरनन होता, जानत श्री भगवान ॥ रानि ॥ ७९ ॥ पुरजन डरकर पीछे पलटे मैतर मसान लाया। खेंच म्यानसे खड्ग सतीको मारण काज उठाया॥ देख चमक बेसुध हो पडगई, ज्यूं मुरदेकी काया ॥ रानि ॥

॥ ८० ॥ बिनमारी मरगई सोच यूं म्यान धरी तलवार, आल काटि झोंक आग घर सिलगाई उसवार ॥ चल छूटी हुई चोरसे सेरे आंधी चली अपार ॥ रानि ॥ ८१ ॥ मगी मगगये काटि उड़गये दिया पुण्यने आर । होय सचलन देखन लागी पास नहीं कोई और ॥ निराधार फिरती फिर सर करती शोरबकोर ॥ रानि ॥ ८२ ॥ लगी पिढर घन पथ सतीकी अरण्य मतो मबकारा । कंटक अणियें चरम मिदाया, पड़त रक्तकी धारा ॥ सिंह करे गरजाव खाल नदि बहता छांड किनारा ॥ रानि ॥ ८३ ॥ पुण्य प्रभाव कष्ट सब टलिया पहुंची उस वनमांय । देखी निर्जन झोंपड़ी सेरे पिता नजर नहीं आय ॥ छाती फटनलगी रुदनकर पड़ी धराणि मसगाय ॥ रानि ॥ ८४ ॥

कहां गये पिताजी, आई दुखियारी पुत्री आपकी ॥ टेर ॥ सेंभा तरुवर देख बाथमें ठेले करे पुकार । कहां हमारा पिता बतादे मुझपर दया विचार ॥ बाप गया पर लोक रासहग देख मम्या हंकार ॥ कहां ॥८५॥ कौन पाप पूर्वमव कीन्हा हिंसा चोरी मूठ । अनाचारकर शुसकिया निन्दा कीनी परपूठ ॥ द्वेष क्लेश कर किसे तपाया, काईपे मारी मूठ ॥ कहां ॥ ८६ ॥ मदिरा मांस ग्रास कर मान्या कुमारग कल्यान । सतियां का सत्र पवित कराया दीन्हा अभ्यास्यान ॥ किस मवका जाग्रत हुआ सेरे किमआर्णू, बिनशान ॥ कहां ॥ ८७ ॥ श्री आदेश्वर वीर जिनादिक अनन्त पदी अरिहन्त । हरिपकी मण्डल पति अरु गम्र

खन्दक परमुख सन्त ॥ कृत कर्म्मों के फल सब भोगे साक्षी देत सिद्धंत ॥ कहां ॥ ८८ ॥ सिया द्रौपदी अंजना सरे मयणारेहा जग जहारी । कलावती पदमावति तारां चन्दना हुई दुख्यारी ॥ हा ! जगमें कर्मोंने किनसे राखी रिस्तेदारी ॥ कहां ॥ ८९ ॥ दिव्य रूप यौवन वय मेरी शील रखन के काज । परमेश्वर की शरण लेयके धरूं नियम ये आज ॥ अञ्जन मञ्जन उवटनासरे स्नान करण एतराज ॥ कहां ॥ ॥९०॥ शिख वेणी बान्धू नहीं सरे नविन वशन परिहार। मुख नहीं देखूं आरसी सरे भूमी शयन त्रिकार ॥ नित्य करूं नवकारसी सरे रइणी में चोविहार ॥ कहां ॥ ९१ ॥ पान सुपारी सरस साग तज सुणू नहीं रंगराग । कर पग धोऊं नहीं हमेशां रखूं मैल का दाग ॥ मुझ प्राणेश्वर मिले नही जब तक है इतना त्याग ॥ कहां ॥ ९२ ॥ फलाधार से रहत बाग में करती शील जतन्न । अवधिज्ञान कर पिता जाणियो कुंवरी कष्ट कठन्न ॥ मूल बाप के रूप आय के तुरत दिया दर्शन्न ॥ कहां ॥ ९३ ॥ हे वत्स यहां पीछी किम आई क्या हुआ हाल तुम्हारा । देख पिता को गले लिपट गई रोवत झारमजारा ॥ सुख सनमुख तुम करो मुझे पण फूटा भाग्य हमारा ॥ कहां ॥ ९४ ॥ सासू श्वसुरा दुखदिया क्या ? कन्त कष्ट में डाली । भल मानस मिले सास श्वसुर मै,घणी कंत को वाल्ही ॥ कर्मोदय सब दुश्मण होके डायिन करी निकाली ॥ कहां ॥ ९५ ॥ दिव्य रूप से दर्शन दिया बाई भय मत कर कोय । मैं करणी कर गया

स्वर्ग में आया तुझको जोय ॥ रूप पलट निज रूप बनावन
ये ले लिया दोय ॥ कहां ॥ ९६ ॥ विजय रहेगा सदैव
तेरा पती यहां चल आसी । प्रेम सहित पटराणी करसी
सौक पाय पछतासी ॥ सासरिया में सबे तरह स भाई
शाता पासी ॥ कहां ॥ ९७ ॥ देव स्वर्गमें गया सती बैठी
उस बाग मुझार । नयना जल निवारती सरे वेगो मिल
भरतार ॥ मुझ दुख है तैसा तुझ दिलमें होगा नाथ विचार
॥ कहां ॥ ९८ ॥ आप तणा कोई दोष नहीं है मेरे कर्म
का जोश । पचा कलंक से लज्जा राखी कमी किया नहीं
रोष ॥ तनका यत्न सदा करजो प्रभु भरज्या दिल संतोष
॥ ९९ ॥ सासू ससुरा सौक ननद का समझू नहीं विरोध।
कब सज्जन शुभ नजर दख मुझ बैठावेंगे गोद ॥ पुण्य मेल
पे प्राण पियुसंग किस दिन करूं विनोद ॥ कहां ॥ १०० ॥
लिया योग रूप योगी का सती किया ततकाल । आप जप
नवकार का सरे और फिकर सब टाल ॥ प्रेम लगा भाता
अब सुनिये कनक कुवर का हाल ॥ कहां ॥ १०१ ॥
सुन्दर शशि बदनी, तुझ बिन मुझ प्राण धाइंना होरहा ॥टेर॥

रात दिवस झूरे घणो सर मनिता विरह
अपार । खान पान निन्द्रा तजी सर छिण २ करत विचार ॥
ह प्यारी किस दिश गई स सू कर यनो ससार ॥ सुन्दर०
॥ १०२ ॥ मात पिता समझावे बहु विध क्यों ? पड़ियो
जंजाल । इच्छा हो जितनी परणा दूं सुन्दर रूप रसाल ॥
वचन दिया में लग कुंवर के तीक्ष्ण शरकी भाल ॥ सुन्दर०

॥ १०३ ॥ कर कारज सुलसां चली सरे पहुंची रुखमण पास। हो नाचिन्त्य कर दीया मूल से तुझ सोकड़ का नाश ॥ सुण कुंवरी सुख मानियो सरे सफल हुई मुझ आश ॥ सुन्दर ॥ १०४ ॥

ज्ञानी फरमावे, दुष्कर बश करणी जगमें मोहिनी ॥ टेर ॥

हर्ष बधाई करी नगर में भेजा दूत महीप। रथ-मर्दनपुर राज्य सभा में पहुंच्यो भूप समीप ॥ विनय करी मेली मुख आगे कम्बेरी नृप टीप ॥ ज्ञानी ॥ १०५ ॥ ऐ राजन्! मम पुत्री के संग तुमने सगपण धाम। व्याहन हित आये नहीं बैठे क्यों? लेकर विसराम। अगर परण गये और आपका होगा जग बदनाम ॥ ज्ञानी ॥ १०६ ॥ खुदही आप विचक्षण है प्रभु हम क्या कहें विशेष। तुरत भेजिये व्रात कुंवर को सज परणेतू वेष। चोथमल कहे पड़े फिकर में सुनकर हाल नरेश ॥ ज्ञानी ॥ १०७ ॥ राजा मंत्री कुंवर पास आ समझावे कर प्रीत। सासरिया का दूत आविया बड़ा घरां की रीत ॥ व्यावन काज पधारिये सरे बनी रहें परतीत ॥ ज्ञानी ॥ १०८ ॥ कुंवर उतर देवे नहीं पीछा;'ऋषिदत्ता' से ध्यान। रे मोह अन्धा कुलकी लज्जा क्यों खोवे नादान ॥ वो नारी क्या तेरा हक में करती भव कल्यान ॥ ज्ञानी ॥ १०९ ॥ दूत फेर बोला हे राजन् हा! ना! उत्तर दीजे। मोटा कुल की मांग छोंड के जग में सुयश लीजे ॥ किसी समय राजों की सभा में फिर उंचो मुंह कीजे ॥ ज्ञानी ॥ ११० ॥ लगा वचन का तीर

भूपके घोला होकर पेड । बेटा अबसा मान मुझे क्यों कर जगत में भेद ॥ जो नहीं आवे दाय परण के दीज दूरी छेद ॥ ज्ञानी ॥ १११ ॥ ज्यों त्यों करके कुंवर मनायो सन्यो मीन्द को संग्र । दे सतकार दूतको भेज्यो ते पहुंच्या निज देश ॥ चल्यो परणवा कनक कुंवर अब, पिता तणे आदेश ॥ ज्ञानी ॥ ११२ ॥

रानी लखमण को; ब्याहन अब चलिया कनक कुमार जी ॥ टेर ॥ चले २ उमराव साथ में, सेना चार प्रकार । मंगल गाती युवतियां स बहु वाजिंतर झणकार ॥ ऋषि दत्ता के बाग पास आ डेरा दीन्हा डार ॥ रानी ॥११३॥ देख बगीचा आनन्द उपनो होय तुरग असवार । कुछ सामंत संग ले अन्दर गयो कुवर सिणवार । दिव्य रूप योगी का देखी नमन कियो बारबार ॥ रानी ॥ ११४ ॥ देख सती रोमांचित होगई धन्य दिवस है आज । शुभा गमन हुआ प्राणनाथ का सभी सुधर गये काज ॥ प्रेम झरण उलटी हिरद में मिटी सकल दुख दाज ॥ रानी ॥- ११५ ॥ आओ राजन् कहां बसो तुम चले कौन से देश । सामंत भाखी सफल बात ब्याहन को चले नरेश ॥ विच में पद पंकज तुम भेट्या कटी पाप की रेश ॥रानी॥११६॥ योगी कहे तुम रहो चिरंजी; प्रसन्न करो भगवान । सदा सन्यासी सेवको सेरे जब होगा कल्यान॥सकल लोक योगी तणा सेरे करन लग वखान ॥ रानी ॥ ११७॥ पक्यो प्रेम में कुंवर उठे नहीं; तब बोल्या सुलतान । महाराजा दरी

हुवे सरे जलदी करो पयान ॥ हुई रसवती त्यार जीम लो कुंवर सुणे नहीं कान ॥ रानी ॥ ११८ ॥ सब जन दिल घबरावियां सरे वोहीज दुशमन वन्न । क्यों आया इस रस्ते हो के सोच रह्या सब मन्न ॥ कुंवर कहे तुम यहीं ले आओ मुझ कारण भोजन्न ॥रानी॥ ११९ ॥ थाल मंगाय दुभाग कुंवर कर जोगी को जीमाय । आप जीम निवृत हो बैठा अबतो चलिये राय । पण जोगी की प्रीत कुंवर से क्षिण छोड़ी नहीं जाय ॥ रानी ॥ १२० ॥ हम जोगी से प्रीत बांध तुम क्यों निज लग्न चुकावो । मैं जब जाऊं परणवा सरे तुम मेरे संग आवो ॥ नहींतर मेरे नियम व्याव का यो मुझ सच्चो दावो ॥ १२१ ॥ हम योगी तुम भोगी कैसे बने परस्पर प्यारा । आखिर हुज्जत कुंवर तजी नहीं जोगी होगये लारॉ ॥ चली बात अब कुंवर की सरे ज्यूं गंगा की धारा ॥ रानी ॥ १२२ ॥ बिचमें एक सरोवर देखी जोगी करण सिनान । जा छिपियो जल बीच कुंवर के लगा विरह का बान ॥ फिरे ढुंढतो किधर गये मम जोगी जीवन प्रान ॥ रानी ॥ १२३ ॥ पहर बाद निकला तब बनडे नमन किया हर्षाय । क्यों छिप बैठे आप बिना क्षिण अंतर नहीं खमाय । चल्या नगर कंबेरी बागमें डेरा दिया लगाय ॥ रानी ॥ १२४ ॥ खबर होत लाखों पुरवासी राज वर्ग के लोग । आय बाग में बीन्द देख कहे भलो मिल्यो संजोग ॥ धन्य भाग हे रुखमण तेरा फलिया सब मन्योग ॥ रानी ॥ १२५ ॥ जोगी कहे कुंवरसे हमतो

रहूं भाग के मांय ॥ आतम ध्यान करेंगे प्यारा तू ब्याहन
हित जाय । कुंवर कहे तुम साथ चलो; नहीं तो मैं परणूं
नाय ॥ रानी ॥ १२६ ॥ क्यों हट पकड़ विघन करता
मुझ मजन भाव के मांहि । मैं ब्रह्मचारी तू संसारी हटा
प्रीत मुझ तांहि ॥ ज्यों ज्यादा करी तीनपांच तो छोड़
चलूंगा यहांहि ॥ रानी ॥ १२७ ॥ कुंवर होय दिलगीर
नयन से छोडी आंसू धार । सब सामत सत से बोले आप
करा उपकार ॥ सग में चल परणादो स्वामी बड़पन बिरद
विचार ॥ रानी ॥ १२८ ॥ जब मैं चालू संग हमारी कहन
उलथे नाय । जैसी कहो वैसी करू सरे लोपूं नहीं महाराय॥
चले साथ सब सज्जन मिलके जोगी का गुण गाय ॥रानी
॥ १२९ ॥ तोरण बांध लिया चंवरी में साथ कर सतकार ।
बीन्द बीन्दनी हाथ मिलाया ब्राह्मण मत्र उचार ॥ विधि
से ब्याव मनाविया सर खरच्यो द्रव्य अपार ॥ रानी ॥
१३० ॥ परम सेज पधराविया सरे इन्द्र भवन दिलदार ।
सरस खाट सुवर्ण जड्यो सरे नवरंग लगी नवार ॥ काम
नहीं जोगी का अन्दर कीन्हा आसण बहार॥रानी॥१३१॥
रोम २ हर्षित हो रुक्षमण सज उत्तम शृंगार । आ बैठी
पियु पलंग पे सर वाली अमृतधार ॥ प्राणेश्वरजी भले
पधान्या प्रबल भाग्य अनुसार ॥ रानी ॥ १३२ ॥ आपि
दया परणी गया पीछा मुझ छोड़ निरधार । राक्षसनी
तुमको वश करके कैसो पटक्यो खार ॥ उन दिन से मैं
मुरझ रही हूं जानत भी किरतार ॥ रानी ॥ १३३ ॥

ऐसा उनसे आप लुभाया कैसा था तस रूप। कुंवर कहे वरणू किम उनका गुण अनमोल अनूप ॥ उन आगे तो तूं दीसत है जैसे दादुर कूप ॥ रानी ॥ १३४ ॥ लाल आंख कर बोली रुखमण विरथा करो बखाण। थी निर-बुद्धि वनचरी सरे परत्यक्ष पशू समान ॥ कला कुशल मुझ सम को जगमें लखो नाथ धर ध्यान ॥रानी॥१३५॥ सुलसां योगन वशकर भेजी तुम नगरी के मांय। रुधिर लगा पदमनि के मुख डायिन का दोष चढ़ाय ॥ सौक साल निर्मूल किया मैं ऐसी कला चलाय॥रानी॥१३६॥

जो सब सुख चाहो, पालो शुद्ध मनसे बुधजन शीलको ॥टेर॥

नाथ आप बहु जतन किया पण चला नहीं कछु-जोर। आखिर आया मुझ परणवा बान्ध शीशपर मौर। कौन कलाकी सागर जगमें मेरे जैसी और॥जो०॥१३७॥ सुनत कुंवर के जगी हियेमें घोर कोपकी ज्वाल। रे हत्यारी किया अकारज देकर झूंठा आल ॥ खेंच खडग उठ्यो रंडी तुझ करदूं आज हलाल ॥ जो सब ॥ १३८ ॥ कुंवरी हल्लो कियो सुनत योगी बोला ततकाल। क्या अकाज करता मुझ आगे तेरा वचन संभाल ॥ हे क्या जुल्म दोडकर आया कम्बेरी भूपाल ॥ जो सब ॥ १३९ ॥ तुम पुत्री निरभागिनी सरे किया घोर अन्याय। चिन्तामणि सम मुझ रानीको इण दीन्ही मरवाय ॥ अभी कटारी खायमरूं मैं हिरगिज जीऊं नांय ॥ जो० ॥ १४० ॥ निज पुत्रीको

माय बाप धिक्कारन लग्या अपार ॥ हाय जोश कहे कुंवर से सरे आप कहे सरदार ॥ बीती बात विसारिये सरे हम पर क्षमा विचार ॥ जो० ॥ १४१ ॥ योगी बोला तिरिया कारण, क्यों ? मरता महाराय । तूं दिलखाय मरगई नारी पण जीवित दखाय ॥ मुझ ज्ञानसे मालूम होता तुम मिलेगा आय ॥ जो० ॥ १४२ ॥ कौन स्थान सुन्दर बसे सरे बतलावो योगीश । अब धतन धीरप नहीं धरता वचन करो बक्सीश ॥ योगी कहे इकठोर रहे मा भजन करे निशिदीस ॥ जो० ॥ १४३ ॥ शीलवती निर्मल घणीसरे महिमा बढी अपार । जो मुझको तूं मिलाकरे तो दिखलाई इनवार ॥ तुमको जूदा किम करू स मुझ उपजे कष्ट कार ॥ जो० ॥ १४४ ॥ हमको अलग किये बिन तुमको मिले नहीं वो नार । कुंवर मौन कर रहा सही सब सधमुध प्रेम निहार ॥ जा एकान्त सुमर विधा बनगई सची आकार ॥ जो० ॥ १४५ ॥ तनपर भूषण विविध अलकृत रमझम करती आई । प्रियतम के पग लगी सुन्दरी, कुंवर दख विषदाई ॥ प्रेमानन्द से हियो उमगियो चिन्ता सब मिटाइ ॥ जो०॥१४६॥ मनकी सब इच्छा फलीसर बरस्या जय जयकार । थे मुझको न्वजीवन दीन्हा, धन पुन्यवती नार ॥ योगीका पण भूलगया रुलमल से छूटो प्यार । जा० ॥१४७॥ कम्मरी रूप दख हुवो हिरद में अधिक उमंग । धन्य सखी सपकी पण राखी माची शील सुरंग ॥ सुर फूलोंकी वृष्टी कीन्ही महिमा बाल उतग ॥ जा० ॥

॥ १४८ ॥ शीलथकी सुरवर नमे सरे सागर देवे थाग । शीले सर्प पुष्प की माला शीले शीतल आग । शीले अरि करि केसरी सरे भय जावे सब भाग ॥ जो० ॥१४९॥ सुलसां पे कोपित हो राजा पकड़ाई ततकाल । कान नाक छेदनकर काढ़ी पुरसे बुरे हवाल ॥ सतियां के शिर दोष दिया तो ऐसा मिलसी माल ॥ जो० ॥१५० ॥ ऋषिदत्ता के संग कुंवरजी करता लील विलास । प्राणनाथ हिरदे मे धरिये दासीकी अरदास ॥ मुझसे अधिक समझ रुखमण को करिये नहीं निराश ॥ जो सब सुख चाहो० ॥१५१॥ कंत कहे या दुशमण तेरी सब अनरथ की मूल । दिल टूटो कैसे मिलेस तूं सोच न्याय के रूल ॥ अवही से नव प्रेम मिलाओ गई बात सब भूल ॥ जो० ॥ १५२ ॥ ऋषिदत्ता की कहन मान रुखमण से कीन्हो प्यार । माय बाप कहे पुत्री तेरा सुधरगया सब कार॥ इन दोनों की दास होयके रहिजे कुल व्यवहार ॥ जो० ॥१५३॥ विदा होनकी सीख श्वसुर से मांगी कनक कुंमार । भूपति खंच करी घणीसरे मानी नहीं मनुहार ॥ गज घोडा चेटक चेटी दिया धन कंचन भंडार ॥ जो० ॥ १५४ ॥ सीमा तक पहुंचाय पिता पुत्री को गोध बिठाय । दी इम सीख सास नणदी के सदा लागजे पांय ॥ लज्जा क्षमा नम्रता निर्मद मिष्ट वचन सुखदाय ॥ जो० ॥१५५॥ कष्ट पडे कुलरीत तजे मत देव-धार अरहन्त । धर्म केवली प्ररूपीत कीजे गुरु निर्लोभी संत ॥ करजे पठन सिद्धान्त तणा यूं दोनों भव सुधरन्त ॥ जो० ॥

॥१५६॥ कहे कुंवरस आप विचक्षण, या बालक कहवाय। पछे पटकी नाथ आपके लीजो राज निभाय॥ भूप गया पीछा कम्मेरी दो आंसू छटकाय ॥ जो० ॥१५७॥ चली चर्णाई श्रपीबाग के पास किया अस्थान । निरख हरख हो सुखस आया निज नगरी उद्यान ॥ सुण राजेश्वर सनमुख आया घर मोट मदान ॥ जो० ॥१५८॥ सिनगारी नगरी बहु मांती भर २ तोरण ताण । किया शहरपर वेश्र सखी गण गाती राग रसाण॥ दो नारी का जलूस दखी मुख२ करे बखाण ॥ जो० ॥१५९॥ आय महलमें बावन जनकी पूरण करी जगीश । सुलसा का करतूत श्रवणकर बधुको देख महीश॥ हाथजोड़ कह तूं कुलवन्ती कर कसूर बकसीश ॥ जो० ॥ १६० ॥ मैं हूं पुत्री तुल्य आपहो मेरे पिता समान। किया भवान्तर कर्म जीवने सो भुगत्या म्होंजान॥ पीछी जगमें उज्वल करदी यो मोटो अहसान ॥ जो० ॥ ॥ १६१ ॥ सबही कीर्तन करनेलागा धन्यसती गुणवन्त। अवगुण तज गुण ग्रहण किया तुम सेम्मां पाप झड़न्त ॥ परम प्रीत से रहे दम्पती नाटक सदा पढ़त ॥ मा० ॥ ॥ १६२ ॥ धर्मघोषसूरीश्वर आया संग संत महंत पंथ । तीनकाल के ज्ञात तप संयम के गुणकर टंच ॥ भूपत हर्षित होकर भेट्या पच अभिगम संच ॥ जो० ॥ १६३ ॥ दिया धर्म उपदेश मुनिश्वर यह संसार असार । मात पिता भगिनी सुत नाता किया अनंतीवार ॥ जिन भाषित सत धर्म बिना रुलिया चौगति मंझार ॥ जो० ॥१६४ ॥ सुन

उपदेश हेमरथ राजा राज कनक को दीन्हा। ले योगारम्भ दुष्कर तपकर कर्म पडल क्षय कीना॥अनुत्तर केवल लच्छी लेकर शिवपुर का सुख लीन्हा ॥ जो० ॥ १६५ ॥ कनक नरेश प्रजाको पाले न्यायवन्त सुखकार। ऋषिदत्ता के पुत्र हुआ इक सिंहरथ तेज दिदार ॥ एक समय रवि अस्त देख वैराग्य जग्यो उसवार ॥ जो० ॥ १६६ ॥ धर्म-विजय मुनि आये वागमें कर वन्दन सुन बानी। पूर्व भवकी पूछन लागी तब ऋषिदत्ता रानी ॥ राक्षसणी का दोप चढ़ा मुझ ज्ञानी के क्या छानी ॥ जो० ॥ १६७ ॥ इसी भरत में नगर गंगपुर गंगदेव नरपाल। गंगारानी की एक पुत्री गंगसेना सुखमाल॥ भरयौवन में शीलव्रत ले तजा भोग जंजाल ॥ जो० ॥ १६८ ॥ संगम नामा एक साधवी नीवी करत हमेश। मुख २ महिमा फैली जिनकी थें सुण कीन्हा द्वेष॥ राते मांस खाय राक्षसणी धरी दोषकी रेश॥ जो सबसुख चाहो ॥ १६९ ॥ लोक सुणी राक्षसणी थापी निन्दाहुई अपार। खुश हो कर्म निकाश्चित बान्ध्यो रंज न कियो लगार॥ भव रुलती नृप हरीषेण घर आय लियो अवतार ॥ जो० ॥१७०॥ सुवावड़में माता मरी सरे पिता पालना कीन्ही। वन फल खा मोटीहुई स फिर कनक कुंवर को दीन्ही॥ शीलधर्म धारण से यहांपर सुख सामग्री लीन्ही ॥ जो० ॥ १७१ ॥ राक्षसणी का छन्द चढ़ाया सो फल लीन्हा आप। कोडयत्न छुटे नहीं स विन भुगतायें कृतपाप ॥ सुण हुआ जाती ज्ञान सतीको सत्य किया

इन्साफ ॥ जो० ॥१७२॥ देई पुत्रको राज्य दम्पती लिया योग परखंत । केवल ल मुक्ती गयासेरे पाया सुख अनंत ॥ शीतलनाथ प्रभू शासनमें यह चरत्यो चिरतंत ॥ जा० ॥ ॥ १७३ ॥ किया चरित निर्मित बालकवत् लई ग्रन्थ आधार ॥ कम ज्यादा का मिथ्या दुकृत यह छद्मस्त विचार ॥ पूज्य शिरोमणि धर्मदास तम नाश करण दिनकार ॥ जो० ॥ १७४ ॥ पूज्य एकलिंगदास गुरुकी है मेवाड में धाम । " चौथमल " के बसे हियेमें सदा आपका नाम ॥ ब्यांसी के फागुण में आय सदर शहर रतलाम ॥ अजी जो सब सुख चाहो, पालो सुचमनसे शुभ जन शीलका ॥ १७५ ॥ इति मदम्-श्राम् ॥

इति श्री कपिवृत्ता चरित्र
सम्पूर्णम् ।

अथ श्रीमति 'पद्मनी' का आदर्श

तर्ज—ना छेडो गाली दूगोर, भरने दो मुझे नीर।

वोही सत्यवन्ती नारीरे; सत्य राखे तजे प्राण॥टेर॥ चितौडगढ का राना; श्रीरत्नसिंह कहलाना। सूरजवंशी प्रगटानारे; सत्य राखे० ॥ १ ॥ जिनके घर पद्मिनी रानी; अति शीलरूप गुण खानी। जगमें महिमा फैलानीरे; सत्य० ॥ २ ॥ अल्लाउद्दीन अति तीखा; था बादशाह दिल्ली का। तिन सुना रूप पद्मिनीकारे॥ सत्य ॥३॥ वो ले निज लशकर चढिया; रानाजी से आ भिडिया। कर कपट जाल पकडियारे ॥ सत्य ॥ ४ ॥ दिल्ली में कैद कराया; यह भेद पद्मिनी पाया। तब शूरापन चढ आयारे ॥ सत्य- ॥ ५ ॥ लेइ साढा तीनसो नारी; सब वेष पुरुषका धारी। रानाको लाई निकारीरे ॥ सत्य ॥ ६ ॥ जब आया चाल दुबारा; रानाको दगा कर मारा। लिया जान भेद सति सारारे ॥ सत्य ॥ ७ ॥ सति पति का शीश मंगाया; अगनी का कुण्ड रचाया। खडी होके वाक्य सुनायारे सत्य० ॥ ८ ॥ ऐ अग्नी देव सुन बानी; हम हिन्दू कन्या कहानी। इन दुष्ट अनीति ठानीरे ॥ सत्य० ॥ ९ ॥ नहीं तोडॉ शील की वरती। दुष्कृत्य नहीं आचरती। यह तन अरपन तुझ करतीरे ॥ सत्य ॥ १० ॥ अतिघोर धकंती ज्वाला; सति कूदपडी ततकाला। संग साढातीन सो बालारे ॥ सत्य ॥ ११ ॥ यों सतियां शील बचाया; तुम

मुनियो मार्या भार्या । मानुष्य भव दुर्लभ पायारे ॥ सत्य ॥ १२ ॥ पूज्य एकलिंगदास गुरु खासा; फली चौथ मल की आशा । किया मांडलगढ चौमासारे ॥ सत्य ॥ ॥ १३ ॥ इति मद्रम् ॥

अथ श्री 'घेवरिया' मुनिराज का वर्णन

तर्ज—ख्यालकी:—

मुनिवर घेवरिया, भावम बराकर शिवलोक सिधाविया ।टेर॥

राजगृही नगरी में वसता; भावक श्रीपति नाम । 'सुखदत्त' क्षत्रिय तिण घर रसिया इलधर खेडन काम हो मुनि० ॥ १ ॥ भाग्य योग तपवन्त मुनिश्वर गोचरी कारण पधारे । रोम २ भावक हुलसायो सुलगये भाग्य हमारे हो मुनि ॥ २ ॥ घेवर एक लग्यो बहरावन अर्ज करे मुनि केवे । खेडुत देख विचार करत यो क्यों ये नहीं लेवे हो मुनि ॥ ३ ॥ रात दिवस में तन तोई पण मुझको देवे नांय । ये क्या लागे इन शाहजी के अपरन स बहराय ॥ मुनि ॥ ४ ॥ पूरण बालदियो पावर में मुनिवर स्थानक आवे । पीछे खेडुत आय मुनिंद का विनय करी बतलावे ॥ मुनि० ॥ ५ ॥ भावे जितना आप लीजिए पछे सो हमको दीजे । साधू विन हुस मिले नहीं लेना तो योग

ले लीजे ॥ मुनि ॥ ६ ॥ खेडुत के मन घेवर वसियो आज्ञा सेठ की लीन्ही । धर उमेद गुरुपास आविया मुनिवर दीक्षा दीन्ही ॥ मुनि ॥ ७ ॥ घेवर दीन्हा गुरुदेव नित उत्तम आहार खिलावे । सूत्र भणावे रहस्य वतावे घटमें ज्ञान जचावे ॥ मुनि ॥ ८ ॥ रसाशक्त को मुक्त मिले नहीं सीखत चढ्यो वैराग । गुरुमुख से लिया याव जीव तक सर्व विगय का त्याग ॥ मुनि ॥ ९ ॥ जम्बुक जिम योगारंभ लीना पाल्या सिंह समान । कर्म खपाय गया शिवपुर में हुआ सिद्ध भगवान ॥ मुनि ॥ १० ॥ पुज्य एकलिंगदास गुरूजी दिया हुकम परकाश । चौथमल किया साल गुण-यासी लाखोला चौमास ॥ मुनिवर ॥ ११ ॥ शम् ॥

उपदेशी–फटको ।

तर्ज–सीता हे सतवन्ती नार सदा गुण गावनारे—

बलिहारीहो श्रावकजी थांका गामकी हो । साधू आया पण फुरसत नहिं शुभे और स्यामकी हो ॥ टेर ॥

थेंतो घर धन्धा में लागा; दर्शन करने की नहीं मागा । वखान सुनना तो रह्या आघा; फसिया जगत जालमें नहीं अधघडी विसरामकी हो ॥ बलि० ॥ १ ॥ होत प्रभात सजाया घोडा । देवे गामडियां में दोडा । फिर कहे साधु श्रावक का जोडा; वाह वा भली मिलाई जोडी हो —

नामकी हो ॥ बलि० ॥ २ ॥ मोटा गाँव देख मुनि आया सभर सुनसी भामो वाया। करसी पौशा दया समाया; पिम यहां दीख नहीं कुछ रीत श्रेष्ठ परिणामकी हो ॥ बलि० ॥ ३ ॥ नोंवा पांच कोस का आवे; झटपट घोड़ा ऊंट सजावे छोटा मोटा सब मिल आवे; या यहां धर्म काम में क्यों ? हुई नीत हरामकी हो ॥ बलि० ॥ ४ ॥ दर्शन करण दिसावर जावे; यहां बहु भक्ती भ्रम जनावे। जो मुनि कभी चाल यहां आवे; तो मुख भी न दिखावे या भक्ती किस कामकी हो ॥ बलि ॥ ५ ॥ कोईक आवत पेगा मोड़ा; किसीने किया कौल भी तोड़ा। हुआ पर्यूषण समा नक छोड़ा; साधू फेरो ठकर माला राधेश्यामकी हो॥बलि ॥ ६ ॥ तूतो श्रावक वाजे माजी; मागे कर २ बहानाबाजी। ऐसे संत हुवे किम राजी; मैंतो देखी बुगला भक्ती आज तमाम की हो ॥ बलि ॥ ७ ॥ जुगता शादी कर पोमावे; शक्कर सो सो मण गलवावे। विरथा धनमें आग लगावे; जीवदया के कारण कोड्या नहीं छदामको हो ॥ बलि० ॥ ८ ॥ वीत्या जनम इसीमें सारो; अबतो आतम काज सुधारो। जासे सुख स स्वर्ग पधारो; चौथमल समय देख या चौंटी छेन मदामकी हो ॥ बलि ॥ ९ ॥ इति ॥

पाक्षिक पर्व-जिन कीर्तन.

तर्ज-ख्यालकी

इण पखीपर्वका, करिये शुद्ध मनसे क्षमत क्षमावणा ॥ टेर ॥

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन जयवन्ता जिनराज । सुमति पद्म सुपार्श्व चन्द्रप्रभ जगजल तारण जहाज हो, इण० ॥ १ ॥ सुविधि शीतल श्रेयांस वासुपुज्य वासव-पूज्य जिनेश । विमल अनन्त धर्म शान्तिजी शान्ति करण हमेश; ॥ इण ॥२॥ कुंथु अर मल्लि मुनि सुव्रतजी भानसमान महान । नमि नेमि पार्श्व शासनपति भगवंत श्री वर्द्धमान हो; इण० ॥ ३ ॥ अतीत काल अरिहन्त अनन्ता पाया अविचलराज । विहरमान महाविदेह क्षेत्रमें बीस विचरता आज हो; ॥ इण ॥ ४ ॥ सबका जाप साफ दिल करके पाप मेल झटकाओ । मैत्री भाव सब जीव साथ कर वैर विरोध मिटाओ ॥ इण ॥५॥ महापुण्य से मिला जैन कुल; रखो सुभाव प्रमोद । साल चौरासी चौथमलजी किया चौमासा कोदहो; ॥ इण पखी पर्वका, ॥६॥ इतिभद्रम् ॥

सूचना.

इस पुस्तक का उघाड मुह व रात्रनी के आगे तथा वाजिन्त्रों की तान पर पढने की सख्त मनाई है।

इस पुस्तक की आवश्यकता हो तो सिर्फ दो पैसे का टिकट भजकर निम्न पते से मंगवालें।

बगतावरमल नारमल पो० अजड़ (बडवानी)
Po. Anjar Barwani C I

इन्हीं मुनि श्रीजी कृत "हंस वत्स चारित्र" इसी तर्जमें एक रुपये की ७ प्रति नीचेके पतेपर मिलती है।

सेठ गुलाबचन्दजी दीपचन्दजी राठोड मु०रायपुर स्टेशन पंचपहाड (होल्कर राज्य) Raipur

ओसवाल जुहारमल मिश्रीलाल पालरेचा
के
जैनबन्धु प्रिंटिंग प्रेस पीपलीबाजार इन्दौर में छपा

श्री श्री १००८ श्री

अमोलकऋषिजी

का

जीवन-चरित्र

(पद्यमय)

लेखक और प्रकाशकः-

धर्मपाल मेहता

मिलने का पताः-

धर्मपाल मेहता

श्री जैन गुरुकुल ब्यावर.

प्रथमावृत्ति १०००

मूल्य पांच पैसे

वीर सं २४६४
वि स. १९९४

अमोलकऋषिजी

का

जीवन चरित्र.

——:०:——

तर्ज़—राधेश्याम रामायण.

प्रशस्त शुभ्र मरु-भूमि मेडता, नगर सुरमणीक अरु राजित ।
धर्म-दीप 'कस्तूर' सेठ यश, परिमल से थे अति भ्राजित ॥१॥
श्रीमन्त आर्यकुल भूषण थे, श्वेताम्बर मूरत पूजक थे ।
शुभ्र मालवा प्रांत 'आसटे', में निवास को उत्सुक थे ॥२॥
सरल, शुद्ध, शम, सम्यक्तवी, श्री स्वर्ग सिधार हुए नामी ।
ज्येष्ठ पुत्र, मध्यम सुत पत्नी, बने आपके अनुगामी ॥३॥
विकराल काल गति देख मोह तज, दीक्षित हो जबराबाई ।
धर्म सहचरी पूर्णतया व्रत पाल, अमर सद्गति पाई ॥४॥
प्रतिमा पूजन, प्रतिक्रमण रत, परपरा गत व्रत प्रतिपाल ।
केवल 'केवल' व्यथा व्यथित हो, किया प्रयाण ततः भोपाल ॥५॥
परिवर्तित जीवन में श्री के, हुए अनेकों परिवर्तन ।
आधि व्याधि से मुक्त बनूं मैं, प्रतिक्षण रखते यही रटन ॥६॥
हुआ आगमन तत्क्षण शुभ ऋषि, 'कुँवर' एकांतर धारक का ।
करते शतशः अमियपान जन, मृदुल, स्वल्प संभापक का ॥७॥

पित्र साधु अवस्था लख कर, पूर्ण विराग हुआ तत्काल।
श्री 'अमोल' दस वर्ष आयु मे, बने साधु षटकाय कृपाल ॥२१॥
'दैना' ऋषि के बने सुशिष्य अरु, समझा जैनागम का तत्व।
स्वल्पकाल मे 'पूज्य' तथा 'गुरु', वर्य किन्तु पाया पचत्व ॥२२॥
यावत श्री 'केवल' ने एकल, विचरण 'श्री' से नहीं किया।
तावत् पूज्य पिता आज्ञारत, ज्ञानाराधन ध्यान दिया ॥२३॥
तत्पश्चात् रहे श्रीजी ऋषि, 'भेरु' स्वामी के आश्रय मे।
प्रथम शिष्य बने श्री 'पन्ना', अष्टादश की लघुवय मे ॥२४॥
मार्ग शीर्ष में 'रत्न' स्वामि के, हुए विवेकी सहचारी।
शास्त्राभ्यास कराया श्री को, योग्य पात्र लख सद्चारी ॥२५॥
ततः विवेकी, सुखप्रद 'मोती' बने, आपके शिष्य महान्।
किन्तु दैव वश ववई मे ही हुआ आप का तन अवसान ॥२६॥
'घोड' नदी के चातुर्मास में, हुआ ज्ञान का दिव्य प्रकाश।
पूर्ण तथा प्रारम्भ किया था, तब ही श्री ने 'तत्व प्रकाश' ॥२७॥
वृद्धावस्था अलख पिता की, सेवा मे सलग्न हुये।
हनुमान गली बवई में श्री सह, पितृ सन्त प्रविष्ट हुये ॥२८॥
ततः 'रत्नचिन्तामणि' मण्डल, किया तत्र श्री स्थापित।
'जैना मूल्य सुधा' पुस्तक भी, पद्य बद्ध की परकाशित ॥२९॥
कार्य अर्थ सुश्रावक 'पन्ना', मिले सफल माना जीवन।
आवागमन अभाव सन्त का, हृदय विदारक है क्षणक्षण ॥३०॥
अतः हैदराबाद नगर में, चतुर्मास अत्यावश्यक।
श्रवण करेगी सदुपदेश को, परिषद् जैनागम विषयक ॥३१॥
चतुर्मास के पूर्व दिवस प्रस्थान, किया हैदर आबाद।
'इंगित प्रतिएं 'धर्मतत्व' वित, रण कर गये औरंगाबाद ॥३२॥
मध्य राह में शीत-उष्ण श्री, सहे धीर बन कर परिषह।
चैत्र शुक्ल प्रतिपदा 'हैदरा', पहुच गए श्री सन्तोसह ॥३३॥

सदुपदेश का लाभ उठाने, गये निज जन साधारण।
स्याद्वाद के गहन रहस्यों का, सुन उत्तम प्रतिपादन॥३४॥
तत्प्रभाव स्वरूप अनेकों बने अजैनी दृढ़ जैनी।
शिथिल बने थे धर्मी सच्चे, मान विहीन हुए मानी॥३५॥
धर्म-प्रभावक, दानी श्रावक, 'रायबहादुर' से भूषित।
थे 'सुखदेव' सहाय अरु,'ज्वाला' काम क्रोध से निर्दोषित॥३६॥
शास्त्र प्रवीणा सुखप्रदायक व्रत स्कन्धों की पालक।
'गुलाब श्राविका' रत्न बनी दुष्कर तपनिधि की धारक॥३७॥
पुण्यरत्न थे जैन जाति के सुख सम्पत्ति करने वाले।
श्रीपद—पंकज सदा रत थे कर्मशत्रु हनने वाले॥३८॥
तदनन्तर ऋतु ग्रीष्म निमित्त किया वहीं भी ज्ञानालोक।
यदा 'मुन्ना ऋषि 'केवल' के शुभ शिष्य सिधार गये सुरलोक॥३९॥
तथा तपस्वी 'केवल' श्री जी, प्रसिद्ध हुये दारुण दुःख से।
अतः हुये सब चतुर्मास अरु, शक्यत जीव रहे सुख से॥४०॥
तथा अमोल अमूल्य समय में जिसमें उनको श्री सद् ग्रन्थ।
'ज्वाला श्री'ने कृपा अमूल्य चित रचा अरु दिखा दिया सद्पन्थ॥४१॥
श्रावण कृष्णा तेरस 'कवल', अगमन तारा लुप्त हुआ।
क्षीण देह के क्षीण नयन से वह तो बिलकुल गुप्त हुआ॥४२॥
देवलोक पश्चात् एक दम, किये पांच ने दीक्षा भाव।
जिनका संयम उत्सव 'ज्वाला' कर भव पार करी निज नाव॥४३॥
नव दीक्षित मुनि बने तीन ही त्यागी मोह- रोष मद काम।
'देव' 'उदय' अरु राजऋषिजी क्रमशः रखे गये थे नाम॥४४॥
विकट पन्थ का ग्रीष्म समय में बहुत कठिन था अतिक्रमण।
अतः सिकन्दराबाद संघ को चतुर्मास का दिया वचन॥४५॥
चातुर्मास में लाला श्री 'सुख', श्री से करके विनय अपार।
अर्थ मातृभाषा में दीने, करके किया आगमोद्धार॥४६॥

तीन वर्ष—पर्यन्त एक टक, किया अमोलक ने आहार।
सद्व्यय कर 'ज्वाला' ने छपवा, नाम रखा 'आगम भण्डार' ॥४७॥
इसी मध्य मे 'मोहन' ऋषि को, दीक्षा दी लख कर शुभ पात्र।
न्याय काव्य, व्याकरण कोप, कण्ठाग्र किये थे श्री ने शास्त्र ॥४८॥
किन्तु तपस्वी 'देव ऋषी' अरु, 'मोहन' स्वर्ग गए जग तात।
लाला 'सुख' भी स्वर्गारोहन, कर गए हुआ वज्र आघात ॥४९॥
शास्त्र कार्य को पूर्ण किया श्री, शुभ बल पा शुभ हस्त कमल।
विनय विनम्र करी सुश्रावक, ज्ञाता सब विधि श्रेष्ठ 'नवल' ॥५०॥
कर स्वीकार विनय जलदी, प्रस्थान किया श्री 'यादगिरी'।
कर्नाटक मे विचरण करते, जन मन की सब भ्रांति हरी ॥५१॥
कीर्ति चन्द्रिका तुल्य प्रसारित, थी जगतीतल मे चहुँ ओर।
इस प्रकार श्री विचरण करते, शुभागमन किया बंगलोर ॥५२॥
मध्य राह मे नाना परिषह, सहते पहुँचे दे उपदेश।
पौषध शाला, विद्याशाला पुस्तक आलय कर निर्देश ॥५३॥
'गौश्त' 'इरन' म्लेच्छों से श्री ने, नियम कराया हिंसा का।
धर्मोन्ननि का झंडा श्री का, लहरा सत्य, अहिंसा का ॥५४॥
'अमी' ऋषी के राजकोट से, आए तत्र नवीन विचार।
सम्प्रदाय को उन्नत करके, तदनन्तर तुम करो विहार ॥५५॥
'रत्न' ऋषीजी ने भी श्री को, सद् उपदेश दिया मन का।
अतः ज्येष्ठ मुनिवृन्द उल्लघन, नहीं किया श्री आज्ञा का ॥५६॥
सघ विनय अस्वीकृत कर श्री, महाराष्ट्र मे किया प्रयाण।
'सूरज' 'धोका' 'ज्वाला' आए, जीवित जिनसमाज के प्राण ॥५७॥
वीर जयति मना सोलापुर, त्वरित पधारे करमाले।
स्वागतार्थ पताकाऐं जन, लगा हर्ष जय ध्वनि बोले ॥५८॥
मधुर भाष, शान्तयादि गुणों से, हुऐ विनोदित सब ही जन।
चतुर्मास की स्वीकृति हित भी, हुऐ विनीत सभी के मन ॥५९॥

ततः पधारे घिरमगांव श्री दर्शनार्थ आये 'ज्वाला' ।
पारवई को दान दिया शुभ, नाम अमर तिम कर डाला ॥६०॥
श्री प्रताप कर मास में थी सदुपदेश मधुर प्याला ।
जन उद्धार हो सुना त्वरित ही, 'वर्द्धमान विद्याशाला ॥६१॥
तदनन्तर श्री ऋषिगण हित, संगठन शीघ्र ही ध्यान दिया ।
अथ 'रत्न' मुनि विरत' अमोलक, ग्राम सेढ़ प्रस्थान किया ॥६२॥
'अरणा' ग्राम श्री संघ स्वामि का, शुभागमन मंगल जाना ।
रंभा 'रत्न' कंवर सह सतिगण, दर्शन कर हित सुख माना ॥६३॥
कड़े ग्राम में ज्ञान बढ़ा प्रस्थान किया श्री चींचोड़ी ।
यतः 'राम' सति अत्युत्कंठ, दर्शन इच्छुक थी श्री जोड़ी ॥६४॥
कुड ग्राम में भानुजी को कीने शीघ्र किया दीक्षित ।
जिनका ऋषि 'कल्याण' तदनन्तर रखा नाम शुभ संस्कारित ॥६५॥
तत्पश्चात सिधारे 'मीरी' हुई अत्यधिक हर्षाई ।
शुभ वेला में दीक्षा अंगीकार करी आमरथाई ॥६६॥
अमी वचन अनुसार साधु सब गये शीघ्र नगर अहमद ।
हुआ विपक्ष सम्मेलन तत्रापि पद स्थ प सब गत मद ॥६७॥
घोड़ नदी का चातुर्मास कर, मीरी तरफ विहार किया ।
तत्र गृहस्थ सुखलाल सेठ को, श्री ने दीक्षा दान दिया ॥६८॥
तदन्तर पूना-संघ विनय स्वीकृत कर चिचवड़ गांव गये ।
'चौथ' 'रत्न' ऋषि दीक्षित ऋषि क, शिष्य आये नेभाय लिये॥६९॥
समुचित धाम दिया भविजन ने आगम पावन श्रवण किया ।
'राजकंवरजी का चौमासा मीठा पूना नगर हुआ ॥७०॥
चतुर्मास पश्चात् पूज्य ने किया आगमन घोड़ नदी ।
राहोरी स कोपर आए, दीक्षा आर्यिकाओं कोदी ॥७१॥
पुन गांव में सुना तत्पर अति संकट में है रामकंवर ।
रंभा कंवर मदद से उनको कोपर ले आये सत्वर ॥७२॥

रोग असाध्य समझ सथारा, श्री ने उनको दिला दिया।
अमर आत्मा किन्तु देह तज, सीधा स्वर्ग सुमार्ग गया ॥७२॥
तत्पश्चात पधारे श्री जी, "रंभा जी" भी मनमाडे।
चतुर्मास भी यहीं हुआ अरु, शतशः जीव गए तारे ॥७३॥
चतुर्मास पश्चात धूलिया, श्री ने शीघ्र विहार किया।
हुए राज ऋषि चक्षु विहीना, अतः अत्र चौमास हुआ ॥७४॥
फागुन कृष्णा एकादश को, राज ऋषी जी स्वर्ग गए।
निर्वाणोत्सव किया 'हेम' ने, वेही तो कृतकृत्य हुए ॥७५॥
तदनन्तर श्री गए 'कांगरो', किन्तु रहे श्री जी एकल।
वैमनस्य के कारण सबही, सन्त अत्यधिक थे बेकल ॥७६॥
धुलिया नगर निवासी गण ने, सुना हाल जब यह सारा।
अत्याग्रह है करो सुपावन, धुलिया सघ अति दुखियारा॥७७॥
ततः पूज्य ने बन पर्वत में, तपाचरण अभिलाषा की।
सानुरोध था श्रावक गण का, अत तपस्या आशा की ॥७८॥
घोर तपस्या के कारण श्री, नेत्र रोग से ग्रसित हुए।
श्रावक सङ्घ विनय से स्वामी, औषध में संलग्न हुए ॥७९॥
चतुर्मास भी हुआ धूलिया, ज्ञान लता थी विकसाई।
माघ मास 'सायर' सन्मुख जी, दीक्षा पद्मकँवर बाई ॥ ८० ॥
तीन साधु जो वियुक्त हुए थे, सन्मति पाकर हुए कृतार्थ।
अति आग्रह से किया सम्मिलित, समझाया इसका सत्यार्थ ॥८१॥
तृतीय हुआ चौमास अत्रही, उपदेशामृत पान किया।
जगवय भ्राता सेठ 'अमी' ने, शाला मे अतिदान दिया ॥८२॥
हैदराबाद निवासी 'जमना', 'राम' कीमती भी आए।
व्रतस्कन्ध ले ब्रह्मचर्य का, रामलाल जी हर्षाये ॥८३॥
'जैन तत्व प्रकाश' थोकडे, छपा अमूल्य वितरण करदी।
वस्त्रादान दिया, दुखियों की, सारी पीर तुरत हरदी ॥८४॥

रामावत श्री रूप 'अवादर' दर्शनार्थ आए सकुटुम्ब ।
दान तपस्या कर के दानी पुनः लौट आए सकुटुम्ब ॥८५॥
इन्हीं दिनों में दो वैरागी, दीक्षित हुए अमोलक पास ।
शांति ऋषि जयवन्त ऋषि, संस्कारित व शुभनाम प्रकाश ॥८६॥
कियत् काल पश्चात् घोषणा, हुई साधु सम्मेलन की ।
कॉन्फ्रेन्स ने करी घोषणा नियुक्ति पूज्य कर देने की ॥८७॥
दक्षिण प्रान्त सन्तों का था, सम्मेलन अति ही आवश्यक ।
अतः सेठ श्री 'किशन' तथा 'मोती' मूथा थे बने निवेदक ॥८८॥
उक्त काल से पूर्व तपस्वी, 'राज' 'देव' ऋषि 'मोहन' ने ।
निश्चय किया था पूज्य बनाना श्री अमोल को दुख दलने ॥८९॥
पंडित रत्नानन्द ऋषी जी, सन्निकट थे पहुँच गए ।
साधु-समाचारी के इकसठ, नियम तुरन्त बनाए गए ॥९०॥
उत्सव पूज्य पदवी का होना कहाँ समस्या हुआ प्रतीप ।
अत सेठ सौभाग्य तथा 'सरदार', गए श्री 'देव' समीप ॥९१॥
उक्त महोत्सव मालव में होना ही अति श्रेयस्कर है ।
कहा 'देव' 'आनन्द' ऋषी जी ने प्रस्ताव सुखाकर है ॥९२॥
श्री ने किया विहार मालवा ऋषि आनन्द ने छोड़ नहीं ।
विन्ध्याचल का अतिक्रमण कर, पहुँच चैन इन्दौर सुखी ॥९३॥
दानी 'जमना' 'राम' श्रीमती, की दुकान भी है इन्दौर ।
अतः पूज्य पद उत्सव स्वीकृत करने दिए तार इन्दौर ॥९४॥
उक्त प्रार्थना स्वीकृति के पश्चात भोपाल से आया तार ।
उत्सव स्वीकृति देकर श्री श्री संघ करो तुम ही स्वीकार ॥९५॥
संध्या समय 'कस्सी' लघु भ्राता तथा राजमल जी आए ।
अस्वीकृति सुन हताश थे पर वदन चन्द्र सम दर्शाए ॥९६॥
चातुर्मास होगा पहिला भोपाल महोत्सव के पश्चात ।
हर्षोन्मुख थे उत्तर पाकर, अमीचन्दजी गुरुलघु भ्रात ॥९७॥

अति त्वरित इन्दौर पधारे, 'मोहन''देव''विनय' आनंद।
महा सती श्री रत्नकँवर जी, तथा आए श्री ताराचन्द ॥६८।
सन्त साध्वी गणना त्रेसठ, ठाणे की थी उत्सव में।
सभी सम्प्रदा के साधू थे, पदवी पूज्य महोत्सव मे ॥६६॥
मालव, दक्षिण, कच्छ, काठिया, वाड और मरुस्थल के।
खान देश, गुजरात तथा, पजाब भूमि भुसावल के ॥१००
आगन्तुक थे इक सहस्त्र, अन्यान्य नगर वासी उसवक्त।
तैयारी थी सब कुछ, चद्दर, देने की देरी थी फक्त ॥१०१
जेठ सुदी बारस बुध शुभ दिन, धर्म 'हुक्म' सुखशाला में।
पदवी पूज्य स्वदेशी चद्दर, प्रदान की शुभ वेला में ॥१०२
सम्प्रदाय ऋषि पूज्य अमोलक, का होना था अति सुखकार।
हर्ष गगन भेदी कर माना, बोल पूज्य की जय जय कार ॥१०३
ग्रामान्तर जनता का भोजन, किया प्रबन्ध श्री 'जमना' ने।
आदि अन्त तक बने सहायक, किया परिश्रम 'ज्वाला' ने ॥१०४
'ऋषि श्रावक समिती' भी की, मध्याह्न काल मे स्थापित।
जैन 'गुरुकुल की अपील, स्वीकृति पर थे सब ही बाधित॥१०५
जैन समाज भूषण लालाजी, दानी पूगलिया सरदार।
बडी रकम गुरुकुल में देने, दोनों के थे भाव उदार ॥१०६॥
पूज्य महोत्सव पूर्ण हुआ थी, पूज्य विहार किया तत्काल।
चतुर्मास स्थान बताकर, पहुच गये श्रीवर भोपाल॥१०७॥
जैन अजैन सभी ने मिलकर, श्रद्धापूर्ण किया स्वागत।
मोडों के थानक में ठहरे, आई परिषद दर्शन हित ॥१०८॥
कई अजैनी बने सुजैनी, आते सुनने नित उपदेश।
दान तपस्या हुई खूब थी, वीर सुनाते थे सन्देश ॥१०६॥
वृहत-साधु सम्मेलन सम्मति, हित आया डेप्यूटेशन।
सेठ 'अमी' ने किया प्रबन्ध, शिक्षक को भी दी सब वेतन ॥११०

चातुर्मास पश्चात् पूज्य ने किया विहार सुरत अजमेर ।
शुजालपुर जाने में थी ने किंचित भी न लगाई देर ॥१११॥
मार्ग शीर्ष कृष्णा एकादश हुई चार की दीक्षाएँ ।
तीन साधु थे एक साध्वी, मन में थे अति हर्षाये ॥११२॥
क्रमशः 'मधुप' 'फतेह' 'कांति' थे 'देव' सखा 'श्री' के शुभ शिष्य।
'सूरजकँवर' बनी 'मेना' की नम्र विनीता उत्तम सुशिष्य ॥११३॥
ज्यों ही उज्जैन पधारे तीवर प्रतापगढ़ से आया तार ।
वृद्ध सती हमीरा है अति पूज्य वचन सुनने तैयार ॥११४॥
प्रतापगढ़ अति शीघ्र पधारे पूज्य जावरा होकर के ।
सप्त दिवस में साठ माइल चल इच्छा पूरी जाकरके ॥११५॥
वृद्ध सती आदेश सहर्ष शिरोधार्य कर श्री सन्देश ।
मरण समाधि पूर्व संथारा लेकर पहुँची स्वर्ग सुदेश ॥११६॥
मरण क्रिया पश्चात एक मुर्ग पक्षी चोंच पकड़ का शव ।
दिखा रहा है चरम निरख चमत्कार था हुआ प्रत्येक दिलेय ॥११७॥
तदनन्तर मालव प्रांत विहारी साधवियों का सम्मेलन ।
अध्यक्षता में हुआ पूज्य के, हुआ द्वेष का उन्मूलन ॥११८॥
पोष सुदी तेरस सम्मेलन दैवानन्द उपस्थिति में ।
हुआ पंचदस हुए पास प्रस्ताव संप्रदा उन्नति में ॥११९॥
तब किया प्रस्थान पूज्य ने नीमच से श्री भिक्षवारे ।
शास्त्र विशारद मुन्नाचार्य, विराज रहे थे अधिकारे ॥१२०॥
'खूब' गुणी गुणालंकृत थे चौथमल सुप्रसिद्ध वक्ता ।
स्वागतार्थ आप सन्तोषद सब ही थे गुरु के दर्शे ॥१२१॥
जाना ज्यादा श्रावक 'नीरज', मुख्य सेठजी श्री सरदार ।
दर्शनार्थ क्रमशः श्रावक गण आये हर्षित हुए अपार ॥१२२॥
तब साधु समुदाय सम्मिलित हुआ नगर रमणीक प्यादर ।
करके पूज्य महाराज' मुन्ना' का वैमनस्य नशा सत्वर ॥१२३॥

पच नियुक्त किए थे दोनों, दल वैमनस्य मिटाने को।
श्री 'अमोल' 'मणि' नाल 'रत्न', 'काशी' थे सुख उपजाने को ॥१२४
पारस्परिक विरोध मिटा, द्वादश सम्भोग कराए थे।
चैत्र सुदी दशमी बुध को, अजमेर पूज्य श्री आये थे ॥१२५॥
श्रावक वृन्द वदन श्री लख ने, सन्त वृन्द सह आए थे।
ममइए क सुविशाल भवन मे, लेजा अति हर्षाए थे ॥१२६॥
विराट सभा में हुआ मंगलाचरण, साधुओं का भाषण ।
पूज्य अमोल ने सम्मेलन, 'साफल्य' विषय पर दिया भाषण॥१२७॥
इसी भवन में पृथक पृथक, भागों मे मुनिगण रहे सभी।
वट तरु परिमण्डल आकारी, नीचे भाषण हुए तभी ॥१२८॥
प्रातः, साय, ज्ञानी, ध्यानी, मुनिगण देते थे भाषण।
जैन अजैन श्रोताओं से परि, पूर्ण हुआ था तब प्राङ्गण ॥१२६
वैशाख शुक्ल दुतिया को सोनी, हरिश्चन्द्र को दीक्षा दी।
सत्कारित हरि नाम ऋषी था, पूर्ण रूप से शिक्षा दी ॥१३०॥
दीक्षा उत्सव व्यय 'ज्वाला ने, किया नाम था अमर किया।
दीक्षा स्थल पर अगणित जनता, ने भाषण रस पान किया ॥१३१
साधु साध्वी ने भी श्री के, अनुपम गुण का गान किया।
आनन्दित मन से सब ने ही, श्री का जय जयकार किया ॥१३२
कोमल हृदयी रत्न ऋषी. आनन्द विनययुत किया विनय।
चतुर्मास हो नगर सादडी, कष्ट मिटाने है अनुनय ॥१३३॥
बडी हरी ऋषी को दीक्षा, देकर तुरत विहार किया।
ब्यावर, बगडी, सोजत, पाली, और सादडी गमन किया ॥१३४॥
रत्न कँवरजी ने ठाणे नौ से, चौमासा किया यहीं ।
दर्शनार्थ मेवाड, मालवा, दक्षिण से आए सबही ॥१३५॥
सम्मेलन नियमों का पालन, करवाने दुर्लभ श्री हेम ।
मंगलाचरण स्वरूप पधारे, बढा अत्याधिक था तब प्रेम ॥१३६॥

जिन समाज सुपथ आज्ञा श्री, दर्शनाथ श्री के आये।
महेन्द्रगढ़ विनती स्वीकृति सुन मन में ये अति हर्षाए ॥१३७
सांडेराव पधारे जब श्री, 'कुर्लम' श्री का पत्र मिला।
संशोधन हित शास्त्र पधारें, जयपुर आमन्त्रण का मिला ॥१३८
पूज्य पधारे पाली, 'मोहन', मंत्री 'आत्मा' सम्मेलन।
हुआ परस्पर विचार विमर्शन, करने शास्त्र सुसंशोधन ॥१३९
पूज्य पधारे शहर जोधपुर, 'राम' पधारे स्वागत को।
तदा मेड़ते जन्म-भूमि श्री, गए त्वरित ही निरखन को ॥१४०
तदन्तर पुष्कर में श्री का, हुआ आगमन सुखकारी।
ब्यावर मन्दिर 'ऋषभ' विश्रमुख, पत्तीभुत था सुखकारी ॥१४१
होते हुए किशनगढ़ भीतर जयपुर शीघ्र पधार गए।
'रत्न' आत्मा' 'काशी सन्तों' सब के द्वारा छाए गए ॥१४२
प्रातः आठ बजे से दस मध्याह्न एक से चार बजे।
शास्त्रालोकित संशयास्पद विवेचनों के साज सजे ॥१४३
'राम बाग-निद्रिया भर' देखा, दर्शनार्थ 'आत्मा' आए।
मध्यराह श्री ' चन्दू 'अमर' सम्मेलन से श्री हर्षाए ॥१४४
मारमीक हो पूज्य अमोलक महेन्द्रगढ़ भी पहुँच गए।
'पुष्पी' श्याम, सकल छाजा परिवार पधारे दर्श किए ॥१४५
स्वागत में पूज्य अमोलक, 'मोती' एक पाठ बैठे।
मंगलाचरण सुना, भीखाजा, अतिथि भवन में श्री पैठे ॥१४६
पूज्य विराजे नो महीने तक हुए अनेकों ही व्याख्यान।
सपरिवार पधारे छाजा जैन अर्जन किया रस पान ॥१४७
तदन्तर श्री सन्ती मराही में कुछ दिवस बिताए थे।
ओसागम्य पे बिढ़ अत्ता श्री भीमप्प रस को लेते थे ॥१४८
तदा पूज्य ने सानुरोध से यू पी तरफ विहार किया।
जमना नावों के पुल से कर पार पंजाब विहार किया ॥१४९

इस प्रकार वरसत, अम्बाला, पटियाला से नाभा को।
आए 'रामस्वरूप' 'अमर' कवि, निरखनश्री की आभा को ॥१५०
ततः पधारे मलर कोटला, स्वागतार्थ आए श्री सन्त।
'रत्नचन्द्रजी' 'काशी' आए, प्रसन्नता का था नहिं अन्त॥१५१
ततः पूज्य ने इच्छा की गुरु, कुल पॅचकूला जाने की।
किन्तु पूज्य श्री सोहन की, इच्छा दर्शन थी पाने की ॥१५२
'पूज्य' पूज्य श्री सोहन गुरुतम, आज्ञा को टाला नहीं ज़रा।
अमृतसर विहार की स्वीकृति, दे सब का मन किया हरा॥१५३
जालधर में महासती विदुषी, श्री 'पार्वती' जी पास।
करी पूज्य ने शास्त्र सुचर्चा, दिव्य ज्ञान का हुआ प्रकाश॥१५४
ततः पधारे केजडियाले, पत्री-परम्परा झगडा था।
वैमनस्य नशा आपस का, श्री ने प्रेम पसारा था ॥१५५
तदुपरांत अमृतसर श्री जी, ठहरे गेंदामल उपवन।
जन समूह खबर पा उमडा, आए सन्त पूज्य सोहन ॥१५६
पूज्य पधारे निज सन्तों सह, 'श्री सोहन स्थानक में।
प्रेमालाप परस्पर का था, दर्शनीय स्थानक में ॥१५७
तदनन्तर जालन्धर बॅगिया, नयाशहर राहो रोपड ।
उपाध्याय श्री आत्मरामजी, आए सब सन्तों सह बढ ॥१५८
पचकूल हित किया त्वरित, प्रस्थान पूज्य ने मगल प्रद।
'ज्वाला' 'जमना', गुरुकुलवासी, सादर स्वागत किया सुखप्रद॥१५९
पूज्य विराजे सामायिक के, भव्य भवन सुखकारी में।
प्रशान्त वातावरण मनो, मोहक था गुरुकुल वासी में॥१६०
निर्झर झर झर कल कल स्वर कर, अविरल गति से बहते हैं।
पक्षीगण के मधुर सुगायन, मन आनन्दित करते हैं ॥१६१
शारीरिक, आध्यात्मिक, मानसिक, उन्नति में बढकरगुरुकुल
[illegible] से मंगल होने का, कारण है केवल-गुरुकुल ॥१६२

लालाजी श्री यहां पधारे, भाषण लाभ उठाने को ।
गुप्त दान दिया कइयों को, दुख से मुक्त कराने को ॥१७६
संवत्सरी के दिन अगणित, श्रोतागण ने रस पान किया ।
अगणित गुण से भूषित श्रीका, सब ने ही सत्कार किया ॥१७७
श्री 'गिरधारी' ने तब ही, प्रस्ताव रखा यह श्री सम्मुख ।
'जैन दिवाकर' पदवी दी, प्रतिदिन हो उन्नति के उन्मुख ॥१७८
तत्पश्चात पूज्य फरमाया, गुरुतर भार क्यों देते हो ।
एक पूज्य पदवी श्रेयस्कर, व्यर्थ वहन क्यों रखते हो ॥१७९
श्री गिरधारी आग्रह से, श्री पूज्य पधारे हाई स्कूल ।
'सर्व मान्य धरम' पर भाषण, दिया सभी के था अनुकूल ॥१८०
पूज्य अमोलक के दर्शन हित, आये दूर दिशावर्ती ।
व्याख्यानों में प्रतिदिन मिश्री, की डलियां भी थी घुलतीं ॥१८१
आश्विन कृष्णा नवमी को, आये थे पंच अमृतसर से ।
आवश्यकता है इसकी श्री, अब वीर सन्देश जगत सरसे ॥१८२
पूज्य अमोलक ने फरमाया, स्पर्शना जैसी होगी ।
सम्प्रदाय सम्मेलन दक्षिण, में जल्दी करनी होगी ॥१८३
कार्तिक कृष्णा दुतिया को, श्री हेमचन्द्र प्रमुख आए ।
समाज के सगठन विषय पर, चर्चा कर मन हर्षाए ॥१८४
जैन समाज भूषण लालाजी, भी आए दर्शन को थे ।
वकील, राज कर्मचारी भी, भाषण सुनने आये थे ॥१८५
दीपमालिका दिवस पूज्य ने, वीर प्रभो के जीवन पर ।
दिया रहस्य मयी भाषण था, श्री ने परिषद् को सुख कर ॥१८६
गंगादेवी ने निज आधा, भवन धर्म हित दान दिया ।
कार्य रूप में परिणित हो, व्याख्यान पूज्य ने प्रथम दिया ॥१८७
लौंका जयन्ति मनाने को, श्री ने जन को उपदेश दिया ।
[illegible] पर्णिमा को श्री ने लौं, का जीवन था सुना दिया ॥१८८

'मृगचन्द' 'कल्याण' मुनि सन्तों ने भी परकाश किया ।
क्रांतिकार जीवन के जीवन पर, सब ने ही प्रकाश दिया ॥१८९

रत्नकँवरजी ने शिष्या सह हित शिक्षा का भजन कहा ।
संस्कृत अष्टक अर्थ सहित विद्यालय वालों ने था कहा ॥१९०

भक्ति भाव एवं प्रेमाद्रि गुणानुवाद किया श्री का ।
विरह अग्नि में भस्म सभी थे, निरख रहे थे मुख श्री का ॥१९१

अन्त पूज्य ने मुखारविंद से मंगलपाठ सुना करके ।
करी विसर्जन सभा पूज्य ने आर्द्र सभी थे सुन करके ॥१९२

ततः पूज्य ने देहली का भी संघ अपार प्रशंसा की ।
श्री मन्ना का द्वेष मिटाया शास्त्रों की भी चर्चा की ॥१९३

ततः पूज्य ने किया विहार, परिषद् ने जय जयकार किया ।
श्रावक सन्त सभी ने श्री को सविनय नमकर नमन किया ॥१९४

काशी नृप के काशी गृह में पूज्य विराजे हर्षाय ।
मंगलिक सुना दिया परिषद को, देवों के जो मन भाए ॥१९५

जनता कहती थी इक स्वर से श्री ने चातुर्मास देकर ।
किया शांत था सबके उर को आना पुनः कृपा श्री कर ॥१९६

श्री ने जैन दिवाकर सम ही काम क्षेत्र में कार्य किया ।
श्रीपथ परिषद को भी सह कर, जन हित ही था कार्य किया ॥१९७

तब पधारे पूज्य आगरा मालव से भी धुलिया को ।
आग्रह अनेक जगह होने पर भी सीधे गये धुलिया को ॥१९८

जिसने सोचा था धुलिया में परम चतुर्मास होगा ।
धर्म चक्षुओं से जगमगता भी शासन तारा होगा ॥१९९

उग्र विहारी नम्र तपस्वी, सहनशील भी हंस मुख थे ।
कांति फूट फूट कर गिरती पूज्य अमोल कमल मुख थे ॥२००

सर्वोत्तम है प्रकृति नमूना प्रशंसनीय है श्री गुणग्राम ।
नहीं विरोधी था श्री का अमित आप यही होवे उपमान

स्वर्ग सिधारे प्यासे चातक की अब प्यास बुझा आर
पनपाए उस धर्म बीज को, पुनः संजीवन कर

चिम्मनसिंह लोढ़ा के प्रबन्ध से श्री महावीर प्रिंटिंग प्रेस
ब्यावर में मुद्रित । १०००—९ ३७
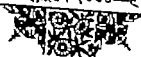
जिन-भक्ति

प्रकाशक.—
मुहता सिम्भूमल गंगाराम

जिन-भक्ति

लेखकः—सूर्यभानु डाँगी

प्रकाशकः—

मुहता सिम्भूमल गंगाराम, बलूंदा

(मुहता छगनमल)

प्रथमावृत्ति २००० | मूल्य सदुपयोग | वीर स २४६२ वि स १९९२

ॐ

भूमिका

इस संसार में संगीत का माहात्म्य कितना अधिक है, यह अधिक कहने की आवश्यकता नहीं 'सगीतम्पचमो वेद:' इससे यह स्पष्ट होता है कि हिन्दुओं के परम पुनीत-वेदों के समान सगीत का भी स्थान है। सगीत आध्यात्मिक रसास्वादन करानेवाली, शोक पूर्ण हृदयों को प्रफुल्लित करनेवाली कायरों की कायरता को दूर करके घोर सग्राम करानेवाली और जड में चेतन्य का दर्शन करानेवाली एक विलक्षण सजीवन बूटी है। दीपक-मल्हार आदि इस के लिये प्रत्यक्ष प्रमाण है कि सगीत प्रकृति के नियमों को भी उलघन करने वाला एक अनुपम जादू है। सगीत शास्त्र विषयक आधुनिक, वैज्ञानिक प्रयोगों से वे गान नृत्य आदि के लिये एकत्रित होने वाले जन समुदाय की अभिरुचि से यह भी स्पष्ट है कि सगीत का प्रभाव लोकपर कितना अधिक पड़ता है। 'संगीत भक्ति रस का एक अनुपम साधन है' इससे आकर्षित होकर श्री 'भास्कर जी' ने आधुनिक ढग पर यह जिनेन्द्र देव की भक्ति रची है। उस वीतरागी जिनदेव के अनुपम गुणों का वर्णन वडे २ योगी राज भी नहीं कर पाते तथापि रचियता महोदय ने जिनभक्तों के लिये भक्ति रस प्रकटाने का एक अच्छा साधन उपस्थित किया है।

विनीत–

'माधव' जैन न्यायतीर्थ

प्रधान–अध्यापक

श्री मूथा जैन विद्यालय, बलूदा

|| ॐ ||

मेरे शब्द

बड़े आदमी कहते हैं कि पहिले कल्पवृक्ष होते थे, और वे प्राणियों के कष्ट नष्ट करते थे। अब भी कल्पवृक्ष हैं और वे हमारे सब दुःखों को दूर करते है। उनका नाम है सत्य शील और सतोष आदि। इन वृक्षों को सिंचन करने वाली है "जिन-भक्ति" 'जिन' का अर्थ होता है रांग द्वेष को जीतने वाला। और जो राग द्वेष को छोड कर निष्पक्षता से सब धर्मों का समन्वय करता हुआ किसी एक धर्म पर मोह नहीं कर के अर्चा करने योग्य अर्हंत अर्थात् पूजा करने योग्य पूज्य पुरुष की आराधना करता है वही सच्चा जैन है, जिन भक्त है। उसी को सत्य शील और शाति के दर्शन हो सकते है प्रत्युत जिसके हृदय में पक्षपात, हठाग्रह और राग द्वेषादि जिन-विद्रोही दुर्गुण हैं, उसको कभी चिर शांति प्राप्त नहीं हो सकती—मोक्ष लाभ नहीं हो सकता।

जिनेन्द्र भगवान का यह उपदेश है कि सम्प्रदायो के विना धर्म नहीं टिक सकता विभिन्न सम्प्रदाय और मत मतान्तर धर्म के साधन हैं। इसीलिये उन्होंने अनेकांत का आविष्कार किया। स्याद्वाद दृष्टि मय विशाल विचारों का प्रचार किया। और सब सम्प्रदायों मे एकता ढूढने का मार्ग बताया। देश काल, भाव के अनुसार सम्प्रदाय बनता है जिस तरह जल को कोई नहीं बनाता उसी तरह धर्म को भी कोई नहीं बनाता। बनाये जाते है तीर्थ, कुए, तालाव, बावडी। उसी तरह से बनाये जाते है—सम्प्रदाय, मत-मतांतर। सम्प्रदाय पथ आदि स्वय धर्म

नहीं है। वे धर्म के आधार हैं। इन्हें आवश्यकतानुसार हम बनाते हैं। यह अमूल्य उपदेश देकर भगवान ने सम्प्रदायों के झगड़े नष्ट किये और सब सम्प्रदायों से अतीत-सनातन-जैन धर्म को स्थापित किया। राग द्वेष से रहित सम्प्रदाय बनाई। अब हमारा परम कर्तव्य है कि उस परमात्मा के भक्त बनें। और यथा शक्ति उनके गुण वर्णन करें। हमारी वाणी में वह शक्ति नहीं कि हम उनकी महिमा गा सकें। परन्तु महात्माओं के वचनों के आधार पर जो कुछ कहते हैं उसी में हमें परमानन्द प्राप्त होता है।

परमात्मा को समझने के लिये सब से पहिले हमें अपनी दृष्टि अन्तर्मुखी करनी चाहिये। चर्म चक्षुओं को बन्द कर के अन्दर देखना चाहिये, और उस अचिन्त्य शक्ति का चिंतन करना चाहिये। वह शक्ति अरूपी है। दृश्य मान पदार्थों से भिन्न है। जो दिखता है वह आत्मा नहीं, जो देखता है वह आत्मा है। जो सुना जाता है वह आत्मा नहीं, जो सुनता है वह आत्मा है। जो सूंघा जाता है वह आत्मा नहीं जो सूंघता है वह आत्मा है यहां सूंघने वाले सुनने वाले और देखने वाले नाक, कान और आंख आदि इन्द्रियों से मतलब नहीं है। क्योंकि उल्लिखित कार्य आत्मा के हैं। नाक को काट कर हाथ पर रख दिया जाय तो वह सूंघ नहीं सकता। कान को काट कर सड़क पर फेंक दिया जाय तो वह वहां पड़ा २ नहीं सुन सकता। आंख को निकाल कर अलग रख दी जाय तो वह देख नहीं सकती। यह समस्त व्यापार करने वाला स्वामी आत्मा है जिसने उस शक्ति को पहिचान लिया, पूर्ण रूप से पा लिया वही पुरुषोत्तम कहलाता है, और संसार उसको तत्वदर्शी कहता है। उसी शक्ति की प्राप्ति करने के लिए हम सामायिक का अभ्यास करते हैं।

जिसने आत्मा का मूल्य नहीं समझा उसी को सामायिक करने में, एक घडी भर के लिये भी आत्म चिंतन करने मे आलस्य आता है आत्मा की कीमत समझाने के लिये मैं एक छोटीसी बात आप लोगों के सामने रखता हूं। हम सब से अधिक कीमती चीज हीरे को समझते हैं। परन्तु एक बात का विचार करें कि यदि हमारे पास नेत्र नहीं हैं तो वह हीरा हमारी नजरों मे तीन कोडी का पत्थर है। इससे यह बात तो सिद्ध हुई कि उस हीरे से भी अधिक हमारी आंखों की कीमत है। अच्छा अब हम और सूक्ष्म विचार करें कि यदि वह आत्मा नहीं तो हमारे वह दोनों नेत्र भी किस काम के ? इससे यह सिद्ध हुआ कि दुनियां भर के तमाम पदार्थों से वह आत्मा अधिकतम मूल्यवान है। सौ सवा सौ साल तक साथ रहने वाले इस नाशवान शरीर के लिये हम साठ घडी प्रयत्न करते है। और अनन्त काल तक साथ रहने वाले उस आत्मा के लिये हम एक घडी भी प्रयत्न नहीं करें तो यह हमारी बेसमझ है।

यहां पर एक प्रश्न उपस्थित होता है कि उस आत्मा के लिये प्रयत्न करना तो ठीक है परन्तु प्रयत्न करें तो कैसे ? कोई कहता है नमाज पढो, कोई कहता है रोजा रक्खो, कोई कहता है प्रतिक्रमण करो, सन्ध्या करो, प्रार्थना करो, कोई कहता है तीर्थयात्रा करो और कोई कहता है मदिरों मे जाकर घण्टे हिलाओ। अपने अपने धर्म की सभी बडाई करते हैं अपनी २ ढपली और अपनी राग अलापते हैं। अब कहो हम कौनसा धर्म पालन करें ? किस का कहना मानें ? और किस के आगे नाक रगडें।

यह प्रश्न स्वाभाविक है, और इसका समाधान भी सरल है। धन कमाने वाले अलग २ धंन्धा करते हैं। कोई नौकरी करते

है, कोई व्यापार। व्यापार में भी कोई सट्टा फाटका करते हैं। कोई दलाली, सर्राफी आदि। नौकरी में भी हाकिमी करते हैं, कोई मास्टरी करते हैं तो कोई गुमास्तगिरी मुनीमी वगैरा। इसी तरह शांति प्राप्त करने के लिए तथा आत्म चिंतन करने के लिये भी, विभिन्न सम्प्रदाय होते हैं। और उनमें भी नाना प्रकार की टुकड़ियें होती हैं। जिस तरह से एक कूप में सारी दुनियाँ पानी नहीं पी सकती, एक धन्धे से सारी दुनियाँ गुजरान नहीं कर सकती। उसी तरह से एक मार्ग से एक धर्म से एक सम्प्रदाय से और एक प्रकार से आत्मा की सेवा नहीं हो सकती। आत्म सेवा करने के लिये हमको अपनी रुचि के अनुसार किसी एक सम्प्रदाय का अवलम्बन लेना चाहिये या अपनी परम्परा वाली सम्प्रदाय का आश्रय लेना चाहिये "महाजनो येन गतास पन्था" का अनुकरण करना चाहिये। जिस तरह से हम सब से पहिले आजीविका चलाने के लिये हमारे बाप दादों का धन्धा पकड़ते हैं। उसी तरह सब से पहिले हमारे पूर्वजों का पंथ अंगीकार करना चाहिये। फिर यदि उसमें सफलता न मिले तो समयानुसार सुविधानुसार सम्प्रदाय परिवर्तन करना चाहिये। जिस तरह नौकरी में सेवा की और व्यापार में व्यापारिकता की आवश्यकता होती है उसी तरह से सम्प्रदाय में साम्प्रदायिकता की आवश्यकता अवश्य है परन्तु दूसरी सम्प्रदाय का अनुदारता पूर्वक विरोध नहीं करना चाहिये। जिस तरह एक व्यापारी नौकरी करने वाले को गुलाम कह कर तिरस्कार नहीं करता और एक नौकरी पेशा वाला व्यापारी को कम २ करने वाला कहकर बुरा नहीं बतलाता है उसी तरह हमें दूसरी सम्प्रदाय वाले को काफिर, मिथ्यात्वी, अज्ञानी आदि कहकर सम्बोधन नहीं करना चाहिये। मिथ्यात्वी वह है जो सत्य अहिंसा

आदि को नहीं मानता, काफ़िर वह है जो धर्म को दुःख देने वाला बतलाता है परन्तु अपनी सम्प्रदाय से भिन्न होने से ही वह अज्ञानी नहीं होजाता, इसीलिये शास्त्रों ने १५ प्रकार के सिद्ध बतलाये है। नौकरी करने वाला आलसी नहीं और व्यापार करने वाला भी आलसी नहीं आलसी है बैठा रहने वाला उसी तरह से हिन्दू काफर नहीं और मुसलमान मिथ्यात्वी नहीं। मिथ्यात्वी है सत्य के फल मे विश्वास नहीं करने वाला। इस लम्बे व्याख्यान से यही मतलब निकलता है कि हमको विशाल दृष्टि बनानी चाहिये और निष्पक्ष भाव से राग द्वेष को जीतने वाले पाखण्डों के समूह रूप जैन धर्म के स्थापन करने वाले जिनेन्द्र भगवान की भक्ति करनी चाहिये।

बस इसीलिये मैंने यह छोटासा ग्रन्थ बनाया है। मैं नहीं कहता हूं कि मेरा कहना अन्तिम सत्य है। परतु इतना विश्वास दिलाता हूं कि इसको पढने वाले ब्रह्म की तरफ रुचि अवश्य करने लगेंगे।

उपकार

मैं प्रूफ सशोधक व पुस्तक सशोधक प शोभाचन्दजी भारिल्ल को अनेक धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने कृपा करके यह कष्ट उठाया। साथ ही मैं दानवीर सेठ सा. श्री छगनमलजी सा. (फर्म सेठ सिम्भूमलजी गंगारामजी सा) का आभार माने विना नहीं रह सक्ता जिन्होंने मेरे प्रयास को अपनाकर पुस्तक को प्रकाशित करने की परम उदारता दिखाई है।

आशा है अन्य श्रेष्ठियें भी इसी प्रकार उक्त सेठ सा की भांति अपने पैसे का सदुपयोग कर समाज के सामने आदर्श रक्खेंगे।

जिन २ महापुरुषों की प्रेरणा व सदुपदेशों से मुझे यह उत्साह मिला है उन महान् विभूतियों का मैं पूर्ण कृतज्ञ हूं।

भवदीय—

बड़ी तीज
२४६१

डॉ सूर्य-भानु जैन "भास्कर"
बड़ी सादड़ी (मेवाड़)

समर्पण

१

मरुधर के जो आदर्श सेठ, सीधे सच्चे व्यवसायी थे,
जो सब के सुखदाई थे असहायो के एक सहायी थे।
गंगा समान जो निर्मल थे अरु 'गंगाराम' कहाते थे।
जो दानवीर गम्भीर धर्म में धीर सदा दिखलाते थे॥

२

अब वर्तमान श्रीमान 'छगन' जिनके सुपुत्र कहलाते हैं,
सब तरह उन्ही के गुण वाले ही हमें दृष्टि में आते हैं।
जो हैं जिनेन्द्र के भक्त इसी से यह जिन भक्ति छपाते हैं।
लो 'सूर्य्यभानु' स्वर्गीय सेठ के सुन्दर भेंट चढ़ाते हैं॥

भवदीयः—

मूथा जैन विद्यालय
रक्षा बन्धन
२४६१

डांगी 'सूर्य्यभानु' जैन भास्कर
बडी सादडी (मेवाड)

॥ मंगल ॥

॥ दोहा ॥

करम दलन अर्हंत प्रभु, जयति सिद्ध भगवान ।
छत्तिस गुण-धर धीर-वर, जय आचार्य महान ॥१॥
उपाध्याय स्वाध्याय रत, साधु करें कल्याण ।
पांचों पद मंगल करें, सुमिरत 'सूरजभान' ॥२॥

उपकार

(तर्ज—कमली वाले ने)

सुख शान्ति का डंका त्रिभुवन में, बजवा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने, ध्रुव
चंचल लक्ष्मी चंचल आयुष, चंचल जीवन चंचल यौवन;
इक धरम अचल जगती तल में, फरमा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥१
जग बीच कमल दल जल सम सब, रहना सीखो भव भवि प्राणी;
अनुभव अमृत रस यह हमको, पिलवा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥२
इन बाह्य वस्तुओं पर प्यारो, अपनी ममता सब दूर करो;
हम कौन? हमारा यहां कौन? सिखला दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥३
ये रूपी रूपी हैं सारे कोई न हमारे हैं साथी;
इनसे हम भिन्न अरूपी हैं, बतला दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥४
स्वाभाविक निर्मल सुखमय पद, निज रूप कर्म ने दबा लिया;
हम अनादि बंधन को क्षण में, तुड़वा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥५
उनकी सुदया से 'सूर्यभानु', कुछ आत्म तत्त्व का भान हुआ;
भगते मन मृग कस्तूरी को, समझा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥६
सुख शांति का डंका त्रिभुवन में बजवा दिया गुरु निर्ग्रन्थों ने ॥ मिलाव

श्री जिन-भक्ति

प्रथम खंड

डाँगी चौवीसी

॥ नमस्कार ॥

ऋषभ प्रमुख महावीर प्रभु, तीर्थंकर चौवीस ।
यथाशक्ति भक्ती करूँ, जग जीवन जगदीश ॥१॥
प्रणमूँ प्रथम प्रभामयी, पृथ्वी पुत्र गणेश ।
पावन पुण्य प्रभाव से, प्रकटे प्रेम विशेष ॥२॥
विघ्न हरें मंगल करें, गुरु गौतम भगवान ।
शासनपति प्रभु वीर के, गणधर शिष्य महान ॥३॥

वृषभ-चिन्ह] **प्रथम** [स्वर्ण-वर्ण
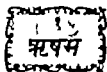
तर्ज—मालकोष-पपैया काहे मचावत शोर

मुग्ध-मन-मानव ! मेरी मान,
तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव का करते रहना ध्यान ।। ध्रुव ।
माँ 'मरुदेवी' पिता 'नाभि' के जगत् पिता सन्तान;
परमेश्वर बन प्रथम जिन्होंने, दिया सृष्टि को ज्ञान ।।१।।
नमपति नरपति गुरुपति खगपति, जिनपति परम प्रधान;
सुरपति सहित चराचर सुमिरत, सकल कला गुण खान ।।२।।
अजर अमर अखिलेश निरंजन, दीनबन्धु भगवान;
जग जीवन प्राणों से प्रियतम, पूरण प्रेम-निधान ।।३।।
धन्य 'अष्टमी' धन्य 'अयोध्या', अंबर हुआ महान;
'चैत्र मास की कृष्ण रात्रि' में, प्रगटे त्रिभुवन भान ।।४।।
सकल चतुर्विध संघ निरंतर, करता आ-त्थान;
यही भावना भाये रहना, है प्रभु का गुण गान ।।५।।
गुरु निग्रंथों ने बतलायी, शुद्ध देव पहिचान;
सब से पहले 'सूर्य भानु' करना उनका सन्मान ।।६।।
(मिलाव) मुग्ध-मन-मानव मेरी मान ।

स्वर्ण] ॥ २ ॥ [गजराज

अजित

तर्ज--सिन्धभैरवी, कालिंगडा पीलू, कानडा, चौपाई आदि

अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी, जगत जीत, निर्भयजयपामी ॥ध्रुव
'विजया' माता के प्रभु जाये; 'जितशत्रू' नृप गोद खिलाये।
जय जय तीन लोक के स्वामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥१॥
भव भव में कर्मो से हारा; कोई मिला न नाथ सहारा।
अब तू काम बना निष्कामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥२॥
कुटिल, कठोर, कदाग्रह-कामी; क्रूर, कपट-कर्तार, हरामी।
पर तू पतित उधारन नामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥३॥
कब तक यह भव रोग हरोगे; जन्म-मरण-दुख दूर करोगे ?
तुमको पाया शिवसुखधामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ सुनावे; प्रभु चरणों में चित्त रमावे।
महरकरो अनन्त विश्रामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥५॥
गुरु निर्ग्रथों ने है समझाया; तेरा नाम मंत्र बतलाया।
'सूर्य भानु' अविचल पथगामी, अजितनाथ प्रभु अन्तर्यामी ॥६॥

मरकट] ४ अभिनन्दन [स्वर्ण

(तर्जः—रङ्गत मारवाडी ख्याल)

अभिनन्दन ध्याऊँ पाऊँ शिव सम्पत्ति धर्म प्रताप से ।।ध्रुव ॥
काम क्रोध मद लोभ छोड कर, मै प्रभु के गुण गाऊँ;
तन मन धन सब अर्पण करके, उनके सम बन जाऊँ ।।१।।
निर्मल दर्पण सम उनमें निज, आत्म स्वरूप लखाऊँ;
ब्रह्मानन्द मग्न होकर के, अविनाशी कहलाऊँ ।।२।।
इन्द्रिय सुख को स्वप्न समझ कर, तनिक न मै ललचाऊँ;
ममता तज वैराग्य बढाऊँ, मनको अचल बनाऊँ ।।३।।
हृद् तंत्री की तान सुनाऊँ, अन्तर नाद बजाऊँ;
आत्म समान सृष्टि को लखकर, शुद्ध भावना भाऊँ ।।४।।
'संवर' पिता मात सिद्धार्था नन्दन पर बलि जाऊँ;
पूर्ण नमूना परमातम का, सन्मुख सामने लाऊँ ।।५॥
गुरु निर्ग्रंथ ज्ञान बतलाया, उनको शीष नमाऊँ;
तीर्थंकर की सुखद भक्ति का, सबको पाठ पढाऊँ ।।६।।
सकल संघ को अनुभव के, अमृत का स्वाद चखाऊँ;
'सूर्य भानु' स्वामी ! नयनों से स्नेह अश्रु बरसाऊँ ।।७।।

मरम] ३ [सम

सम्भव

तर्ज—दुनिया में किसी का कोई नहीं

सम्भव तीर्थंकर सुमिर सयाने, साथी तेरा कोई नहीं। ध्रुव।
सब स्वजन सनेही स्वारथ से, सम्बन्ध स्नेह बतलावे हैं;
सहसा संकट का समय हुआ, तो समझ सहारा कोई नहीं॥ १
ना मात पिता का तू साथी, ना मात पिता तेरे साथी;
ना तू उनका रखवारा है, तेरा रखवारा कोई नहीं॥ २
परिधान आत्म पद को प्यारे, प्रभु से तू प्रेम लगा पूरा;
उस परम पुरुष परमातमसा, परभव में प्यारा कोई नहीं। ३
धन पिता 'जितारथ' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;
श्री नगर 'अयोध्या' 'सैन्यादे' माता के लाल दुलारे हैं;
श्री संघ चतुर्विध को स्वामी, है सम्भव समव स्थापित करवे;
हम सब दीनों के दीनबन्धु बिन तारनहारा कोई नहीं॥ ४
गुरु निर्ग्रन्थों ने दया लाय, जगती जन को यह समझाया।
ए 'सर्वमान्य' उन जिनवर सम, देव दूसरा कोई नहीं॥ ६

पद्म] ६ [रक्त

पद्म

तर्ज—वनजारा

प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा, जग जीवन प्राण हमारा । ध्रुव ;
तुम तीन लोक के स्वामी, तो हम सेवा के कामी।
'श्रीधर' सुत देव दुलारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥१॥
तुम निर्मल ज्ञानी पूरे, तो हम भी नाथ अधूरे;
यह चेतन अंश तुम्हारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥२॥
यदि तुम अम्बर हम धागा, तुम सोना हम सोहागा;
तुम किस विध हम से न्यारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥३॥
यदि तुम हो सूरज स्वामी, हम किरन नयन अभिरामी;
यह भेदन हुआ लिगारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥४॥
माता 'कुसुमा' के जाये, निर्गंथ गुरु बतलाये;
हम सब के एक सहारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥ ५ ॥
तुम दीन बन्धु अविकारी, हम दीन मलीन भिखारी:
धन निगम निरूपण सारा, प्रभु पद्म जिनेश्वर प्यारा ॥६॥
सम्पूर्ण संघ यों गावे, चरणो में चित्त लगावे,
जय 'सूरजभानु' अपारा, प्रभु पद्मजिनेश्वर प्यारा ॥ ७ ॥

———

५

कर्षा] **सुमति** [सर्वा

सुनो हे सुमति नाथ भगवान, दीजिये मुझे सुमति का दान ।ध्रुव।
तुम समान कोई है न दूसरा, दीन दयाल कृपाल,
मैं सेवक तू स्वामी मेरा, लीजे नाथ सँभाल;
आप हैं सर्व गुणों की खान ॥१॥
मैं तो दीन मलीन भिखारी, नीच पतित मति हीन,
तू जिनदेव सुमति का सागर, अचल ज्ञान में लीन;
करो रक्षा पापी पहिचान ॥२॥
भव समुद्र में नैया डोले कौन बचावन हार,
घड़ घड़ घड़ कर क्रोध मेघ, घर घर बरसावत मार;
बीजली माया लेवी जान ॥३॥
लोभ मोह के भँवर कपट के, सर्प करत फुँकार,
डूबी जाती मेरी नैया लीजे नाथ उबार;
'मंगला' माताजी के प्राण ॥४॥
श्री निग्रंथ हमारे गुरुवर, तारन तरन जहाज,
'मघ' पुत्र का शरण बताया, धन्य गरीबनिवाज;
उन्हीं का है उपकार महान ॥५॥
सकल चतुर्विध संघ तुम्हारे, चरण कमल का दास,
'सूर्य भानु' सब आशा पूरो, कर कर्मों का नाश;
यही तो बिनती मेरी मान ॥६॥

८

चन्द्र] **चन्द्रप्रभ** [श्वेत

(तर्ज—मंगल ताल ३—शिवभोला भंडारी लोगों)

चन्दा प्रभु जिन ध्यावो साधो, चन्दा प्रभु जिन ध्यावोरे।ध्रु०
सोहं ब्रह्म नित्य अविनाशी, अलख स्वरूप लखावोरे;
अजपा जाप जपो मेरे चेतन, निजगुण मांहि समावोरे ॥१॥
मूल मति का रूप एक है, भाजन विविध बनावोरे;
त्यो सर्वत्र ईश की झांकी, दुविधा भाव मिटावोरे ॥२॥
वह निर्गुण सूक्षम से सूक्षम, दृढ़तर ध्यान जमावोरे,
ब्रह्मानंद रूप सागर मे, एक भेक हो जाओरे ॥३॥
ऐसा ज्ञान करो मेरे चेतन, सिद्ध जिनंद कहावोरे;
लोकातीत पहुंच करके, अक्षय अनंत सुख पावोरे ॥४॥
कर्मन काया मोहन माया, भूख तृषा विसरावोरे;
कोई न छोटा कोई न मोटा, ज्योति में ज्योति मिलावोरे ॥५॥
'महासेन' नृप 'लिखमा मां के, सुत से प्रेम लगावोरे;
'सूर्य भानु' अष्टम जिनवर के, हित चित से गुण गावोरे॥६॥

स्वस्तिक 7

सुपार्श्व

(\ स्वस्ति

तर्ज—प्रभाती, ताल—दादरा

भगति जय सुपार्श्वनाथ प्राण से पियारे । प्रभु०
नृप 'प्रतिष्ठ' तात, मात 'पृथ्वि' देवी भगजात;
सुषि सुवस बस गात, दीन के दुलारे ॥१॥
विमलविधु दयानिधान, विशद धनु शरीर मान;
धन्य भटल भचल ज्ञान, शुक्ल ध्यान धारे ॥२॥
मदनमोह से विछोह, क्रोध लोह से विद्रोह;
सुखद सुपद समारोह, सरस सोहना रे ॥३॥
नम अशोक मोद मेह, सकल शांति का सनेह;
तीन लोक भमगेह, देह को निवारे ॥४॥
मकल सब करत गान, दीजिये सुज्ञान दान;
बीनती पै राखो ध्यान, तान मान वारे ॥५॥
श्री निर्ग्रन्थ गुरु मुनीश, देव कृपाया जिनेश;
चरण शीप नमत 'सूप भानु' को निहारे ॥६॥

चद्र] ८ [श्वेत

चन्द्रप्रभ

(नर्ज-मगल ताल ३-शिवभोला भडारी लोगों)

चन्दा प्रभु जिन ध्यावो साधो, चन्दा प्रभु जिन ध्यावोरे।ध्रु०
सोहं ब्रह्म नित्य अविनाशी, अलख स्वरूप लखावोरे;
अजपा जाप जपो मेरे चेतन, निजगुण मांहि समावोरे ॥१॥
पूल सति का रूप एक है, भाजन विविध बनावोरे;
त्यों सर्वत्र ईश की झांकी, दुविधा भाव मिटावोरे ॥२॥
वह निर्गुण सूक्षम से सूक्षम, दृढ़तर ध्यान जमावोरे,
ब्रह्मानंद रूप सागर में, एक भेक हो जाओरे ॥३॥
ऐसा ज्ञान करो मेरे चेतन, सिद्ध जिनंद कहावोरे;
लोकातीत पहुंच करके, अक्षय अनंत सुख पावोरे ॥४॥
कर्मन काया मोहन माया, भूख तृषा विसरावोरे;
कोई न छोटा कोई न मोटा, ज्योति में ज्योति मिलावोरे ॥५॥
'महासेन' नृप 'लिखमा मां के, सुत से प्रेम लगावोरे;
'सूर्य भानु' अष्टम जिनवर के, हित चित से गुण गावोरे॥६॥

मत्स्य] ६ सुविधि [श्वेत

(तर्ज—रसिया शंकर रस राचो र पहाड़न में भोला पारवती क संग)

प्रणमूँ 'पुष्पदन्त' भगवन्त, महन्त-सन्त, जयवन्त भनन्त ।प्र०
शिवगति गमन; सुविधि कर कमन, सुविधि जिन पति विलसन्त;
मदन मथन भव हरन, करम दल दलन नवम भरहन्त ॥१॥
सकल अमर गण हिलमिल, मंगल मय दुदुभि उचरन्त;
भवि मुनि अनगण जिनगुण, सुमिरत मनद्रद मोद लहन्त ॥२॥
नेति नेति कर निगम पुकारें, शासन पावें भन्त;
निज निज मति सम करत कल्पना, मनभावन्त मतिमन्त ॥३॥
नृप 'सुग्रीव' पिता, माता 'रामा देवी' के नन्द,
गुरु निर्ग्रन्थों ने बतलाया, ऐसा आनन्द कन्द ॥४॥
सकल चतुर्विध संघ निरंतर, सुविधिनाथ सुमिरन्त;
दर्शन का प्यासा निशि-वासर, निजपद में विचरन्त ॥५॥
'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थों क, चरणाम्बुज फकरन्त;
दीपकर का ध्यान धरत भव जलधि पार उतरन्त ॥६॥

नोट—यह भजन अनुप्रास अलंकार वाला है अतः इसकी टेर (ध्रुव) को शुद्धता से पढ़नी चाहिये तब सुहेगी।

श्रीवत्स] १० [स्वर्ण

शीतल
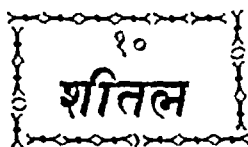
(तर्ज—प्रभाती

नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भवि जन भव जन्य मैल धोवें।
क्षण भर में संसार सिन्धु की, वड़वानल शीतल होवे ॥१॥
धन वे जन जो मनमोती को, उनके धागे में पोवें;
सदा उन्हीं का नाम रटत, संकट में धीरज ना खोवें ॥२॥
विषय कषाय बाह्य सुख समझे, तनिक न उन पर जो मोहे;
जल में कमल-पत्र से रह कर, मोहनींद में ना सोवें ॥३॥
आत्म स्वरूप भूल करके नर, जो भव भव में ना रोवें;
मनुज जन्म को पायनिरन्तर, पावन पुण्य बीज बोवें ॥४॥
'दृढ़रथ' तात, मात 'नंदा' सुत, का निर्मल स्वरूप जोवे;
शीतल जिन के शीतल जलमें, 'सूर्य भानु' निर्मल होवे ॥५॥
नित उठ शीतल जिन सुमिरत, भविजन भवजन्य मैल धोवे;
क्षण भर मेंसंसार सिन्धु की, बड़वानल शीतल होवे॥६॥-ध्रुव।

गेहा] ११ श्रेयास [स्वर्ण

(तज ठँगाडी आवयी, नरज प्रमाती म भी)

नर-पति 'विस्नु' 'विष्णु' महारानी, नंदन भन ' श्रेयांस कुमार,
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ।।प्रेर
जगतीतल में, दश दिशि लों चहुं ओर किया यश का विस्तार;
उन यश के निर्मल प्रमाण से, हुआ अनेकों का निस्तार ।।१।।
आठ करम के दल में राजा, मोह शत्रु का किया संहार;
इस भय-श्रव भव जल निधि, से भगवंत करेंगे मम उद्धार ।।२।।
आवागमन मिटाओ स्वामी, तुम बिन किन से करूं पुकार;
और कुदेव हम नपा सौंर, उन पर भी कर्मों की मार ।।३।।
काइ क्रोधी कोई मानी, कोई विषयों का सरदार;
तू वा नाथ कलंक रहित, मति-विशुद्ध और सदा अविकार ।।४
आगम वेद पुराण शास्त्र, गुरगुरु कहवे जगदीश अपार;
भव तारक सुन नाम जिनेश्वर, आया हूँ तेरे दरबार ।।५।।
डोंगी 'सूयभानु' गुण गावे, गुरु निग्रंथों का आधार;
सकल चतुर्विध सब प्रभु के, चरण कमल का ताबेदार ।।६।।
नर पति 'विस्नु' 'विस्नु' महारानी नंदनवन श्रेयांस कुमार;
इस अवसर्पिणि काल मध्य ग्यारहवें आप हुए अवतार ।।मिलत

महिप] १२ (रक्त

वासु पूज्य

(तर्ज गर्भी पणिहारी या देशी महाड)

श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासुपूज्य भगवान
श्री जिन मन-मंदिर आये...हो... ॥ ध्रुव ॥

राग द्वेष की ग्रन्थि हटाई.. हो.. भविकजन !
हुआ स्वरूप का भान ॥ श्री जिन०॥ १ ॥

समकित लाभ करो सुख कारी...हो.. भविकजन !
समझो अपनी शान ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥

फिर चारित्र वृत्ति को धारो. हो.. भविकजन !
क्रमिक करो उत्थान ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥

नृप "वसुपूज्य" 'जया' के जाये ..हो भविकजन !
निर्मल ज्योति महान् ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

गुरु निर्ग्रन्थो ने बतलाई . हो . . भविकजन !
शुद्ध देव पहिचान ॥ श्रीजिन० ॥ ५ ॥

'सूर्यभानु' अनुभव प्रकटाओ...हो. .भविकजन !
कर लो निज कल्याण ॥ श्रीजिन० ॥ ६ ॥

श्री जिन मन मंदिर आये हो भविकजन ! वासु पूज्य भगवान्
श्री जिन मन-मंदिर आये हो ॥ मिलत ॥

गौड़] ११ श्रेयास [स्वर्ग

(तज ठँगाड़ी जायगी, सरख प्रभाती में भी)

नर-पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी, नंदन धन श्रेयांस कुमार,
इस अवसर्पिणि काल मध्य, ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥ध्रु
भगवीजल में, दश दिशि लों अरु भोर किया यश का विस्तार;
उन यश के निमल प्रभाव से, हुआ अनेकों का निस्तार ॥१॥
आठ करम के दल में राजा, मोह शत्रु का किया संहार;
इस भय-भ्रम मत्र जल-निधि, से भगवंत करेंगे कम उद्धार ॥२॥
आवागमन मिटाओ स्वामी, तुम बिन किन से करूँ पुकार;
और कुदेव हम सम तार, उन पर भी कर्मों की मार ॥३॥
कोई क्रोधी कोई मानी, कोई विषयों का सरदार;
तू वा नाथ कलंक रहित, अति-विशुद्ध और सदा अविकार ॥४
आगम वेद पुराण शास्त्र, सुरगुरु कहते अगदीश अपार;
भव तारक सुन नाम जिनेश्वर, आया हूँ तेरे दरबार ॥५॥
जोगी 'सूयमानु' गुण गावे, गुरु निर्भयों का आधार;
सकल चतुर्विध संघ प्रभू के, चरण कमल का तावेदार ॥६॥
नर पति 'विष्णु' 'विष्णु' महारानी नंदनधन श्रेयांस कुमार;
इस अवसर्पिणि काल मध्य ग्यारहवें आप हुए अवतार ॥मिलत

वाज) १४ (स्वर्ग

अनंत

(तर्ज रेखता ताल दादरा)

भगवंत श्री 'अनंत' सिंहसेन नन्द हैं,
खेले 'सु-जशा, गोद, चौदवें जिनन्द हैं ॥ ध्रुव ॥
जिनके अनंत निज-गुणों का पार है नहीं;
वे नित्य और सत्य चिदानंद कंद हैं ॥ १ ॥
यह दोष-भरी वाणि क्या महिमा सुनायगी ?
गुरुराज शेष शारदा, सुरिंद मंद हैं ॥ २ ॥
आगम, निगम, पुराण, वेद शास्त्र भी सभी,
बस नेति मेति नेति बोल कर के बन्द हैं ॥ ३ ॥
पहुंचे हैं अचल स्थान कर्म द्वन्द दूर कर;
गाते हैं सकल संघ यशोगान छन्द है ॥ ४ ॥
सुनलें विनय हमारी 'सूर्य भानु' अब जरा,
काटें दयानिधान ! लगे कर्म फंद है ॥ ५ ॥
भगवन्त श्री अनन्त सिंहसेन नंद हैं
खेलें सुजशा-गोद चौदवें जिनंद है ॥ मिलत ॥

बहार] **१३ विमल** [स्वय

(तर्ज गजल वाल ९—क्या हुआ गर मर गये अपने क वास्ते)

'विमल' जिनके स्मरण बिन नर-जन्म तेरा भार है ।। ध्रुव ।
कान फाड़े, जटा, बांध, सिर मुंडाये, क्या हुआ !
भक्ति बिन पाखण्ड किरियाकांड सब बेकार है ।। १ ।।
'पढ़ा पोथा बड़ा पोथा, पंडता पगड़ा बड़ा'
तिलक छापा कर खड़ा, समझा न जगदाधार है ।। २ ।।
छन्द भरु साहित्य पढ़ क्यों व्यर्थ व्याकरणी बना,
आत्मतत्त्व न जान कर, भटका जगत मझार है ।। ३ ।।
राग द्वेष कषाय से, सहने पड़े दुख लोक में,
शरण ले जिनराज का अब, शास्त्र का जो सार है ।। ४ ।।
प्रभु बिना कोई न देखा, देव राग-मद हीन है
इसलिए संसार—जल—निधि; में वही आधार है ।। ५ ।।
स्वामि 'सूरज-भानु' के देवाधिदेव महान् हैं,
मात श्यामा नन्द प्रभु, 'कृतभानु' के सुकुमार हैं ।। ६ ।।
विमल जिनके स्मरण बिन नर जन्म तेरा भार है ।। विमल ।।

पर अंतराय ने लिया मुझे आ घेरी;
करुणानिधि ! काटो, अब करमो की बेरी ॥४॥
ले ले कर 'व्रत पच्चखान' न पूरे पाले;
नर जन्म पाय कर्तव्यो को न संभाले।
बज रही भयंकर कुटिल काल की भेरी;
करुणाकर ! काटो, अब, करमो की बेरी ॥५॥
अब जन्म-मरण का दुःख न सहा है जाता;
सांसारिक सुख में सार नजर नहिं आता।
इसलिये बनाई बुद्धि तुम्हारी चेरी,
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ६ ॥
अब तुम बिन ऐसी किन को विनय सुनाऊँ;
'सुव्रता' के नंदन ! तेरी, शरणे आऊँ।
नृप 'भानु' पुत्र अब तारो, करो न देरी;
करुणाकर ! काटो, अब करमों की बेरी ॥ ७ ॥
गुरु 'निर्ग्रथों' ने हमें ज्ञान सिखलाया;
तुम पर दृढ़ श्रद्धा करना धर्म बताया।
अय ! सूर्य्यभानु ! उनकी ही कृपा घनेरी;
करुणानिधि ! काटो अब करमो की बेरी ॥ ८ ॥
धनं धर्मनाथ ! धरमावतार ! सुन मेरी,
करुणाकर ! काटो, अब करमों की बेरी ॥मिजत

पद्म) (स्वर्गी

१५
धर्म

(तर्ज—लावणी)

धन 'धर्म-नाथ' परमातवार सुन मेरी,
करुणा-निधि ! काटो, भव कर्मों की बेरी ॥ ध्रुव ॥
मैंने भव भव में जीव अनेक सताये;
सज्जन पुरुषों पर, मिथ्या दोष लगाये।
फँस मोह जाल में तजी भक्ति प्रभु ! तेरी;
करुणा कर ! काटो भव कर्मों की बेरी ॥ १ ॥
ग्रामीण सुभर सम विषयों में ललचाया;
पर नाथ ! आज तक भी सन्तोष न पाया;
संचय करली भय-प्रद पापों की ढेरी;
करुणानिधि ! काटो भव कर्मों की बेरी ॥२॥
ना हाय ! कभी दीनों को सुख पहुँचाया;
सुख-दाता को भी उल्टा पाठ पढ़ाया ॥
क्या कहूं ? नाथ ! चहुं-गति में खाई फेरी;
करुणाकर ! काटो ! भव करमों की बेरी ॥ ३ ॥
सच्चे गुरुओं ने धर्ममार्ग समझाया;
तरा स्वरूप भी कई बार बतलाया !

अज] १७ [स्वर्ण
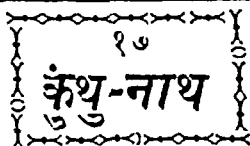
कुंथु-नाथ

तर्ज श्याम कल्याण या चौक भैरवी ताल ३
(कुण जाणे बाबा दुनियाँ मे पीर पराई)

दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे;
कुंथुनाथ जिनराज हमारे, अविकारी कहलावें ॥ ध्रुव ॥

चातक ज्यों चित से करता है स्वाति वृन्द की चिर आशा,
नट-कुल सकल खेल करता निश्चल मन होकर क्या खासा ।
भ्रमर अनन्य प्रेम से लेता, मालति, पुष्प मधुर वासा;
लोभी पुरुष निरंतर करता, द्रव्य प्राप्ति की अभिलाषा ॥
तैसे तीर्थंकर प्रभु स्वामी हमको अधिक सुहावै;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ १ ॥

आठों कर्मों के राजा को पहले प्रभु ने नाश किया,
समकित मोह चरित्र मोह के बल को पल में ह्रास किया ।
ज्ञानावरण दरसनावरण रु अंतराय को त्रास दिया,
वीर्य अनंत अनंत ज्ञान दर्शन अनंत को पास लिया ।
फिर न रहा ऐसा शत्रु जो, निज गुण से लड पावे,
दुनियां में ऐसा देव नज़र नहिं आवे ॥ २ ॥

राग) १६ (स्तवन

शांति

(तर्ज—पीछू आज अयोध्या नगरी के मांही हर्ष भरे)

शांति सरोवर शांति जिनेश्वर ! जन्मत शांति देश में छाई—ध्रुव ॥

मार मृगी दुरभिक्ष निवारे,
विविध व्याधियाँ नाथ मिटाई ॥ १ ॥

अशरण—शरण सहायक सबके,
गावें सकल सुरेन्द्र बधाई ॥ २ ॥

भव भव में बहु देव अराधे,
पर न मिला तुम सा सुखदाई ॥ ३ ॥

अष्ट सिद्धि नवनिधि के दाता,
'अचला'—नंद अचल गति पाई ॥४॥

शुद्ध गुरू निर्ग्रंथ हमारे,
अचल प्रभु की भक्ति बनाई ॥ ५ ॥

विश्वसेन कुल दीपक ! स्वामी !
नृप—मानु सुमिरो चितलाई ॥ ६ ॥

शांति सरोवर शांति जिनेश्वर, जन्मत शांति देश में छाई

कल्प वृक्ष अरु काम धेनु सम धर्म मोक्ष का जो दाता;
जिन की सेवा से शुभ गति में, इच्छित शिव संपति पाता।
तारण तरण जहाज, धन्य जिनराज, त्रिलोक पिता माता,
'सूर' पिता 'श्री' देवी माता-सुत गुण गाता हर्षाता;
गुरु निर्ग्रंथो की किरपा से 'सूर्य्य भानु' दरसावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ६ ॥
कुंथु नाथ जिन राज हमारे, अविकारी कहलावे;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ मिलत ॥

करम वेदनी दूर हटा कर अव्याबाध हुए स्वामी,
आयु कर्म को क्षय कर के अवगाहन निर्मल प्रभु पायी।
नाम कर्म को नाश किया जब निराकार हो शिव-धामी,
गोत्र कर्म का मल हटा बन गये अगुरु लघु अभिरामी।
आठ गुणों को धारण कर के सिद्ध रूप को पावे,
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ३ ॥

दीन अनाथ गाय वनिता गो का हत्यारा हो पापी,
मांस मद्य खाता, पीता, छः कायों का जो परितापी।
शास्त्रों की मर्यादा तोड़ कर, झूठी भी जिसने थापी
विषय कषाय पुष्ट करने को हिंसा करता बिना मापी
वह भी यदि शरणे आजावे, भव समुद्र तिर जावे।
दुनियां में ऐसा देव नजर नहीं आवे ॥ ४ ॥

आत्म प्रकाशक, जगदुद्धारक, विरद जिनेश्वर तेरा है,
तेरी महिमा का गाना अब जीवन, जीवन मेरा है।
चंद्र चकोर दंपती में ज्यों होता प्रेम घनेरा है,
त्यों तेरा ही महा प्रेमी! मेरे मन मांहि बसेरा है।
धन्य भाग्य है उस नर का जो, तीर्थंकर को ध्यावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ५ ॥

कल्प वृक्ष अरु काम धेनु सम धर्म मोक्ष का जो दाता;
जिन की सेवा से शुभ गति में, इच्छित शिव संपति पाता।
तारण तरण जहाज, धन्य जिनराज, त्रिलोक पिता माता,
'सूर' पिता 'श्री' देवी माता-सुत गुण गाता हर्षाता;
गुरु निर्ग्रंथो की किरपा से 'सूर्य्य भानु' दरसावे,
दुनिया में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ ६ ॥

कुंथु नाथ जिन राज हमारे, अविकारी कहलावे;
दुनियां में ऐसा देव नजर नहिं आवे ॥ मिलत ॥

मेरावती) १८ (स्वर्ण

अरह

तर्ज—सोरठ, म्हारा आवां बोल मोरा, र, मारे श्याम बिना जीवड़ोरा

जो अरहनाथ को ध्यावे, हो, सब दु ख नष्ट हो जावे ॥ ध्रुव

निर्गुण मम सिद्ध सम प्राणी,
निज स्वरूप को पावे, हो, जो० ॥१॥

जग जीवन की झीनी चदरिया,
प्रभु का रंग चढ़ावे, हो, जो० ॥२॥

चौरासी योनी में भटक्यो,
फिर जन्मना आवे, हो, जो० ॥ ३ ॥

मानव-जन्म अमोलक पायो,
विरथा नाँहि गमावे, हो, जो० ॥४॥

' देवि ' ' सुदर्शन ' नृप नंदन का,
चहुँ दिसि यश गुंजावे हो, जो० ॥५॥

' सूयभानु ' गुरु निग्रंथों के,
चरणों शीप नमावे, हो, जो० ॥६॥

कुभ] १९ मल्लि [नील

तर्ज–गजल ताल ३, इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी ॥ ध्रु० ॥

जग की वन-स्थली में, हम मोर बन के नाचैं;
तुम मेघ बन के आना, सूखी पड़ी है क्यारी ॥१

जल के सरोवरो में, हम फूल बन खिलेंगे;
तुम सूर्य्य बन के आना. अँधियारि रात कारी ॥२

फूले फले अनूठे, उद्यान हम बनेंगे,
ऋतु राज बन के आना, शोभा बने निराली ॥३

बन कर चकोर स्वामी, देखेंगे राह तेरी;
तुम चंद्र बन के आना, निरखें छटा तुम्हारी ॥४

हम दीन हीन बन के, दर पर खड़े रहेंगे;
दातार बन के आना, हमको समझ दुखारी ॥५

संसार में हमारे गुरु देव हैं सहारे,
सब को उन्हीं ने तारे, अब की हमारी बारी ॥६

धन तात 'कुंभ' माता, 'परभावती' के प्यारे;
अय 'सूर्य्य भानु ! 'मेरे मन में बनो बिहारी ॥७

प्रभु मल्लिनाथ स्वामी, यह वीनती हमारी ॥मिलत ॥

मी] [स्वाम

१० मुनि-सुव्रत

(तर्ज—मल्हार)

मुनि सुव्रत स्वामी, अन्तरयामी, महिमा तेरी अपार ॥ध्रुव॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, अचल अमल अविकार;
एक, अनेक, अखंड, सूक्ष्म-तम, अनुपम सुख-दातार ॥१॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निगम-निरूपण-सार;
निराकार निर्भय, निखिलेश्वर, निष्कलंक अवतार ॥२॥
तेरी सिद्ध दशा सम मेरा, आत्म-स्वरूप, विचार;
जीवा जीव भिन्नता से यह, प्रति भासित संसार ॥३॥
शुक सेमर मृग तृष्ण सम, संशय संसार मँझार;
सीपरि रजत स्वप्न संपति सम कल्प्य जगत व्यवहार ॥४
वंध्या सुत आकाश पुष्प सम, भव कल्पना असार;
स्यात्मिकाश ध्रुव निज स्वरूप समझत सब-भ्रान्ति हार ॥५
'सुमति' पिता 'पद्मावति' माता-नन्दन सुगुणागार;
"सूपमाल" अनुमय स्थिति प्रकृति, गुरुओं का आधार ॥६
मुनिसुव्रत स्वामी अन्तर्यामी महिमा तेरी अपार ॥ मिलान ॥

नलि कमल) २१ (स्वर्ण

नमि

(तर्जः—मेरे मौला बुलालो मदीने मुझे)

नमीनाथ प्रभु से मिलादो कोई,
सारे बंधन दूर भगादो कोई ॥ध्रुव॥

चैन पड़ता है नहीं हमको यहां अब तो जरा
प्रभु के अनोखे रूप ने मन भक्ति भावों से भरा।
जरा चहरा सुनहरा दिखादो कोई ॥ नमी ॥१॥

यहां ढूंढा वहां ढूंढा दर बदर फिरता फिरा
पर पता पाया नहीं दिन रात दुखों से घिरा।
कहां छिप कर है बैठा बता दो कोई ॥ नमी॥२॥

इस समय इस काल में इक्कीसवां जिन राज था
"विजय" "विप्रा" नंद था भवियों का जो सिरताज था
उनका चारु चरित्र सुनादो कोई ॥ नमी ॥ ३ ॥

सत्य शिव सौंदर्य मय, जिनका स्वरूप महान् है

ज्ञान मय शुभ ध्यान मय सम्पूर्ण सौख्य निधान हैं।
अनुभव अमृत का प्याला पिलादो कोई ॥नमी४॥

मल रहित घन सिद्ध पदवी पर अचल आसीन हैं
निज गुणों में लीन हैं जो सर्वथा मय हीन हैं।
मरी उनसे जुदाई हटादो कोई ॥ नमी ॥ ५ ॥

डांगि सूरजभानु को निर्ग्रन्थ ने समझा लिया
डूबते संसार जल-निधि में शरण पकड़ा दिया।
भव करमों का दुःख छुड़ादो कोई ॥ नमी ६ ॥

२२

शख) **नेमि** (श्याम

(तर्ज लावणी कव्वाली)

भज मन "नेमिनाथ" भगवान दया का पाठ पढ़ाने वाले ।ध्रुव।
माता शिवा देवि के जाये, नृपति समुद्र विजय सुख पाये।
हरि के अनुज नाथ कहलाये, यादव वंश दिपाने वाले ॥१॥
आप आयुध शाला में जाय, दिया पंचानन शंख बजाय।
भगे सुन वासुदेव महाराय, त्रिखंडी नाथ कहाने वाले ॥२॥
देख कर सहसा नेमि कुमार पड़े गिरिधर अचरज मंझार
प्रभु ने उनका जान विचार, बने भुज दण्ड बढ़ाने वाले ॥३॥
कहा 'माधव'! सुनलो यह बात! झुकादो आप हमारा हाथ!,
लटके बाहू पर यदुनाथ, नाथ! हरि को शरमाने वाले ॥४॥
कृष्ण ने अतुल जान बलवान चढ़ाई आडम्बर से जान।
टेर सुन पशुओं की भगवान, नार राजुल छिटकाने वाले ॥५॥
चढ़े गिरिनार हमारे स्वामी तीर्थंकर बन शिव गति पामी।
'सूरजभानु' मोक्ष का कामी गुरु निर्ग्रन्थ' सिखाने वाले ॥६॥
भज मन 'नेमिनाथ' भगवान दया का पाठ पढ़ाने वाले ॥मिलव॥

राग) २१ (ताल

पार्श्व

(तर्ज—माइ मैं तो दरद दिवानी, मारा, दरद न, जाने कोय)

मन में आय बसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ ध्रुव ॥

रोम रोम में रमिये स्वामी;
ज्यों फूलन में गंध ॥ मन में० ॥ १ ॥

अंग अंग में प्रेम रंग हो;
ज्यों भृंगन मकरंद ॥ मन में० ॥ २ ॥

विषय संग आसंग न होवे;
ज्यों जल में अरविंद ॥ मन में० ॥ ३ ॥

नाग नागिनी देव बनाये;
'पद्मावति' धरणिन्द ॥ मन में० ॥४॥

कमठा सुर उपसर्ग मचाये;
डिगे न ज्यों अचलिन्द ॥ मन में० ॥५॥

'अश्वसेन' 'वामा' के नंदन,
'सूर्य भानु' सुख कंद ॥ मन में० ॥ ६ ॥

मन में आय बसो प्रभु ! पारस नाथ जिनंद ॥ मिलन ॥

सिंह] २४. महावीर [स्वर्ण वर्ण

(तर्ज आशावरी ताल धमाल)

मैं तो आयो शरण तुम्हारी, वीर प्रभु! दीनों के हितकारी ।ध्रुव।
'चंडकोशि' को नाथ उधारा महा परीषह भारी,
अर्जुन माली था महा पापी, पहुंचा मोक्ष मंझारी ॥१॥
पावांपुरी में समवसरण की, सुन्दर छटा निराली;
गौतम प्रमुख इग्यारह पंडित, करण विवाद विचारी ॥२॥
इन्द्र जालिया कहते २ आये बारी बारी,
मनका संशय दूर निवारी, किये महाव्रतधारी ॥ ३ ॥
आनंदादिक श्रावक तारे, चंदन बाला नारी,
धन्ना शालि भद्र उद्धारे, अति महिमा विस्तारी ॥ ४ ॥
धरम नाम पर पशु हिंसा, करते थे घोर अनारी,
परम धरम का मरम बताया, धन्य दया अवतारी ॥ ५ ॥
शूद्र जनों को अधिक सताते थे जब अत्याचारी,
हरि केशी आदर्श बनाये, किये मोक्ष अधिकारी ॥ ६ ॥
तारे तात सिद्धारथ राजा, अरु त्रिसला महतारी
ऐसे आप अनेकों तारे, अबकी हमारी बारी ॥ ७ ॥
शासन के सरदार निहारो, दर पर खड़ा भिखारी,
अब स्वामी मत देर लगाओ, सूर्य भानु बलिहारी ॥ ८ ॥
मैं तो आयो शरण तुम्हारी, वीर प्रभु दीनों के हितकारी। मि.

मंगल

(सर्व—कुंडलियाँ)

१६ ६१

पूषण प्रदश्च विक्रमी, कार्तिक का था मास,
दीपावलि के शुभ दिवस उदित हुआ उल्लास।
उदित हुआ उल्लास, 'भक्ति प्रभु की सुखदाई',
यही समझ कर 'सूर्य भानु' चौपाई गाई।
नित प्रति तीनों काल, पढ़ेंगे जो नर नारी,
सिद्ध लोक के वे निश्चय, होंगे अधिकारी ॥१

(दोहा)

गुरुनिर्ग्रंथों की कृपा, पाया सत्य विवेक,
सकल चतुर्विध संघ को, भेंटकरी है एक ॥२ ॥

श्री जिन भक्ति

द्वितीय खण्ड

१

सपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज—होली, दुमरकी, "ब्रज मंडल देश दखाओ रसिया")

मिल आओ, रे, चौबीस जिन ध्याओ मिल आओ ।ध्रुव।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन;

सुमतिनाथ के गुण गावो; मिल० ॥१॥

शीतल जिन सिरियंस सुमिर लो,

वासु पूज्य भज सुख पाओ; मिल० ॥२॥

विमल अनंत धर्म तीर्थंकर;

शांति नाथ को सिर नाओ मिल० ॥३॥

कुंथु अरह मल्ली मुनि सुव्रत,

नमि नेमि मत बिसराओ मिल० ॥४॥

पारसनाथ वीर प्रभु स्वामी,

जिन शासन में हुलसाओ; मिल० ॥५॥

गुरु निर्ग्रन्थ देव बतलाया,

'सूर्यभानु' शरणे आओ, मिल० ॥६॥

मिल आओ र चोबीस जिन ध्याओ; मिल आओ ॥मिलता॥

२

संपूर्ण-जिन-भक्ति

(तर्ज काली कमली वाले तुम पर लाखों सलाम)

तन मन तुम पर वारे, मेरेप्यारे जिनंद, मेरे प्यारे जिनंद ५,॥ध्रुव

ऋषभ अजित संभव अभिनंदन;
सुमति पद्म सुपारस चंदन ।
दीनो के दुलारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ १ ॥

सुविधि सितल सिरियंस मुनीश्वर;
वासु पूज्य सिरि विमल जिनेश्वर।
अनंत नाथ सहारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥ २ ॥

धर्म, शांति, कुंथू, अर स्वामी;
मल्लिनाथ, मुनि सुव्रत नामी ।
नेमि नमी रखवारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु;
ग्यारह गणधर विहर मान विभु ।
ये सब धर्म सितारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥४॥

अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन,
मुनिमन रंजन, भवदुख भंजन ।
सिद्ध सुपद को धारे मेरे प्यारे जिनंद ५ ॥५॥

उपाध्याय आचार्य्य हमारे,
सकल संत जन धर्म दुलारे।
पाँचों पद विस्तारे मेरे प्यारे जिनंद ॥ ६ ॥
गुरु निर्ग्रंथों ने सिखलाया,
यों नवकार मंत्र बतलाया।
"सूर्य्य भानु" स्वीकारे, मेरे प्यारे जिनंद ॥७॥
तन मन तुम पर वारे मेरे प्यारे जिनद मेरे प्यारे जिनंद ॥

३

सपूर्ण-जिन भक्ति

(तर्ज—अल्ला हू अल्ला हां)

मेरे तो सहारे जिनवर हैं, जिनवर हैं २ ॥ ध्रुव ॥

ऋपभ अजित संभव अभिनन्दन,
सुमति पद्म सुपारस चंदन।
दीनो के दुलारे जिनवर हैं२ ॥१॥

सुविधि सितल सिरि यंस जिनेश्वर,
वासु पूज्य सिरि विमल मुनीश्वर।
अनंत शिवपुर वारे जिनवर हैं२ ॥२॥

धर्म शांति कुंथु अर स्वामी,
मल्लिनाथ मुनि सुव्रत नामी।
नेमि नमिश्वर प्यारे जिनवर हैं२ ॥३॥

पार्श्वनाथ सिरि महावीर प्रभु
ग्यारह गणधर विहरमान विभु।
ये शासन रखवारे जिनवर हैं२ ॥४॥

अजर अमर अखिलेश निरंजन,
मुनि मन रंजन भव दुःख भंजन।

सिद्ध सुपद को धारे जिनवर हैं२ ॥५॥
उपाध्याय आचार्य हमारे,
सकल संत जन धर्म सुधारे।
पांचों पद विस्तारे जिनवर हैं२ ॥६॥
गुरु निर्ग्रन्थों ने सिखलाया
यह नवकार मन्त्र बतलाया
'सूरज भानु' हमारे जिनवर हैं२ ॥७॥

४६

सिद्ध-जिन

(तर्ज-होली)

सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन, सच्चा आनंद मनाओ, रे,
सिद्ध पद ध्याओ, रे ॥ ध्रुव ॥
पांचों विषयों में रचि पचि क्यों अपनी शान गंवाओ रे
परमारथ पाकर सांसारिक दुख हटाओ रे ॥ सिद्धपद० १ ॥
चंचलता को दूर निवारो, निश्चल मन बन जाओ रे;
दर्पण सम चित मांहि, ब्रह्म का रूप लखाओ रे ॥२॥
आगम वेद पुरान शास्त्र का सार समझ गुण गाओ रे,
आत्म गुणों का अनुभव कर के, लगन लगाओ रे ॥ ३ ॥
दर्शन ज्ञान अनन्त अटल संस्थान अतुल बल पाओ रे
निराकार लघु गुरू विहीन; गुण को प्रकटाओ रे ॥४॥
निर्विकल्प, निर्लेप, निरामय, निर्मल तम कहलाओ रे,
'सूर्य भानु' गुरु निर्ग्रन्थो पर प्रेम जमाओ रे ॥ ५ ॥
सिद्ध पद ध्याओ रे भविजन सच्चा आनंद मनाओ रे,
सिद्ध पद ध्याओ रे ।

५ सिद्ध जिन

(तर्ज—आ, आ, आ दिल जान, भर २ जाम पिला गुलजाला बनादे मतवाला)

जय जय जय भगवान—
अजर अमर अखिलेश निरंजन जयति सिद्ध भगवान ।।ध्रुव

अगम, अगोचर, तू अविनाशी,
निराकार, निर्भय सुख—राशी।
निर्विकल्प, निर्लेप निरामय निष्कलंक निष्काम ।। जय० ।।१

कर्म न काया मोह न माया,
भूख न तिरखा रंक न राया।
एक स्वरूप अनूप अगुरुलघु निर्मल ज्योति महान ।।जय०२।

हे, अनघ ! हे, अंतरयामी;
अष्ट गुणों के धारक स्वामी।
तुम बिन दूजा देव न पाया त्रिभुवन से उपराम ।।जय०।।३।।

गुरु निर्ग्रंथो ने समझाया;
सच्चा, प्रभु का, रूप बताया।
अब तुम में ही मिल जाऊँ मैं ऐसा दो वरदान ॥जय०॥४॥

'सूर्य भानु' है शरण तुम्हारी
मेरी करना प्रभु रखवारी।
मुझ में तुझ में भेद न पाऊँ, जय २ कृपानिधान ॥जय०॥५

जय…जय…जय भगवान–अजर अमर अखिलेश निरंजन
जयति सिद्ध भगवान ॥ मिलत ॥

१

सिद्ध जिन

(तर्ज—आखिर नार पराई है)

मेरे मन में आना रे, अपना रूप दिखाना रे ॥ ध्रुव ॥

जब मैं तेरा ध्यान लगाऊँ;
बस तुझ को ही तुझ का पाऊँ।
ऐसी लगन लगानारे अपना० ॥ १ ॥

तन मन धन तुम पर विसराऊं;
तेरा ही प्रभु ! अंश कहाऊं।
ज्योति में ज्योति मिलाना, रे, अपना० ॥ २ ॥

तरी है प्रभु अकथ कहानी,
हारे ब्रह्मा विष्णु भवानी।
निर्गुण को समझाना रे; अपना० ॥ ३ ॥

सोई ब्रह्म नित्य अविनाशी,
अशरण-शरण, सदा सुखराशी।
जन्म रू मरण मिटाना, रे, अपना ॥ ४ ॥

गुरु निर्ग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
"सत्य भानु" ने भजन सुनाया।
निर्भय पद पहुँचाना रे, अपना० ॥ ५ ॥

मेरे मन में आना, रे, अपना रूप बताना, रे, ॥ मिलना॥

७

देव

(तर्ज—पितु मातु सहायक स्वामि सरन तुमही इक नाथ हमारे हो)

जिन-पति, जिन-वर, जगदीश, नाथ, तुमही, इक इष्ट हमारे हो
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव-भय-भंजन हारे हो॥ध्रु.

शुभ गुणागार धरमावतार. जग-जीवन, प्राण हमारे हो,
महिमा तुम्हार, पावै न पार, सुरगुरु सरिसहु बुध हारे हो॥१

कर काम क्रोध मद लोभ हान, शुभ शुक्ल ध्यान को धारे हो;
करुणा निधान, संपूर्ण ज्ञान की संपति के अधिकारे हो॥२

कर क्षीण मोह अरु द्रोह कर्म-संदोह विदारन हारे हो,
भय-कारि भवोदधि मांहि परैं, जीवों के एक सहारे हो॥३

जँह लौ आकाश अवस्थित है, तंह लौ महिमा विस्तारे हो;
श्री सकल संघ के "सूर्य्यभानु" तुमही इक रच्छन हारे हो॥४

जिन-पति जिनवर जगदीश नाथ तुम, ही इक इष्ट हमारे हो,
अज, अजर, अमर, अखिलेश, निरंजन, भव भय-भंजन हारे हो

अक्षय ज्ञान सुधा-निधि, दूषण गण से रहित गिरा गुण खान।
वृंदारक-पति-पूजित, मंगल मय हों सदा वीर भगवान॥

———

८
गुरु

तर्ज—गजल वाल कमाल, अगर हम बागवां होते तो गुलशन

पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ध्रुव ॥
पंच इन्द्रिय विजय कर के, हुए जो विषय के त्यागी,
जो नवविधि शील के धारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ १ ॥
चतुर्विध तज कषायों को, बने संयम के अनुरागी,
करें शासन की रखवारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ २ ॥
त्रिगुप्ती युक्त पांचों महाव्रतों को शुद्ध जो पालें,
विमल श्रुत ज्ञान है भारी धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ३ ॥
आहार निर्दोष लाते हैं, बयालीस दोष को टाली,
वाणि जिनराज की प्यारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ४ ॥
भजो निर्ग्रन्थ गुरुओं को, सकल श्री संघ हितकारी,
यह 'सूरजभानु' बलिहारी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ ५ ॥
पंच आचार के स्वामी, धन्य गुरुदेव उपकारी ॥ मिलत ॥

पाप-पराग पुंज प्रज्वालक पावक पावन पुण्य प्रधान
होवें मंगल रूप निरन्तर, सद्गुरु सच्चे-दया-निधान ॥

६
धर्म

(तर्ज—पहाडी धुन हमारे वशी वाले से नाहिं वनेगी)

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ ध्रुव ॥

समझे जग के सुख सब ठग हैं।
ठगाये गये हम मारे करम के ॥धरम०॥१॥

रीझे हुए थे मनोहर तन पै,
भरे मांस मज्जा रुधिर औ चरम के ॥धरम०॥२॥

पा गये वस्तु हमारी हमी में;
फिरते फिरे, मारे मारे भरम के ॥धरम०॥३॥

गुरु निर्ग्रन्थ मिले उपकारी;
सुनाये वचन हमको पूरे मरम के ॥धरम०॥४॥

मोहनींद से तब हम जागे,
सुन्न हुए अब मारे शरम के ॥धरम०॥५॥

'सूर्य भानु' अनुभव प्रकटाये;
जान गये गुण पुरुप परम के ॥धरम०॥६॥

धरम है हमारा औ हम हैं धरम के ॥ध्रुव॥ मिलत॥

जन्म मरण दुख जगत में, जागो रे मति मान।
'सूर्यभानु' आराध लो, जैन धर्म गुण खान॥

१०

जिन-वाणी

(तर्ज—सुखकर दुख हर प्रणत पाल प्रभु जय रघुराई जय जय)

जय कल्याणी, जय सुखदानी, जय जिनवानी, जय, जय ।।ध्रु०

महावीर मुख कमल प्रकाशी,
सुमिरत सब दुख जावे नाशी ।
नमस्कार सौबार करूं मैं जय गुण-खानी जय, जय ।।१।।

स्याद्वाद गल हार विराजै,
सप्तभंगी नय भूषण भ्राजै ।
माला दया धर्म की साजै, जय जग-मानी जय, जय ।।२।।

तेरे लिये देव गण तरसें,
तीर्थंकर मुख अमृत बरसै ।
मोह कर्म बल जाय मूल से जिसने ठानी, जय, जय ।।३।।

मगन कियौं करमन दल भागे,
दिव्य ज्ञान की ज्योतिहु जागे ।
पावैं अटल अचल अक्षय सुख भव जग प्राणी जय, जय ।।४।।

अब कर्म दावानल तायो,

'डांगी सूरज' शरणे आयो ।

भवसागर से पार उतारो, जय महारानी, जय, जय ॥५॥

जय कल्याणी, जय सुख-दानी, जय जिनवानी, जय, जय ॥मि०

अजर अमर करते हमें, अमृत सम जिन वैन,

सच्चे सुख-दाता सदा, आराधौ दिन रैन ॥

११

सिद्धांत

(तर्ज—श्यामकल्याण, श्री राधे रानी द डारो नी बंसरि मोरी)

प्रभु ने जो देखा सो होई ॥ ध्रुव ।

आरत ध्यान करत जो निशि दिन;
है अति मूरख सोइ ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

अपने पुरुषारथ का प्यारे;
दंभ करो मत कोइ ॥ प्रभु० ॥ २ ॥

व्यर्थ विचारों में रचि पचि के;
क्यों मरते हो रोइ ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

होना हो सो होय रहेगा;
डारहु चिन्ता खोइ ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

इस जग में सब ने ही भोगे
सुख दुख के फल दोइ ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

'सूर्यभानु' अलमस्त रहो सब,
निज पद मँह मन पोइ ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

प्रभु ने जो देखा सो होइ ॥ मिलत ॥

१२

पार्श्व-चरित्र

तर्ज—पचरगी द्रोया)

धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी;
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मनभाये जी॥ध्रुव

१

निज शयनागार सजा सोई महारानी,
महाराज, उसे सुख निद्रा आई जी,
देखे चौदह शुभ स्वप्न सुनो सब ध्यान लगाई जी ॥
गज उज्जवल, श्वेत वृषभ, देखा बनराई,
महाराज, देख लक्ष्मी सुख पाई जी,
लख सुमन माल, रवि, शशि, दर्शन कर अति हरसाई जी ॥
नभ मंडल में फिर ध्वजा एक फहराई;
इक कलश कमल सरवर भी दिये दिखाई।
लख पयनिधि, सुर विमान, फूले न समाई;
फिर रत्न राशि, अरु, अग्नि शिखा दरसाई।
पति शय्या पर जाय, दिये स्वप्न सुनाय,
नर पति हरसाय, कहा मन में विचार ॥२॥

प्रिये ! पुत्र ऐसा प्रकटेगा,
जो भव भव के रोग हरेगा ।
या होगा छ. खंडी स्वामी;
या होगा तीर्थंकर नामी ॥
ईसा से आठ सौ वर्ष पूर्व हे स्वामी!,
महाराज, आप भारत में आये जी, धन 'काशी नरेश कुमार" नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥ १ ॥

२

धन पौष मास धन कृष्ण पक्ष सुखदाई,
महाराज, धन्य दशमी तिथि आई जी,
भव तीर्थ हुए तेइसवें तीर्थंकर जिन-राई जी ॥
कम्पाय मान निज आसन लख सुरराई, महाराज विचारे ज्ञान लगाई जी प्रभु जन्म समझ कर तुरत सुघोषा घंटि बजाई जी ।
सुर असुर इन्द्र इंद्राणी मिल कर आवें;
अपना पूरा सौभाग्य समझ सुख पावें ।
नाचे दे २ ताल रागिनी गावें;
कनकाद्रि शृंग पर जा प्रभु को नवराये ॥
अपना कर्तव्य कर; रक्खा चरणों में सर;
सुर गये निज घर; हुआ उत्सव महान २ ॥

वंदी दुर्जन दिये छुडाई,
घर २ सुख प्रद बॅटत वधाई ।
उस छवि को हम कैसे गावें,
जिसका सुर गुरु पार न पावें ॥
क्या कहूं ? नाथ, माता, मन में हर्षानी,
महाराज, पुण्य के फल प्रकटायेजी,
धन काशि नरेश कुमार नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥२॥

३

रमते रमते इक दिन गंगा तट आये,
महाराज चरण से नदी छुआनी जी,
तब से सुर-सरिता का कहलाता, निर्मल पानीजी ॥
पारस प्रभु के उन चरण कमल को ध्याओ,
महाराज, महा मंगलमय मानी जी
जिनके प्रभाव से आज अहो गंगा पूजानी जी ॥
उस तट पर ढोंगी एक तपस्वी आया,
उसने अपना आडम्बर खूब बनाया,
राजा को भी लोगो ने जाय सुनाया,
दर्शन कर के वह भी मन में सुख पाया ॥
भोले, योगी, प्रकार कहें पारस कुमार,
तप तेरा असार अरे ज्ञान विचार २

नाग नागिनी जलते माई
काष्ठ चीर प्रत्यक्ष दिखाई।
योगी अपनी शान गंवाई
क्रुद्ध हुआ सुध बुध बिसराई ॥
नव पद दे नाग नागनी को उद्धारा,
महाराज इन्द्र इन्द्राणि बनाये जी ॥
धन काशि नरेश कुमार, नाथ त्रिभुवन मन भायेजी ॥३॥

४

फिर तीस बरस तक गृहस्थ धर्म निभाया,
महाराज, जगत निस्सार लखाया जी
फिर नगर बनारस निकट सकल बनाज हटाया जी ॥
दीक्षा भगवति की धार सत्य सुख पाया,
महाराज धर्म का मार्ग सुहायाजी,
धन कमठ सुर उस योगी ने उपसर्ग मचायाजी ॥
मूसलाधार जल रज बरसा बरसाई।
भय-प्रद प्रेतों को छोड़ त्रास दिखलाई ॥
उस पापी ने पर्याप्त व्याधि पहुंचाई;
उल्टे उस पर यम ने तलवार चलाई ॥
नहिं क्रोध लिगार, प्रभु के दिल मझार,

क्षमा कर दी अपार, धन धन जिनराज २

धन धरणेन्द्र देवकी माया ।
द्रव्य दुःख प्रभु का विसराया ॥
केवल ज्ञान आप प्रकटाया;
भाव दुःख को दूर भगाया ।

अचला विमला केवल कमला को पाई,
महाराज वीतरागी कहलाये जी
धन 'काशि नरेश कुमार' नाथ त्रिभुवन मन भाये जी ॥

द्रुम 'अशोक' के नीचे प्रभु आप विराजे,
महाराज, सुर सुमन वृष्टि रचाई जी;
पैंतिस विधि वानी शिवसुखदानी आप सुनाई जी ।

प्रभु चरण कमल कर स्पर्श ऊर्ध्व गति पावै,
महाराज, चमर युग रहे सिखाई जी,
उस रतन जटित सिंहासन पर प्रभु मूर्ति सुहाई जी ॥

तन का प्रकाश भामंडल रूप बनाया,
देवो ने नभ में दुंदुभि शब्द बजाया,
सब भजो त्रिलोकीनाथ, त्रिछत्र धराया ।
आठो प्रतिहार्य्य सुनाय सत्य-सुख पाया ॥

सत गुरु निरग्रंथ, समझाया शिव पंथ, कर निगमो का मंथ, धन २ गुरुराज, धन धन गुरु राज ॥

नाग नागिनी जलते माई
काष्ठ चीर प्रत्यक्ष दिखाई।
योगी अपनी शान गंवाई
क्रुद्ध हुआ सुध बुध बिसराई॥
नव पद दे नाग नागनी को उद्धारा,
महाराज इन्द्र इन्द्राणि बनाये जी॥
बन काशि नरेश कुमार, नाम त्रिभुवन मन भायेजी।।२॥

४

फिर तीस बरस तक गृहस्थ धर्म निभाया,
महाराज, जगत निस्सार लखाया जी
फिर नगर बनारस निकट सकल जजाल हटाया जी॥
दीक्षा भगवति की धार सत्य सुख पाया,
महाराज धर्म का मार्ग सुहायाजी,
बन कमठसुर उस योगी ने उपसर्ग मचायाजी॥
मूसलाधार जल रज्ञ परसा बरसाई।
भय प्रद प्रेतों को छोड़ त्रास दिखलाई॥
उस पापी ने पर्याप्त व्याधि पहुंचाई;
उस्ने उस पर यम ने तलवार चलाई॥
नहिं क्रोध विगार, प्रभु क दिल ममकार,

१३

भगवती मल्लि

तर्ज़—तेरी कुदरत की गुल क्यारी, कायम है फुलवारी, फूल रही है कैसी ये फुलवारी वारी वलिहारी, तेरी कुदरत की गुल क्यारी [नाटक की रगत]

जयति जयति मल्लि कुमारी, जय भगवती हमारी,
तीर्थंकरी...जगत उद्धारन
हारी .वारी वलिहारी, जयति २ मल्लि कुमारी ॥ध्रुव॥

'कुंभ' पिता की एक दुलारी,
'प्रभावती' माता की प्यारी।
तुम समान को हुई न नारी,
जय जय जग महतारी . वारी वलिहारी०॥१॥

रूपवती अति मोह निगारी,
हुई स्वयंवर की तय्यारी।
छः राजा मोहे अति भारी,
आये सभा मंझारी ..वारी वलिहारी० ॥२॥

पुतली तुमने एक बनाई,
अन्न कौर से उसे भराई।
ढक्कन खोल उन्हें समझाई,
तन की अशुद्धताई . वारी वलिहारी० ॥ ३ ॥

चिन्तामणि पारस को ध्याओ;
मन मन में आनंद मनाओ।
पारस लोह सुवर्ण बनावे;
"पारस" निज सम सुख प्रकटावे॥
यह 'सूर्य भानु' प्रभु पर बलिहारी जावें,
महाराज, चरण में शीश झुकावे जी
धन 'काशिनरेश' कुमार, नाथ, त्रिभुवन मन भावे जी ॥५॥
धन 'अश्वसेन' नृप धन 'वामा' महारानी,
महाराज, पुत्र पारस को पाये जी।
धन काशीनरेश' कुमार नाथ त्रिभुवन मन भावे जी॥मिलत

१४

धर्म के नाम पर

तर्ज—मरना है इक रोज क्यों ना मरें वतन की शान पर हाँ मरें वतन की शान पर मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर, मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर मेरे सोने के हिन्दोस्तान पर।

मरना है इक रोज क्यों ना मरें धरम के नाम पर,
हाँ, मरें धरम के नाम पर मेरे जैन धरम के नाम पर,
मेरे दया धरम के नाम पर ॥ध्रुव॥

महावीर प्रभु का गुण गावें,
कुत्सित देवों को न मनावें।
वारें तन धन प्राण जिनेश्वर देव गुणों की खान पर, हाँ मरना०॥१

आओ जैनी वीरो आओ,
जैन धर्म पर बलि २ जाओ।
नाचें फिर इक रोज जिनेश्वर नाम सभी के जुबान पर, हाँ मरना० २

सत्य वृत्ति को कभी न छोड़ें
दया धर्म से मुख ना मोड़ें
फिर इक दिन फहराय वीर का झंडा जगत जहान पर हां, म.॥३॥

बरसी दान दियो श्री कारी
दान महात्म्य बतया भारी।
जैनी दीक्षा को मतधारी,
थापे तीर्थ चारी थारी बलिहारी० ॥ ४ ॥
जग में जीव अनेकों तारी;
नारि जाति प्रतिमा विस्तारी।
मोह दशा को दूर निवारी,
पहुंची मोक्ष मंमारी थारी बलिहारी०॥५॥
गुरु निर्ग्रन्थों ने समझाई,
थारी महिमा हमें बताई।
सकल सम अविचल निधि पाई;
सूरज भानु ' सुनाई थारी
बलिहारी जयति जयति मल्लि कुमारी,
जय भगवती हमारी ॥ तीर्थंकरी
जगत उधारन हारी थारी बलिहारी
जयति जयति मल्लि कुमारी ॥६॥

१४

धर्म के नाम पर

तर्ज—मरना है इक रोज क्यों ना मरें वतन की शान पर हाँ मरें वतन की शान पर मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर, मेरे प्यारे हिन्दोस्तान पर मेरे सोने के हिन्दोस्तान पर।

मरना है इक रोज क्यो ना मरें धरम के नाम पर,
हॉ, मरें धरम के नाम पर मेरे जैन धरम के नाम पर,
मेरे दया धरम के नाम पर ॥ ध्रु ॥
महावीर प्रभु का गुण गावें,
कुत्सित देवो को न मनावें ।
वारें तन धन प्राण जिनेश्वर देव गुणो की खान पर, हाँ मरना० ॥ १
आओ जैनी वीरो आओ,
जैन धर्म पर बलि २ जाओ।
नाचें फिर इक रोज जिनेश्वर नाम सभी के जुबान पर, हाँ मरना० २
सत्य वृत्ति को कभी न छोड़ें
दया धर्म से मुख ना मोड़ें
फिर इक दिन फहराय वीर का झंडा जगत जहान पर हां, म. ॥ ३ ॥

पंच प्रमष्ठी मन्त्र हमारा,
यही जान से हमको प्यारा।
होंगे सफली भव भरोसा रखते हैं भगवान पर, हां, म.॥४॥
सुख दुःख में ना धर्म को भूलें;
सभी आफतों को हम सहलें।
भावक भरणक वैस भय हम जन्म हिन्दोस्थान पर, हां, म॥५॥
सादा सीधा जन्म बितावें;
गुरु निर्ग्रन्थों को हम ध्यावें।
उछलें 'सूरजभान' सदा हम महावीर के नाम पर हां, म॥६॥
मरना है इक रोज क्यों ना मरें धरम के नाम पर० ॥मिलवा॥

१५

सच्चे जैनी

(तर्ज—झंडा ऊंचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा)

सर्व धर्म सम भाव दिखावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥ध्रुव॥

हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,
सिक्ख, बुद्ध, सब ही हैं भाई;
सब ने प्रभु की महिमा गाई ।
सब को अपने गले लगावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥१॥

राम, कृष्ण अरु बुद्ध हमारे,
ईशु मुहम्मद धरम दुलारे ।
जैन धर्म को सब ही प्यारे;
आओ सब को शीष नमावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥२॥

जब २ जैसे कष्ट पड़े थे ।
अत्याचार असंख्य बढ़े थे ।
जो उन पापों से झगड़े थे;
उन को श्रद्धांजलि पहुँचावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥३॥

नर नारी गोरा या काला,
ऊँच नीच, बालक या बाला ।
गूँथें इन पुष्पों की माला;

सब को सम अधिकार दिलावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥४॥

वेद पुरान कुरान पढ़ावें
सब धर्मों का मर्म बतावें,
उनमें प्रभु दर्शन करवावें ॥

तन मन धन 'जिन' पर विसरावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥५॥

सत्य दया का नाद गुँजावें,
विश्व प्रेम का राग सुनावें,
पक्षपात को दूर भगावें ।

'सूर्य्य भानु' निर्मल सुख पावें, सच्चे जैनी हम कहलावें ॥६॥

१६

उपदेश

(तर्ज—भोले राजा खिडकियां खोल रसकी बूंदें भरे)

भोले भय्या भजन कर ले, उमरिया बीत रही ॥ध्रुव॥

छिन छिन में छीजत है काया,
माया में तू क्यों भर माया।
प्रभु का ध्यान धर ले, उमरिया बीत रही ॥ १ ॥

बड़े २ पृथ्वी पति स्वामी
रहे न कोई यहां मुकामी
सुजस का घट भर ले, उमरियां बीत रही ॥ २ ॥

क्रोध मान को दूर भगादे,
दया सत्य में प्रेम लगा दे,
ईश्वर से डर ले. उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥

दुर्लभ मानुस तन को पाया,
विषयों में क्यो व्यर्थ गमाया।
अब सुकरत कर ले, उमरिया बीत रही ॥ ४ ॥

गुरू निग्रन्थ ज्ञान बतलाया,
'सूर्य भानु' को यों समझाया।
भव सागर तिरले, उमरिया बीत रही ॥ ५ ॥
भोले भय्या भजन कर ले उमरिया बीत रही ॥ मिलत ॥

१७

बच्चों का भजन

सुनो बच्चों की करुणा पुकार;
दीन बन्धु ! हैं शरण तुम्हारी ।
और नहीं आधार;
सुनो शिशुगण की करुणा पुकार ॥ ध्रुव ॥
सूरज बन मन मंदिर आओ,
अंधकार अज्ञान नसाओ ।
सब सुख के दातार ॥ १ ॥
सदाचार का पाठ पढ़ाओ,
जीवन का रहस्य समझाओ,
निर्गुण गुण भंडार ॥ २ ॥
देश दुखी है नाथ ! हमारा
'सूर्य भानु' हम बनें सहारा ।
भर दो शक्ति अपार ॥ ३ ॥
सुनो हम सब की करुण पुकार;
दीन बन्धु हैं शरण तुम्हारी,
और नहीं आधार;
सुनो बच्चों की करुण पुकार ॥मिलता॥

१८

वीर--जयंती

(तर्ज—उडा कर ले गया पंछी मेरी जंजीर सोने की)

आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं ;
सकल श्री संघ मिल कर के गुणों का गान गाते हैं ।।ध्रुव।।

धरम के नाम पर पापी, किया करते थे जब हिंसा,
दयामय धर्म बतलाया, उन्हीं का यश सुनाते हैं ।।१
नीच समझा था लोगो ने हमारी शूद्र जाति को;
उसी हरि केशि को संसार का स्वामी बनाते हैं ।।२
'पैर पैजार' कह, स्त्री जाति का अपमान करते थे,
महासति चंदना को मोक्ष में सीधा पठाते हैं ।।३
परीषह घोर सहकर के उबारा, चंड कोशी को,
दुष्ट 'अर्जुन' को भी तारा, उन्हीं को सिर झुकाते हैं ।।४
इन्द्र ने यों कहा आकर, रहूँ मै साथ रक्षा को,
कहा, अर्हंत अपनी शक्ति से ही मुक्ति पाते हैं ।।५
अहो, श्री संघ मे स्वामी! ज्ञान के फूल खिल जावें,
विजय हो जैन शासन की भावना शुद्ध भाते हैं ।।६
अरे, इस 'सूर्य्य भानु' के सदा प्रभु ही सहारे हैं;
उन्हीं ही की कृपा से भजन सुंदर हम बनाते हैं ।।७
आज महावीर स्वामी की जयंती हम मनाते हैं;
सकल श्री संघ मिलकर के गुणों का गान गाते हैं ।।मिलत

१६

महावीर-चरित्र

(तर्ज—लावनी)

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी;
महि मंडल में मार्तण्ड, परम अवतारी ॥ ध्रुव ॥
क्यों हो न ! भाग्य अब देश गौरव भारी;
जहाँ प्रकटे आप आप से जग हित-कारी।
धन तात 'सिद्धारथ' 'त्रिशला दे' महतारी ॥
उत्पन्न किया नंदन, त्रिभुवन-मन-हारी;

॥ दोहा ॥

फैला था अज्ञान का अंधकार अति चंड;
इसीलिये प्रकटित हुए थे, मार्तण्ड प्रचण्ड।
पाखंड खंडि सर्वत्र करी उजियारी;
महि मंडल में मार्तण्ड परम अवतारी॥१
तव वचन सुधा-माधुर्य्य अनूपम भारी;
भविजन-मन-मोहन-सदा शांति विस्तारी।
सद् दया धर्म सुषमा सर्वत्र प्रसारी;
यह जैन-समाज रहेगी ऋणी तुम्हारी ॥

॥ दोहा ॥

अजर अमर संसार में वर्द्धमान भगवान;
जिन की वाणी है अभी,तारण तरणि समान।

घन दर्शन ज्ञान सुसंपति के अधिकारी,
महि मंडल में मार्तण्ड चरम अवतारी ॥२॥

होती पशु हिंसा धर्म नाम पर भारी.
उस देश व्याप्त हत्या को दूर निवारी ।
पैरो की जूति कहातीं थी जब नारी;
तब चंदनबाला भेजी मोक्ष मंझारी ॥

॥ दोहा ॥

शूद्रों को पैरो तले, कुचल रहे जब हाय,
उसी समय हरिकेशि को बना दिया मुनिराय ।

सब शीप झुक वे दभी अत्याचारी,
महि मडल मे मार्तण्ड चरम अवतारी ॥ ३ ॥

बोला जब इन्द्र जिनेन्द्र शब्द उच्चारी,
मै रहूं साथ अब कष्ट पड़ेंगे भारी ।
तब बोले दीनानाथ ! उसे ललकारी;
सुर राज ! वचन बोलो तुम जरा विचारी ।

॥ दोहा ॥

तीर्थंकर की शक्ति का, क्या न तुम्हें है ज्ञान ।
स्वाभिमान की मूर्ति हैं, हमको लो पहचान ॥

काटेंगे हमारे कर्म हमीं भवहारी,
महि मण्डल में मार्तण्ड परम अवतारी ॥ ४ ॥

गौतम से ग्यारह पंडित विद्या धारी,
जो पांच २ सौ शिष्यों के परिवारी ।
सब बने साथ अणगार पद धारी,
ये जिन-शासन क "सूर्य्य भानु' रखवारी ॥

॥ दोहा ॥

गुण जिनराज अनेक हैं तारण तिरण जहाज,
यथा शक्ति उल्लास से, स्वल्प सुनाये आज ॥

नहिं अधिक और कहने की शक्ति हमारी ।
महि मंडल में मार्तण्ड परम अवतारी ॥ ५ ॥

धन श्रीमद् वीर जिनेश्वर पर-उपकारी,
महि मंडल में मार्तंड परम अवतारी ॥ मिलत ॥

जिन भक्ति

तृतीय खण्ड

१
आज है तो कल नहीं

(हरि गीतिका)

फूला फला उद्यान में फूला फला, देखा, अहो,
आज 'सूरजमान' वह कुम्हला गया क्यों कर, कहो।
एक सा होता कभी संसार का प्रति पल नहीं,
यह दशा अपनी, समझलो, आज है सो कल नहीं ॥१॥

तीव्र किरणों से दिवाकर विश्व को चमका रहा,
शाम को वह ढल गया, हमको यही सिखला रहा।
सोच 'सूरजमान' सूरज भी सदा निश्चल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥२॥

आज तो देखा जिन्हें था राग रंग उमंग में,
कल उन्हें हमने निहारा, सिर पटकते दुख में;
देख 'सूरजमान' सुख दुख, मनपरत अविचल नहीं
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नहीं ॥३॥

मान मत करना कभी अपने विभव धन धाम का,
याद 'सूरजमान' करना, नाम रावण राम का।

तीन खंड नरेश को मरते समय था जल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो, आज है तो कल नही ॥४॥

मिल गया नर-जन्म दुर्लभ छोड राग-द्वेष को,
कृष्ण-गीता के अनोखे याद कर उपदेश को।
कर्म 'सूरजभान, कर पर हाथ तेरे फल नहीं;
यह दशा अपनी समझलो आज है तो कल नहीं ॥५॥

२

संसार

अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥ध्रुव॥
अणु २ परिवर्तित है प्रतिपल।
इसीलिए कहलाता चंचल।
सत्य रूप से अचल, विमल है नित्या नित्य विचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥१॥
अभी जन्म है अभी मरण है,
अभी त्रास है अभी शरण है।
धूप छांह सम हास अश्रुमय जीवन का संचार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥२॥
अभी बाल है अभी युवा है,
अभी वृद्ध है अभी मुआ है।
कैसा रे, परिवर्तन मय है यह निष्ठुर व्यापार,
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥३॥
यहां कहां रे, शांति चिरंतन
कम दलों का निविड़ निबन्धन।
'सूर्यभानु' है संग निरंतर सृजन और संहार;
अपनी सुख दुख की लीला से बना हुआ सारा संसार ॥४॥

३

लाख बात की है एक बात

(मनहर)

दीवानी में नाहिं फौजदारी हू में नाहि,
नाहिं राज कचेहरी हू की पाया जी हुजूरी में ।
मास्टरी मे नाहिं कछु डाक्टरी में नाहिं,
औ क्लेक्टरी में नाहिं नाहिं कलर्क की मजूरी में ।
वैरिस्टरी माहिं नाहिं नाहिं बेक्सीनेटरी में,
सेठ हूकी किसी फेक्टरी की मैनेजरी में ।
"सूर्य्य भानु लाख बात की है यह एक बात,
सब सुख पाया एक संतोष सबूरी में ॥१॥
मिश्री में न पाया मधु माखन में पाया नाहिं;
दाखन मे पाया नाहिं लाख लाख लेखिये ।
पाया न मयूख में पीयूख हू में पाया नाहिं,
चूँख चूँख ईख हू को चाहे आप फैंकिये ।
सुधा में न पाया सुधा, पान कर हारा मै तो,
नहीं पाया प्यारी के अधर चूम पेखिये ।
'सूर्यभानु' लाख बात की है यह एक बात,
सब रस पाया जिनवाणी सुन देखिये ॥२॥

इन्द्र न सुहात, धरणेन्द्र न सुहात
चमरेन्द्र न सुहात सिकरेन्द्र न सुहात है।
नरेन्द्र न सुहात, न महेन्द्र हू सुहात रंच,
चन्द्र न सुहात दिवसेन्द्र न सुहात है।
संसार के और सुख वैभव सुहात नाहिं,
कुबेर को कोष हू तो कुछ न सुहात है।
'सूर्यभानु' लाख बात की है यह एक बात,
नाथ-नाथ त्रिशला को तात मन भात है ॥३॥

(छप्पय)

जहँ तहँ मिलैं अनेक, शास्त्र पढ़कर समझावें,
जहँ तहँ मिलैं अनेक राग और रंग सुनावें।
जहँ तहँ मिलैं अनेक निवनय ढोंग बनावें,
जहँ तहँ मिलैं अनेक चमत्कारी कहलावें।
'सूर्यभानु सब ही मिलैं, अपनी २ टेक,
आतम ज्ञानी ना मिलैं लाख बात की एक॥४॥
मिलैं निरोग शरीर मिलैं धन गिनत सहारे,
मिलैं धरा धन धाम मिलैं परिवार पियारे।
मिलैं राज और पाट मिलैं अधिकार निराले,
मिलैं जगत के जे दुख मय सुख वैभव सारे।
'सूर्यभानु' सब ही मिलैं काम न सुधरे नेक,
आत्म तत्व पाया नहीं लाख बात की एक॥५॥

४
कौम के खातिर

(मनहर)

कौम के खातिर श्री 'निकलंक' जू,
बौद्धो के हाथ से प्राण गवावै
कौम के खातिर 'गोविन्द' के सुत,
जीते जी द्वार में जाय चुनावै।
कौम के खातिर राणा 'प्रताप' जू,
जंगल जंगल कष्ट उठावै।
'सूरजभानु' तू है मुरदा कुछ,
कौम के खातिर काम न आवै।१।
कौम के खातिर 'सेनयतीन्द्र' जू
भारत पै बलिदान चढ़ावै,
कौम के खातिर छात्र 'गणेश' जू
जन्म की भूमि पर स्वर्ग सिधावै।
कौम के खातिर 'मोहन गांधि' जू
जीवन का सर्वस्व लगावै।
सूरजभानु तू है मुरदा कुछ
कौम के खातिर काम न आवै।२।

आवसी

पायो अभिराम धाम ठाम २ नाम पायो,
पायो विसराम पायो धनधाम राजसी,
सुख को सामान पायो, अधिक आराम पायो,
पर यह प्रीति मधु भीनी तलवारसी।
वर्द्धमान भगवान भजले भर, सुमान,
याद रख लेना न तो पीछे पछतावसी।
मान मान मान, कहे बागी 'सूर्यभानु' सुन
खोयो नर जन्म फर हाथ नहिं आवसी॥

महिमा जिन राज की

कहत कहत मुनिराज कविराज हारे,
कीरति कलाप भवि जन सिर ताज की
लिखत २ सुर गुरुराज कहत अपार गुण
गण गाथा गरीब निवाज की
सुनत सुनत महावीर के निराले जस,
चकित भई है मति सुजन समाज की।
'सूरजभानु' आज तोहे तनिक न आई लाज,
कहने के काज रे, महिमा जिनराज की ॥

विनय

मम हृदय कमल विकसित कर, रे, ॥
यह विनय विमल उर में धर, रे, ॥ध्रुव॥

दिनकर बन कर सघन गगन पर
रुचिकर मनहर अरुण वरण भर।
अन्तर में छिपकर, अन्तर-तर,
चमक अचंचल चिर-स्थिर, रे,
मम हृदय कमल विकसित कर, रे ॥१॥

स्नेह-सुधा का स्रोत बहा दे,
शिव सुख मय सुषमा सरसा दे।
लोल ललित लहरी लहरा दे,
विप्लव मय जीवन भर रे,
मम हृदय-कमल विकसित कर रे ॥२॥

शत्रु मित्र पर एक भावना,
त्रिभुवन की कल्याण कामना,
"सूयभानु" की यही प्रार्थना,
विहरित करना घर घर रे,
मम हृदय कमल विकसित कर रे ॥३॥

मम हृदय कमल विकसित कर रे,
यह विनय विमल उर में धर, रे ॥मिलत॥

८
दिव्य-संदेश

अंधी श्रद्धा को जड से, सब खोद बहाओ, अय पुण्येश;
हो स्वतंत्र श्रम करो सदा, पावोगे तुम साफल्य विशेष।
कर्मवीर बन कर विचरो, अति धीर महा गंभीर महेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुन लो अतुल दिव्य संदेश ॥१॥

द्रव्य भाव हिंसा को त्यागो त्यागो फूट कपट अरु क्लेश;
सादा खाओ सादा पीओ, सादा रक्खो अपना वेश।
क्रम से क्रम से चढो तभी चढ पाओगे तुम सिद्धि नगेश।
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुन लो अतुल दिव्य संदेश ॥२॥

सत्य धर्म के हेतु कटे चाहे अपना सिर क्यो न हमेश,
प्यारो ! कटवाओ प्रसन्नता से, मत डरो कभी लवलेश।
अरे, सहायक है हम मब का एक वही नव पद मंत्रेश,
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश ॥३॥

पर उपकार करो तन मन से रहे न कोई श्रम अवशेष;
पर न करो अभिमान रंच, कहलाओगे तुम सभ्य नरेश।
करो नहीं निंदा दुष्टो की, दुष्ट प्रकृति की तोड़ो रेश;
ज्ञात पुत्र श्रीवर्द्धमान के, सुनलो अतुल दिव्य संदेश।

राग द्वेष को दूर भगाकर, तजो कदाग्रह का मललेश;
फिर तज दो मद दर्शन अरु चारित्र मोहनी कर्म महेश।
उसी समय लग आप हृदय में केवल ज्ञान रूप दिनेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान का सुनलो अतुल दिव्य संदेश।
जर्जर बाकी कर्म जला कर, बन सकते हो सिद्ध जिनेश,
बन जाओगे पूर्ण ज्ञान सुख बल के अति गंभीर जलेश।
जन्म मरण विनिमुक्त कहाओगे, होगी 'सूरज' भक्ति सेश;
ज्ञात पुत्र श्री वर्द्धमान के सुनलो अतुल दिव्य संदेश॥

६

जुरती नहीं जोरी

(मनहर)

टूटी हार जुरी जाये, कोई तदवीर हू ते,
जुरिजाये चाहे कैसे मोती हू की मनियां ।
टूटी फूटी काच की कटोरी चाहे जुरिजाय,
जुरि जाये चाहे दृढ़ हरि हू की कनियां ।
पत्थर की शिला चाहे सिम्मट से जुरि जाये,
जुरि जाये तीखी २ लोह हू की अनियां ।
''सूर्य्यभानु' एती टूटी जुरती हू जोरी पै,
जुरति नहीं जोरी टूटी मन केरी तनियां ॥

१०

देश महिमा

(भजन)

जय जय प्यारा हिन्दोस्तान

जिसने पैदा किये हमारे वर्द्धमान, गौतम गुण खान,
आनन्द कामदेव से गृहपति, बाहुबलि से विक्रम महान् ।
धन्ना जैसे महा तपस्वी, शिवि मुनि जैसे दया प्रधान,
हरिश्चन्द्र से दानवीर थे, मेघरथ से त्यागी ज्ञान ॥
अरणक जैसे धर्म धीर, ध्रुव, ढंढण जैसे दृढ़ प्रणवान ।
कपिल दधीचि वशिष्ठ अत्रि से ऋषि प्रवर थे ज्ञान निधान,
भीष्म पिता अरु सेठ सुदर्शन, अतुल ब्रह्मचारी परधान ।
अर्जुन भीम पवन-सुत से थे, बड़े २ भारी बलवान ।
हेमचन्द्र अरु उमा स्वामि से थे, आचार्य महा विद्वान ।
जिन्हें देख कर दूर भागता था, पाखण्ड मोह मद मान ॥
बड़े बड़े ऋषि मुनि यति तपसी, धर्म मर्म पारगत, ज्ञान
जिनसे प्यारा देश हमारा, कहलाता था स्वर्ग समान ॥
भोज विक्रमादित्य मोरध्वज, अकबर जैसे थे सुलतान,
कालिदास से महा कवीश्वर, गाते थे जिनका गुणगान ।

जिसमे प्रकृति छटा छहराई के कि वृन्द की केक महान् ।
अलि कुल कलरव करत सदा अरु कोकिल करती सुन्दर गान।
सर सर सरतीं सरस सुर सरित सूर सुतासर सती सुसान ।
सुरसा सरस सरसतीं सरसो सरस रसिक सामी पहिचान ।
डांगी 'सूरजभानु' यहां थे कैसे रे, आदर्श महान ।
देख छटा इस भारत माता की विस्मित था सर्व जहान ॥

जय जय प्यारा हिन्दोस्थान

श्रावण शुक्ला ३ १९८४ | सर्व प्रथम रचना | गाढ़ावत जैन गुरुकुल छोटी सादड़ी (मेवाड़)

(धुन)

जिन-पति जिनवर जय जय वीर
भवसागर तारक महावीर ॥

सत्य ही जीवन मेरा है,
सत्य ही जीवन मेरा है।
सत्य के बिना अँधेरा है,
सत्य का ईश्वर चेरा है॥

सत्य जगतीतल का शृंगार,
सत्य-बिन मनुज-जन्म बेकार॥

११

भगवती अहिंसा

माता ! तूने उपजाये थे 'राम' 'कृष्ण' से पूत सपूत ।
सत्यदेव की धर्म-सहचरी ! भेजे 'वीर' 'बुद्ध' से दूत ।।
दानवता का मारा जब माँ ! जन-समाज अकुलाया था ।
ईसु मुहम्मद दयानन्द से सब संकट विसराया था ।।
सब तीर्थंकर सब पैगम्बर तेरे दास कहाते हैं ।
सब पुरुषोत्तम सभी सुधारक तेरे स्रोत बहाते हैं ।।
अब अत्याचारो से जगको त्रस्त हुआ तूने देखा ।
तब खैंची हम सब के उर मे सुखद शान्ति की स्मित रेखा ।।
सत्यदेव से भी न जगत का कुछ भी कभी सुधारा हो ।
करुणाशीले ! अगर न उनको तेरा पूर्ण सहारा हो ।।
सत्यदेव के साथ अम्बिके ! निज दर्शन देते रहना ।
सब विरोधियों के प्रहार को सीख जायंगे हम सहना ।।
अन्यायों के मर्दन मे जो सूक्ष्म रूप रहता तेरा ।
उसे सदा समझाते रहना कायरता न करे डेरा ।।
तेरा वेष बना करके जब कायरता छलने आवे ।
तब तू असली रूप बताना राक्षसी न ठगने पावे ।।
धर्म धर्म चिल्लाकर जो ठग स्वार्थ-साधना करते हैं ।
दीनो की अबलाओ की आहों से जरा न डरते हैं ।।
उनको सच्चा मार्ग सुझाने नवयुवकों में शक्ति भरो ।
'सूर्यभानु' बस यही विनय है त्रिभुवन में घर घर विहरो ।।

१२

भगवान से

अपना रूप बता दो ॥

ढूंढा मथुरा ढूंढी काशी,
क्या न पड़ा वहां के वासी।
शिव सुन्दर अक्षय सुख राशी,
सब रहस्य समझा दो । अपना० ॥१॥

वेद पुराण शास्त्र पढ़ २ कर
भी समझा न तुम्हें मूरख नर
अजर, अमर, सुख, बल, सेकर्मकर,
अनुभव सुरस चखा दो । अपना० ॥२॥

कोई कहत ब्रह्मा त्रिपुरारी,
हम कहत अरहन्त पुकारी ।
कोई मुहम्मद बुद्ध मुरारी,
नाम मंत्र सिखला दो । अपना० ॥३॥

जब २ जैसे कष्ट पड़ेंगे,
अत्याचार असंख्य बढ़ेंगे ।
होकर उनसे विमुख लड़ेंगे;
यह भविष्य चमका दो । अपना०॥४॥

दीनों के पालन में तुम हो,
दुष्टों के घालन में तुम हो।
अगुर संचालन में तुम हो,
कह विवेक अकुटादो। अपना० ॥५॥

पाप पुंज में पले हुए है,
माया से हम छले हुए हैं,
तृष्णा से हम जले हुए हैं।
चित की तपन बुझादो। अपना०॥६॥

स्वार्थ-वासना के भूखे हैं,
अरु स्वभाव के भी रूखे हैं।
तरुवर जीवन के सूखे हैं,
शांति स्नेह बरसादो। अपना०॥७॥

कर्मों का मारा मैं स्वामी,
अब तो तारो अंतर्यामी।
अविचल सुख का हूं मैं कामी,
सब आवरण हटादो। अपना० ॥८॥

तेरे दर पर खडा हुआ हूं,
विषयो के वश पडा हुआ हूं,
मोह गर्त में गड़ा हुआ हूं,
ऊंचा नाथ उठादो। अपना०॥ ९ ॥

जिसके मन-मंदिर में आओ,
अंधकार अज्ञान हटाओ।
जग के सब सुख दुःख विसराओ,
निर्मल प्रेम बहादो। अपना० ॥१०॥

आओ मेरे प्यारे आओ,
मुझ पर तो अधिकार जमाओ।
हृ तन्त्री के तार बजाओ,
मन को मस्त बनादो। अपना०॥११॥

मैंने लाल रतन को पाया,
फिर क्यों कंकर हाथ उठाया।
निज का ही हो मान भुलाया,
भंवर शोर मचादो। अपना० ॥१२॥

भीलन को मोती न सुहावे,
मोती मूल्य नहीं घट जावे
उन्हें छोड़ चरमूं पुगलावे;
सच्ची परख करादो। अपना०॥ १३॥

दुर्जन सूरज पर थूकेंगे,
सारमय गज पर भूकेंगे।
वे समझा निश्चय चूकेंगे,
सीधा पाठ पढ़ादो। अपना०॥ १४॥

एक वार वह गाना गादो,
गगनांगन में ध्वनि मंडरादो,
मीठी मीठी तान सुनादो,
गहरी नाद गुंजादो । अपना० ॥१५॥

जग मेंतो दुख ही दुख पाया,
सुख का नाम नजर नहीं आया।
इससे प्रभु का भजन वनाया,
सुन्दर साज सजादो । अपना० ॥१६॥

चाहे हो मति ठीक ढंग में,
करी प्रार्थना यह उमंग मे ।
छनी छनाई मधुर भंग में,
नीला रंग जमादो । अपना० ॥१७॥

'सूर्य्यभानु' है शरण तुम्हारी,
जन्म-मरण को दूर निवारी ।
यही विनय जिनवर, अब धारी,
शिवपुर में पहुंचादो । अपना० ॥१८॥

१२
सत्य भक्त से

भगवान सत्य के भक्त वीर !
तन मन में भर साहस प्रचण्ड,
कन कन में भर कमनीय कांति;
जीवन में भर सौन्दर्य शान्ति ।
जनबोदधि में भर मधुर नीर, भगवान के सत्य के भक्त वीर।

भय-भ्रद कविमय भगे विचार,
अरु गतानुगति भय मूढ़ भ्रांति।
क्षण में समूल हो जाय क्षार;
फैलाना ऐसी प्रबल क्रांति ।
पर रहना अति गम्भीर धीर। भगवान सत्य के भक्त वीर।

तुमको समझूंगा राम कृष्ण,
ब्रह्मा, शंकर, धर्मावतार ।
ईसा मसीह, जरथुस्त, बुद्ध;
पैगम्बर पुरुषोत्तम उदार ।
तुमको मानूंगा महावीर। भगवान सत्य के भक्तवीर ॥१॥

तुम तेज पुंज तुम दिव्य ज्योति,
तुम प्रिय स्वदेश के रत्न लाल।
तुम स्वाभि मान की विमल मूर्ति;
तुम विश्व प्रेम के गृह विशाल।
तुम कुरूढ़ियों के लिये तीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥४
कह लघु वय वर का है सुभाग,
बच्चों पर करते अनाचार।
हा! बाल वृद्ध अनमेल व्याह;
अबलाओं पर भीषण प्रहार।
विगलित करना वैधव्य वीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥५
इन पढ़े लिखों की सब विभूति,
जल थल करके होरही छार।
बेकार फिरें क्या करें हाय;
इनमे न कला कौशल प्रचार।
इन को बतलाना सुतद वीर। भगवान सत्य के भक्तवीर॥६
ये मुफ्त खोर अज्ञान बाल,
मुनि-साधु नाम धारी गंवार।
खाते औरो का व्यर्थ माल;
लोभी लम्पट पूरे लबार।
हटवाना इनकी बुरी भीर। भगवान सत्य के भक्त वीर ॥७

है घर घर में डाकिनी फूट,
"तू तू मैं मैं हा ! लूटमार ।
आपस आपस में मंद भाव;
हा ! कैसे संकीरण विचार ।
विहरा नवयुग की समरमीर ! भगवान सत्य के भक्त वीर !
हैं बड़े बड़े ये धनी सेठ,
जिनकी सम्पति का नहीं पार ।
मामर, मोसर, गगोज, मोज;
ही में व्यय करते हैं असार ।
क्यों हैं लकीर के ये फकीर ! भगवान सत्य के भक्त वीर !
लो पकड़ एक कर में कृपाण,
उसकी करलेना तीक्ष्ण धार ।
फिर काट कुकर्मों का विपाण;
हिम्मत मत खाना बन्धु ! हार ।
है अचल धर्म की यही सीर ! भगवान सत्य के भक्त वीर!!१०
जीवन है समरस्थल महान,
होकर सतर्क करना विहार ।
है विजय लाभ अति कठिन काम;
पग पग पर रहना होशियार ।
यह 'सूर्य भानु' विनती अधीर ! भगवान सत्य के भक्त वीर!!११

१४

सत्य-सेवक से

सत्य के सेवक बढ़ते चल,

तेरे चरण चिन्ह शिव-सुख-मय ।

जीवन पर अंकित कर निर्भय,

विजय श्री पावेगा निश्चय ।

उर अम्बर में हो अरुणोदय ॥

विफल न खोना पल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥१॥

बाधाएं चढ़ बढ कर आएं,

नूतन नूतन रंग बनाएं ।

क्यो हम दुर्बलता दिखलाएं;

उनकी शक्ति कुचलते जाएं ।

हो न कभी चंचल । सत्य के सेवक बढते चल ॥२॥

सत्य ही है तेरा आधार,

इसी से होगा बेडा पार ।

विरोधी दल का हाहाकार,

समझना तू अपना सत्कार ॥

प्रण से तनिक न टल । सत्य के सेवक बढ़ते चल ॥३॥

आखिर एक समय आयेगा,
पूर्ण सफलता तू पायेगा।
सब के संकट बिसरायगा;
जग तेरी महिमा गायेगा।
अतुल मिलेगा फल। सत्य के सेवक पढ़ते चल ॥४॥
सिद्ध, बुद्ध, जरथुस्त, राम को,
गुरु गोविन्द जिनन्द श्याम को।
महमद पैगम्बर इस्लाम को;
ईसा के पावन पैग़ाम को।
करना सब अमल। सत्य के सेवक पढ़ते चल ॥५॥
इस भेद में न आना प्यारे,
इन्हें सर्वथा रखना न्यारे।
जीवन के हैं शत्रु हमारे,
नष्ट करेंगे अपयत्न सारे।
"सूरजभानु" समझ। सत्य के सेवक पढ़ते चल ॥६॥

१५

कवि से

कवि, गाना गादे.

प्रबल शोर मच जाय गगन में गहरी नाद गुंजा दे।

कवि, गाना गादे ॥ ध्रुव ॥

कांप उठे सहसा वन उपवन,

तरुवर गिरि-गहवर, अंबर-धन।

सरिता सर वर ग्रह उपग्रह गन,

उछले सागर का चंचल मन,

ऐसी क्रांति मचादे, कवि, गाना गादे ॥ १ ॥

मिटे जगत की दुखित दीनता,

मनुज जाति की पराधीनता।

आपस की सब मन-मलीनता,

विभव--जन्म अनुराग हीनता।

मधुरी तान सुनादे, कवि, गाना गादे ॥ २ ॥

अरुणोदय की किरण २ पर,

उदधि ऊर्मि पर अंबुज गण पर,

द्युति पर क्षिति पर रज कण २ पर।

क्षण के अणु २ पर तृण २ पर।

अपनी ध्वनि पहुंचादे, कवि, गाना गादे ॥ ३ ॥

विघ्न छिन्न हों वसुधा भर में,
विपुल शांति हो नगर नगर में।
प्रचुर प्रेम प्रकटे घर २ में,
जीवन के सूखे मरुधर में,
निर्मल श्रोत बहा दे, कवि, गाना गादे ॥ ४ ॥

विहग राग में राग मिलावें,
सरिता स्वर २ शब्द सुनावें।
स्वर से नभ जल थल भर जावे,
सुरनर मुनि सुध बुध बिसरावें।
मोहन मन्त्र चलादे, कवि, गाना गादे ॥ ५ ॥

कभी न समझें प्रेम भंग में,
बहें स्नेह की जल तरंग में।
संग २ में एक रंग में
'सुषमानु' अपनी उमंग में।
सब को रंग बनादे, कवि, गाना गादे ॥ ६ ॥

१६

अर्हन्त शरण

अनवरत अवलम्बन अभिराम,
अवस्थिति शून्य हृदय-विश्राम।
अनूपम अमित सौख्य का धाम;
अहा! अर्हन! तेरा शुभ नाम॥

१७

सिद्ध-शरण

निरंजन, निर्विकार, निष्काम,
आत्म-रत 'सूर्यभानु' वसु-धाम।
धवल तव यश सुविलसित ललाम;
सिद्ध भगवन! स्वीकार प्रणाम॥

१८

साधु-शरण

मात, पिता, सुत, बन्धु' सहोदर,
स्वार्थ बिना कुछ काम न आवै,
स्वार्थ घने सब तो यह 'सूरजमान'
सदा सब के मन भावै।
धन्य सु साधु सदा बिन स्वारथ के,
प्रभु के पद पै पहुंचावै।
स्वारथ औ परमारथ में,
शरणागत के दुख दूर भगावै॥

१९

वीतराग-धर्म-शरण

श्री जिन भाषित धर्म ही,
सकल सुखों का सार।
'सूर्यभानु' सब छोड़ के,
पकड़ एक आधार॥

२०

अंतिम-भावनाष्टक

अचल, अमल, अज, अजर, अमर-वर, अगम, अगोचर, अविनाशी;
अलख, निरंजन, भव-भय-भंजन, दुःख निकंदन, सुख-राशी ॥
सादि, अनादि, अनंत, अखंड, अनेक, एक, घट-घट-वासी;
सिद्ध, बुद्ध, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, भज, अक्षय-सुख-अभिलाषी ॥१॥
अशरण-शरण, हरण-दुख-दारुण, करुणार्णव, अंतर्यामी;
भव-जल-निधि-उद्धरण-तरणि-सम, इक अवलंबन अभिरामी ।
मंगल-करण, सुधा-रस-स्रवण, शांति जल-झरण, विगत कामी;
ऐसे प्रभु को हृदय धार बन जांय विशुद्ध-मार्ग-गामी ॥२॥
काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ, तजने में तत्पर रहते हैं,
स्वार्थ छोड कर सदा दूसरो के हित परिषह सहते हैं ।
ऐसे सच्चे गुरु की हम सत्संग निरंतर किया करें;
उनकी शुचि सेवा में रह कर ज्ञान-सुधा रस पिया करें ॥३॥
सब जीवो को सुख पहुंचावें सत्य-मार्ग-पर डटे रहें,
धूलि समझ कर पर-धन को हम तस्करता से हटे रहें ।
पर-नारी से सदा प्रभो ! हम माता सा व्यवहार करें;
हो न ममत्व अनात्म वस्तु पर ऐसा सदा विचार करें ॥४॥
सकल चराचर के जीवो पर मित्र भावना बनी रहे;

यह आत्मा सज्जन दर्शन कर भक्ति स्नेह में सनी रहे।
दुखी जनों को देख निरंतर धार प्रभु की बहा करे;
दुष्ट दुरात्मा पापी पर माध्यस्थ भावना रहा करे ॥५॥
तन मन धन अर्पन करने पर भी न धरम जाने पावे,
लालच से भय से न कभी, अन्याय मार्ग में फिर जावे।
शांति २ हो सकल जगत में, कोइ उपद्रव नाहि रहे,
क्रूर-कपट, छल छिद्र सत्य की सुन्दर सरिता माँहि बहे ॥६॥
नाथ हृदय प्रामीण सुभर सम कभी न विषयों में धावे,
देश, समाज धर्म की सेवा कर तेरी महिमा गावे।
सादा, सीधा, सरल, हमारा, रहन-सहन बनता जावे;
जीवन हो आनंद-पूर्ण सर्वत्र सौम्य सुयश छावे ॥७॥
स्वार्थ-वासना घटे निरंतर, परमारथ हित जिया करें,
न्याय-धर्म को आगे रखकर, सभी कार्य हम किया करें।
तेरा ले प्रतिबिम्ब, प्रभो! हम आत्म-तत्व का मान करें;
'धरजभानु' भावना भरी, त्रिभुवन का कल्याण करें ॥८॥

२१

चरम मंगल

आज्ञा हीनं क्रिया हीनं, मंत्र हीनं चयत्कृतं ।

तन्मे कृपया देव !, क्षमस्व परमेश्वर ॥

मिलने का पता:—
मुहता सिमूमलजी गगारामजी
बलुन्दा (मारवाड़

चिम्मनसिंह लोढ़ा के प्रबन्ध से
श्री जैन-गुरुकुल प्रिंटिंग प्रेस
ब्यावर में मुद्रित।

सती अंजना

सुख के जीवन में भी जिसने, दारुण दुःख उठाए
धैर्य रखा नहीं तजा धर्म, निज कर्म कलंक मिटाए
पढकर उसकी करुण कहानी, कुछ तो शिक्षा अपनाओ !
सीख मान सद्गुरु की बहनों, तुम्ही अंजना बनजाओ ! !

पं० मुनि श्री चैनमलजी महाराज

सुख के जीवन में भी जिसने, दारुण दुःख उठाया था.
धैर्य रखा नहीं तजा धर्म, निज कर्म कलंक मिटाया था.
पढ़कर उसकी करुण कहानी, कुछ तो शिक्षा अपनाओ!
सीख मान सद्गुरु की बहनों, तुम्हीं अंजना बनजाओ!!

सती अंजना

रचयिता—

कविवर पं. मुनि श्री चैनमलजी महाराज

प्रकाशक—

जैन साहित्य मण्डल, ब्यावर (राजपूताना)

द्रव्य सहायक—

कनकमलजी सा० कोठारी, खांगटा
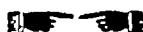
प्रथमावृत्ति १००० | मूल्य सदुपयोग | वीर सम्वत् २४६५ विक्रम सम्वत् १९९५ ई० १९३८ नवम्बर

एक-वचनः-

प्रिय पाठक गण !

आपके कर कमलों मे "जयमल संगीत माला" का तृतीय पुष्प पूज्य श्री कानमलजी महाराज सा० के प्रधान शिष्य पं० मुनि श्री चैनमलजी महाराज सा० द्वारा संपादित् "श्री अंजना सती चारित्र" समर्पित करता हुआ आशा रखता हूं कि आप इसे आद्यन्त पढ़कर अवश्य ही इस कथा में वर्णित भावों को धारण करके आत्मोन्नति में अग्रसर होवेंगे।

निवेदकः—

मंत्री श्री जैन साहित्य मंडल

ब्यावर (राजपूताना)

तर्ज–ख्याल । रगत नाटक ।

धन सती अञ्जना साध्वी सत्यवन्ती राखी शील में ॥ टेर ॥
महि मण्डल मंडन मन मोहन, महिन्द्रपुरी शुभ स्थान।
गढ़ मढ़ मन्दिर बाग बगीचा सुन्दर स्वर्ग समानजी ॥१॥
महिन्द्रपुरी को शोभे महिपति महिन्द्र सेन महाराज।
नृप गुणों से शोभित राजा, भजे सदा जिनराजजी ॥२॥
तिन घर तरुणी है मन हरणी 'मदनवेगा' पटनार।
शील सुरंगी है मृदु अंगी, पाले कुल आचारजी ॥३॥
महिन्द्र सेन के पुत्र एक सौ, पंडित और पुण्यवान।
पूर्व पुण्य से पाये सारे द्रव्य और सन्तानजी ॥४॥
कन्या रत्न एक कामन गारी रूपे रति समान।
शील शिरोमणि सती अञ्जना, कला सर्व की खानजी ॥५॥
यह शुभ कन्या भई पतिव्रता प्रेम धर्म की जान।
चन्द्रवदनी कोकिलवयनी विनयवती गुणवानजी ॥६॥
अनुक्रम आई यौवन वय में महिपति करे विचार।
पुत्री अब परणावनी म्हारे, करते नीतिकारजी ॥७॥

॥ छन्द द्रुतविलम्बित ॥

विनयकी नयकी सरित जान है।
सरलता मृदुता गुण खान है॥
धरम में प्रभु में पुनि प्रेम है।
नियम में उनका नित नेम है ॥१॥

शशि मुखी सुमुखी रति कोर है।
गजगती जगती नहिं और है॥
सकल अंग शुभोपम सोहिनी।
वदन कोमल है मन मोहिनी ॥२॥

अकल में कल में हुसियार है।
चतुरता जिनमें विनपार है॥
अमरिसी कुमरी सुकुमार है।
अपर ना इनके उनिहार है ॥३॥

॥ दोहा ॥

महिपति बोला मंत्री को, सुनो सुमति सरदार।
पति लायक भई पुत्रिका, कीजे कौन प्रकार ॥१॥

तर्ज–राधेश्याम रामायण।

मन्त्री कहे सुन महाराजा, यह कहना ठीक तुमारा है।
पहले ही से मैने तो यह, दिल में सोच विचारा है ॥१॥
वसन्तपुरी नगरी का नामी, वसन्त सेन महाराजा है।
है कुँवर बड़ा होंशियार भूप के, होनहार गुण ताजा है ॥२॥
मेघ कुँवर है मेरी नजर में, उसको कन्या ब्याह दीजे।
बस ठीक योग्य है वर कन्या का, आना कानी मत कीजे ॥३॥
गुणवान महामतिमान मनस्वी, विद्वान् अकल का आगर है।
गंभीर धीर दृढ़ धर्मी है और, सरल शांति का सागर है ॥४॥

हवा खुरी का मिस लेकर के चालो चतुर तत्काल।
खबर किसी को होवे नांही ऐसा करो ख्याल।
भेस बदल लो शस्त्र साथ ले हो जाओ हुशियार।
थांरी प्यारी मिलाय दूं, देखो छिनक मझार॥१

तर्ज—मूल ख्याल।

निश्चय कर ऐसे मन मांही राजा लिया तुरंग।
चलत आया मद्दिलपुरी में, उर में अति उमंगजी॥१॥
गुप चुप चलते पहुंचे दोनों जब युवति आवास।
बैठी बाला सखियों संग में, कर रही रंग विलासजी॥१॥
मित्र ने दोनों मीची करली, पवन रहे सलभाय।
चमक लोह पाषाण मिलासे चित्त चिपियो है आपजी॥१

तर्ज—श्राखिर नार पराई है।

कुंवरी कामनगारी है, अमरी के उनिहारी है॥ टेर॥
है अपछर के ह इन्द्राणी, रति सम। सुन्दर है मनमानी
मृग लोचनी मोहनगारी है।
हंस गति अति चतुर सुजान चन्द्र वदनी महागुण की ख
हरि संकी हितकारी है।
शील धर्म में रहे नित राची, जैन धर्म सीखो चित्त आ
सम्यक्त्व मत दृढ़ धारी है।

तर्ज—मूल।

कैसा मन लगा है कुमर का, कुंवरी बसी मन मांय।
देख देखने हरिवाली को, दृग लिम दिय हर्षायजी॥१४

कुवरी क्रीड़ा करे किलोलां, धर कर उर उछरंग।
उसी समय का सुनो जिकर, किम पड़े रंग में भंगजी ॥१५॥

करे वात मन चाही सखियां, कुंवर सुने धर कान।
भले भाग्य तुम पायो बाई, पति पवन पुण्यवानजी ॥१६॥

एक दम कन्या हंस के बोली, धन्य है मेघकुंवार।
भोग छोड़ ले जोग जगत में, धन उणरो अवतारजी ॥१७॥

सुन करके आ वात अपूरव, आयो क्रोध अपार।
पर पुरुषों की करे प्रशसा, है व्यभिचारण नारजी ॥१८॥

करम करे सो करे न कोई, सुनिये चातुर भाई।
रामचन्द हरिचन्द राजवी, दीये विपन पठाईजी ॥१९॥

भीतर पीतर पात के सरे, तां पर कंचन झोल।
आखिर में अवलोकियो सरे, खुली ढोल की पोलजी ॥२०॥

चिरताली के चरित्र का सरे, पार कहो कुन पावे।
पति मार के सती होजावे, नीतिकार बतावेजी ॥२१॥

किसको मधुर वचन बतलावे, उर विच और ही ध्यावे।
किसको ललित लोचन से ललना, लालच दे ललचावेजी ॥२२॥

गति न जानी जाय जगत में, इनका चरित्र अपार।
हरि हर ब्रह्मादिक देवों को, कीना ताबेदारजी ॥२३॥

निकमो इस कुलटा हित झुरतो, हा हा मुझे धिकार।
डूंगर पास डरावना सरे, दूर से शोभाकारजी ॥२४॥

कुलटा कामिनी कहा काम की, परण्यां इज्जत जाय।
ऐसा सोचने शीघ्र कुंवर ने, लीना धनुप चढ़ायजी ॥२५॥

॥ दोहा ॥

मंत्री तेरी मन्त्रणा, मैं करता स्वीकार ।
लेकिन इसमें रहस्य है, उसका बड़ा विचार ।१।

तर्ज–राधेश्याम रामायण ।

ज्ञानी ने फरमाया है यह, दीक्षा लेगा मेघकुँवर ।
कुँवरी को फिर दुख होवेगा यही लगा है मुझे फिकर ॥१
घर घर देखी कन्या देना नीति का फरमाना है ।
अतएव कुँवरी को और कुँवर पुन्यवान देख परनाना है ॥२
बात असल में नीतिकार ने ठीक ठीक बतलाई है ।
मात पिता के कारण चिन्ता कन्या साथ ले आई है ॥३

॥ दोहा ॥

चिन्तातुर लख भूप को, बोला सुमति प्रधान ।
बहुत जगत में राजकुँवर हैं, बड़े २ गुणवान ॥२॥

तर्ज–राधेश्याम रामायण ।

रतनपुरी महलादसिंह का पवन पुत्र पुण्यवान सही ।
पवन मदन सा मृदुल मनोहर, सर्व गुणों की खान यही ॥१
नाथ बात तुम मान मेरी, अब देरी इसमें मत कीजे ।
पवनकुँवर के संग कुंवरी की, सत्वपट शादी कर दीजे ॥२
जब गई भूप के कहते ही, योग्य जोड़ी यह दिखलाई ।
बस भेज मन्त्री को रतनपुरी और शादी उनसे ठहराई ॥३

तर्ज–मूल ख्याल ।

दोनों घर में वटत वधाई, वरते मंगलाचार ।
सधवा सुन्दर सुस्वर कंठी, गावे गीत रसालजी ॥८॥
पवन कुँवर का दोस्त मन्त्री सुत, खीर नीर सम प्रीत ।
सुख दुख में रहे संग सर्वदा, यही प्रीत की रीतजी ॥९॥
सती अञ्जना रूप रंग की, शोभा करे संसार ।
कीर्ति सुन कर अपने मित्र से, ऐसे कहे कुमारजी ॥१०॥

तर्ज-गवरल ईसरजी कहे तो हंसकर बोलनाजी ।

सज्जन कहे एक वार मुझ संग सासरे चालनाजी ॥ टेर ॥

कैसी कन्या कैसा रूप, सुन्दर अंगी शची स्वरूप, है नहीं दूजी उन अनुरूप, मेरी मोहनगारी प्यारी मुझे दिखावनाजी ॥१॥ देख्यां विन मनड़ो दुख पावे, देखन हित चित नित ललचावे, प्यारी बिन जीवड़ो घवरावे, चालो देख सकें सुखसेंती अकल निकालनाजी ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

प्रेम पंथ पागल हुवा, पवनकुँवर इन रीत ।
समझावे सज्जन तदा, पूरण लाकर प्रीत ॥१॥

तर्ज–तावडा धीमो पडजारे ।

कुँवरे सा वात कहूं थाने २,
देखन की जो हूंस हुवे तो चालो अव छाने ॥ टेर ॥
मुशकिल मिलनो ऐसे आपको, लागे नहीं फिर ठीक ।
महिन्द्रपुरी है दूर यहां से, मत जानो नजदीक ॥ १ ॥

हवा पुरी का मिस लेकर के चालो चतुर ततकाल।
खबर किसी को होवे नांही, ऐसा करो ख्याल ॥१॥
वेस बदल लो शस्त्र साथ ले, हो जाओ हुशियार।
धर्मि धारी प्यारी मिलाय दूं देखो विमल मझार ॥२॥

तर्ज—मूल ख्याल।

निश्चय कर ऐसे मन मांही, ताजा लिया तुरंग।
चलते आया मलिम्लपुरी में उर में अति उमंगजी ॥११॥
गुप चुप चलते पहुंचे दोनों जब युवति आवास।
बैठी बाला सखियों संग में कर रही रंग विलासजी ॥१२॥
मित्र ने आंखें मीची करली, पवन रहे लहराय।
चमक लोह पाषाण मिलासे, चित चिपियो है आयजी ॥१३॥

तर्ज—आखिर नार पराई है।

कुंवरी कामनगारी है, भमरी के बलिहारी है ॥ टेर ॥
के अपछर के है इन्द्राणी, रति सम सुन्दर है मनमानी।
मृग लोचनी मोहनगारी है ॥
हंस गति अति चतुर सुजान चन्द्र वदनी महागुण की खान
हरि लंकी हितकारी है ॥
शील धर्म में रहे नित राची जैन धर्म लीनो चित जाची
सम्यक्त्व व्रत दृढ़ धारी है ॥

तर्ज—मूल।

कैसा प्रेम लगा है कुंवर का, कुंवरी बसी मन मांय।
देख रिझावे हरिवाहन को, हृद विच हिय हर्षायजी ॥१४॥

))

कुंवरी क्रीड़ा करे किलोलां, धर कर उर उछरंग।
उसी समय का सुनो जिकर, किम पड़े रंग में भंगजी ॥१५॥

करे वात मन चाही सखियां, कुंवर सुने धर कान।
भले भाग्य तुम पायो वाई, पति पवन पुण्यवानजी ॥१६॥

एक दम कन्या हंस के वोली, धन्य है मेघकुंवार।
भोग छोड़ ले जोग जगत में, धन उणरो अवतारजी ॥१७॥

सुन करके आ वात अपूरव, आयो क्रोध अपार।
पर पुरुषों की करे प्रशसा, है व्यभिचारण नारजी ॥१८॥

करम करे सो करे न कोई, सुनिये चातुर भाई।
रामचन्द हरिचन्द राजवी, दीये विपन पठाईजी ॥१९॥

भीतर पीतर पात के सरे, तां पर कंचन झोल।
आखिर में अवलोकियो सरे, खुली ढोल की पोलजी ॥२०॥

चिरताली के चरित्र का सरे, पार कहो कुन पावे।
पति मार के सती होजावे, नीतिकार वतावेजी ॥२१॥

किसको मधुर वचन वतलावे, उर विच और ही ध्यावे।
किसको ललित लोचन से ललना, लालच दे ललचावेजी ॥२२॥

गति न जानी जाय जगत में, इनका चरित्र अपार।
हरि हर ब्रह्मादिक देवों को, कीना तावेदारजी ॥२३॥

निकमो इस कुलटा हित झुरतो, हा हा मुझे धिकार।
डूंगर पास डरावना सरे, दूर से शोभाकारजी ॥२४॥

कुलटा कामिनी कहा काम की, परण्यां इज्जत जाय।
ऐसा सोचने शीघ्र कुंवर ने, लीना धनुप चढ़ायजी ॥२५॥

तर्ज—पनिया भरन कैसे जाना ।

कुंवर कोप बिच आई छिया धनुषबाण कर मांही ॥ टेर ॥
है कुलटा दु:खदायी मारी मुझे खबर पड़ी अब सारी थी।
तूं परभव बीच पठाई ॥१॥
कुछ निर्णय कुंवर नहीं कीना, अरु कोप कुंवरी पर कीनाजी।
ज्यों सीता पर रघुराई ॥२॥
किया धनुष तणा टंकारा तब बोला मित्र पियाराजी।
आ हाल बेरहम मर्ई ॥३॥

तर्ज—गजल रेखता ।

कुंवर सा चाप को ऐसे, चढ़ाना ना मुनासिब है।
पराये घर पे यों दंगल मचाना नामुनासिब है ॥ टेर ॥
चाये क्यों आंख में लाली बनाई सुरत क्यों काली।
भूलकर भृकुटीका ऐसे धनाना ना मुनासिब है ॥१॥
बदन माशुक बिचारी का गुलाबी फूलसा कोमल।
बसी पर तीर यह तीक्ष्ण, चलाना नामुनासिब है ॥२॥
आये थे देखने कामें खबर नर होसी राजा में।
मुफ्त ही खाक की मिट्टी मिलाना ना मुनासिब है ॥३॥
तरसते देखने को तुम, रात दिन कैसे रोते थे।
हुवा क्या रंज का कारण जताना ही मुनासिब है ॥४॥

॥ दोहा ॥

सुनकर पवनकुमार यों, सोचे चित्त मंझार ।
कैसे मैं इनको कहूं, अपना हृदयोद्गार ॥१॥

तर्ज—कांई रे जवाब करूं रसिया।

कांई रे जवाब देऊँ इणने, जवाब देऊँ मै सवाल करूँ मै।
मन को दरद कहूं मै किणने ॥ टेर ॥
कारण क्या कहूं कह्योहन जावे, कहतां सज्जन शरम सतावे।
निकमो फिजूल अठे मै आयो, आखिर देख घणो दुख पायो।१।
आ व्यभिचारण कुलटा नारी, खवर पड़ी मुझे वन्धव सारी।
दुश्मनकू दूं नरक पठाई, धनुप चढ़ायो ओ कारण भाई ॥२॥

तर्ज—वीरा लुमा झुमा होय आयजो।

कहे मित्र सुनो मेरे भाई, थारे आ कांई मन मे आईजी।
म्हारी वुरी लगावोला कांईजी ॥ टेर ॥
अव झट पट घरे पधारो, मत मारो दया विचारोजी ॥१॥
मत कुलटा इणने मानो, थे असल वात नही जानोजी।
दीक्षा मेघकुंवरजी लेसी, करी स्तुति वात है ऐसीजी ॥२॥
यदि खवर राजाजी पासी, तो इज्जत आपणी जासीजी।
यों नीठ-नीठ समझाया, ले पवन रतनपुरी आयाजी ।३॥

॥ दोहा ॥

सज्जन ने यह भेद सव, समझाया था ठीक।
पिण पवन हृदय से ना मिटा ज्यों पत्थर की लीक।१।

तर्ज—राधेश्याम रामायण।

नर नीतिकार वतलाते हैं, दिल फटने पर नहीं सिल सकता।
जैसे — [illegible] फिर नहीं मिल सकता ॥१

प्यारी जग में एक जुबां है बाकी बात सरासर है।
यही मित्र है यही शत्रु है अमृत जहर हलाहल है ॥२
पहले ही से जुबान पर तुम अविल प्यारे रख लेना।
किसी नशे में आकर के तुम शब्द सख्त नहीं कह देना ॥३
जबर जुबां का जखम कहा है सुधार किसी पर चलती है।
सुधार बड़े बस वीर पुरुष का वीर कलेजा करती है ॥
तोप तीर तलवार तमंचर ताजी मार नहीं ऐसी है।
नहीं मरहम यही हो सकती यह धार जुबां की पमी है ॥

॥ दोहा ॥

देखो खटके पावको, गयो तो खटके सेया।
पवन खटके बावलो, स्यो खटके नेया ॥१

तर्ज—राधेश्याम रामायण।

बस यही बात थी यहां पर भी पर इसमें फर्क था बहुत बड़ा।
कहा कुमरी ने और ढग से, कुंवर साहब ने और महा ॥१॥
बिन सोचे ही कुवरी पर कुंवर साप मारात हुये।
ममता का अपवाद देख कर क्यों सीतापर रघुराज हुए ॥२॥
जो बिन सोचे ही करते हैं वो पीछे से पछताते हैं।
दुख पाते हैं घबराते हैं और अपनी इज्जत वहाते हैं ॥३॥

॥ दोहा ॥

होनहार के जोग से, चदला पवनकुमार।
सज्जन को ऐसे कहे, परणू नहीं यह नार ॥१॥

तर्ज—म्हारे घरां पधारोजी ।

हाने खोटी लागेजी २,
ऐसी कन्या से शादी करतां भूंडी लागेजी ॥ टेर ॥
ोटी खावे मांटी केरी गुण वीरा का गावे ।
र पुरुषांरी करे प्रशंसा फिर किम सती कहावे ॥ १ ॥
लती मेड़ घरे कुण घाले कुण नोंत दरिद्र लावे ।
थम ग्रास में आवे मक्षिका फिर किम भोजन भावे ॥२॥

॥ दोहा ॥

सज्जन सुन मन सोच के, पूरण लाके प्रीत ।
मंजुल मीठे वचन से, समझावे इण रीत ॥१॥

तर्ज—गोपीचन्द लडका० ।

सुन वात हमारी जोड़ी विन भूठो जग में जीवनो ॥ टेर ॥
पशु पक्षी भी रहे रात दिन अपनी प्यारी संग ।
पुरुष होय के परणो नांही -यो कांई लागो रंगजी ॥१॥
ऐसे कैसे हुवा कुंवरजी शादी सुं नाराज ।
क्या तुम शादी लायक नहीं हो या वनसो महाराजजी ॥२॥
क्या अवगुण है कन्या मांही आप गया क्यों रूठ ।
सती सुशीला कारण मुख से क्यों थे बोलो भूठजी ॥३॥
काणी खोड़ी कारण दुनियां, रुपीया लेकर जावे ।
नटो कुंवरजी सुन्दर सुं थे वड़ो अचम्भो आवेजी ॥४॥
घर की शोभा घरणी सेती नरणी नीतिकार ।
काम पड्यां या आड़ी आवे स्वारथियो संसारजी ॥५॥

॥ दोहा ॥

सज्जन के यह शब्द सुन, पिघला थोड़ा मन।
किन्तु छलना कारणे, बोला एम बचन ॥१॥

तर्ज—लाख पापी तिर गये०।

तेरी मेरी ना बने तू यों कहे मैं यूं कहूं।
परतम करता है मुझे तूं मैं कहूं हां ना रहूं ॥ टेर ॥
तू कहे सती अञ्जना के संग शादी कीजिये।
मैं कहूं करता नहीं तूं यों कहे मैं यूं कहूं ॥ १ ॥
तूं कहे सती साधवी सर्व गुण की खान है।
व्यभिचारिणी कुलटा है यह तू यों कहे मैं यों कहूं ॥२॥
नागनी मानुष वदन सुन्दरी सुकुमाल है।
लागनी है विष भरी तू यों कहे मैं यों कहूं ॥ ३ ॥

तर्ज—मूल ख्याल की।

सज्जन यों समझावे कुंवर का यों मत बोलो बोल।
बोल्यां पहिले तुमने पवनजी लेयो दिल में तोलजी ॥२६॥
वचन कहूं सो पाले पुरुष यह नर की पहचान।
वचन देय बदले जो जग में नर वह नारि समानजी ॥२७॥
शादी जो रुच से नहीं करणी क्यों कीनी स्वीकार।
नकी करके अब नटते हो ऐसी लोग धिक्कारजी ॥२८॥
पवनकुंवर मन मांय विचारे करणो किसो उपाय।
मित्र हमारे लारे लागो ऐसी मोय परणायजी ॥२९॥

मे नहीं शादी करसूं इनसे इनका क्या हो विगाड़ ।
परणन वाले वहुत जगत में, राजा राजकुंवारजी ॥२०॥
जैसे कन्या अति दुख पावे, ऐसो करूं विचार ।
शादी कर छिटकाऊं इनको, पासी दु'ख अपारजी ॥२१॥
भर्यो हुकारो नीठ कुंवरजी, कही न मनकी बात ।
श्रोता ऐसे कपट न करना, अपने मित्र के साथजी ॥२२॥
मित्रराय ने जाय कही है, दीना लगन थपाय ।
आनन्द सु तव पवनकुंवर को दीना वींद वणाय ॥२३॥
चढ़ी जान जव पवनकुंवर की लाखों लोग है लार ।
महिंदपुरी में आई सवारी, देखे सव नरनारंजी ॥२४॥

तर्ज—लावनी ।

जानकी खूब करी त्यारी २,
पवनकुंवर की तोरण ऊपर आई असवारी ॥ टेर ॥
हाथी घोड़ा रथ पालखी, पलटन है भारी ।
वाजा वाजे नाटक नाचे नारी नखराली ॥ १ ॥
हाथी होदे वनड़ो सोहे, मोहे नरनारी ।
केसर और कसूमल वागा, सारी असवारी ॥ २ ॥
मस्तक मोड़ जोड़ कुंडल की, गलमाला डारी ।
कल्पवृक्ष सम वने पवनजी, सूरत है प्यारी ॥ ३ ॥
चंचल नयनी चन्दा वदनी, जो परदेवाली ।
जाली भरोखे वैठी वाला, देखे असवारी ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

सारे नगर की नारियां, देखन हुई तैयार ।
अपनी अपनी सहेलियां, ले चाली निज लार ॥१

तर्ज–सीता माता की गोदी में।

चालो चालो ए देखण मे वनड़ो आवियो ए ॥ टेर ॥
वनड़ो मोहलियो मन म्हारो धीरज किम धरूं ए।
कैसी सूरत कामनगारी लागे मिसरी से भी प्यारी ॥
इनकी आंखों हैं मतवारी ॥ १ ॥
कैयक रूपवती मतवारी कालो होगई ए।
देख्यो वनड़ा केरो रूप, शोभे सुंदर इन्द्र सरूप ॥
साथे राजा राणा भूप ॥ २ ॥
धन्य है मान्य मदनमा केरा पुन्यवन्त पति मिलयो ए।
कै यक वनड़ा का गुण गावे, वनडी को कोई और सरावे ॥
धीरे धीरे सवारी आवे ॥ ३ ॥

तर्ज—मूल।

मर्दिराय ने मर्दिपुरी को, दीनी है सिणगार।
ठोर ठोर पर बाजा बाजे माटकरा झणकारजी ॥२४॥
धीरे-धीरे चलते आया राज्य भुवन के मांय।
महारानीजी लियो मांयने वनड़ो गाय वधायजी ॥२५॥
सती मदनमा सजित होकर बैठी गोख मझार।
वींद देखकर बोली सखियां कन्या को तिसवारजी ॥२७॥

तर्ज–सेलणा दो गणगोर।

धन थांरो अवतार बाईजी २
दो पुण्यतणो परताप बाईसा ऐसो मिल्यो भरतार ॥ टेर ॥
निरखत निरखत नयन न धापे तरस रही सब नार।
गुणवन्तो पति पोरसो बाई सुन्दर ने सुकुमार ॥१॥

तू है रति सम अति ही सुन्दर, यह है काम कुमार।
तू है राज दुलारी प्यारी, यह है राजकुमार ॥२॥

॥ दोहा ॥

चंचल नयन चकोर से, देख्यो पति मुख चन्द।
त्रिवली चहरे पर चढ़ी, देख सती हुई मन्द ॥१॥

तर्ज-बामणा का।

सइयां मोरी ए वात सुणो एक माहरी,
सहियां मोरी ए मत सरावो भरतार।
सहियां मोरी ए नजर कहीं लग जावसी,
सहियां मोरी ए मिले जो लिखियो लिलार ॥१॥
सहियां मोरी ए सकल सवारी मोद में,
सहियां मोरी ए पिवड़ो क्यों दिल गीर।
मोरी सहियां ए फीको चेहरो क्यों पड्यो,
सहियां मोरी ए कांई पियूरे पीर ॥२॥
सहियां मोरी ए छतियां धूजे माहरी,
सहियां मोरी ए फुरके दक्षिण अङ्ग।
सहियां मोरी ए कैसे पियूजी रूसिया,
सहियां मोरी ए पड़े न रंग में भंगजी ॥३॥

तर्ज-मूल।

आखिर आकर वैठे चंवरी में, झटपट दम्पती जोड़।
नरनारी कहे इन्द्र इन्द्राणी, करे न इनकी होड़जी ॥२८॥
हेजकरी हरिणाक्षी मन में, कर रही खूब विचार।
घूंघट पट में चंचल नयनी, देखे पति दीदारजी ॥२९॥

पवनकुंवर की आंख मांय में नहीं प्रम का रंग ।
परण्या पहली प्यारे पियू का, कैसे बदला ढगजी ॥१
हथलेवा में हाथ मिलायो जैसे ही अंगार ।
पवनकुंवर को कुमरी ऊपर, आई रीस अपारजी ॥१
करे पीड्म में मन की पीड़ा हुई अंजना अड़ ।
प्रेम भरे का हाथ मिलाना होता और ही ढगजी ॥१
सती अंजना सोचे दिल में, आठे हाल में कालो ।
क्या कारण है कैसे रूठो प्रीतम को मतवालोजी ॥१
परणी पाछी उतरया सरे दीनो दायजो राय ।
वसन्त मालादि सखी पांच सौ, दीनी साथ पठायजी ॥१
दियो दायजो लागो राजा लोग कहे सब ठीक ।
हुई सीख अब निजपुत्री को, दे माता यों सीखजी ॥१

तर्ज–रसिया नवीन ।

मेरी जावे तूं सुसराल, सुयश ले पाछी आइजे ए ॥ टेर ॥
जैन धर्म को मर्म समझ तूं हिये रमाइजे ए ।
मिथ्या पाखण्ड बीच में पड़ भूल न जाइजे ए ॥१॥
पति परमेश्वर तुल्य समझ तू हुकम उठाइजे ए ।
पति जो करवे वचन कहे सो मत रीसाइजे ए ॥२॥
सासू सुसर की सांचे मन से सेवा बजाइजे ए ।
रात दिवस तूं करजे काम मत आलस लाइजे ए ॥३॥
नणन्द जिठाणी और देवर को दिल न दुखाइजे ए ।
सब से दिल मिल रहीजे, मतना राड़ मचाइजे ए ॥४॥
रहीजे आनन्द मांय सदा सदाचार निभाइजे ए ।
दोनों कुल की लाज बढ़ै मैं शोभा बढ़ाइजे ए ॥५॥

॥ दोहा ॥

सुनी सीख यह अंजना, करके नीचे नैन ।
हथ जोड़ निज मात को, बोली ऐसे बैन ॥१॥

तर्ज–रसिया नवीन ।

माता देदे शुभ आशीष, सदा सुख सम्पत्ति पाऊंगी ॥ टेर ॥
जो जो आज्ञा आप सुनाई, शीश चढ़ाऊँगी ।
सदाचार शृङ्गार सजाकर, वंश बढ़ाऊँगी ॥१॥
सुख दुख में रह पति के संग में, उन्हें रीझाऊँगी ।
पति भक्ति का हार हिये में, मै पधराऊँगी ॥२॥
मैं वह माता बेटी तेरी, नहीं दूध लजाऊँगी ।
दोनों कुल को सारे जग में, ऊँचा दिखाऊँगी ॥३॥
ओलू आसी माता थारी, पत्र पठाऊँगी ।
हाय आज मैं प्यारे पिहर से, दूर होजाऊँगी ॥४॥
अब तो माता जद तू बुलासी, तब मैं आऊँगी ।
रात दिवस मै याद करूँगी, भूल न जाऊँगी ॥५॥

तर्ज–मूल ।

ऐसे सीख दीवी कन्या ने, हुई सवारी तैयार ।
गावे ओलूं सधवा नारी, मन में धरके प्यारजी ॥३६॥
एक मजल पहुंचावण आये, राजा राणी लार ।
मन्त्री को दे साथ भूपति, गये निज नगरी मझारजी ॥३७॥

पवनकुंवर की आंख मांय मे, नहीं प्रम का रंग।
परण्या पछली प्यारे पियू का, कैसे बदला ढंगजी॥१०॥
हथलेवा में हाथ मिलायो, जैसे ही अंगार।
पवनकुंवर को कुंवरी ऊपर आई रीस अपारजी॥११॥
करे पीहर में मन की पीड़ा, हुई अंजना भङ्ग।
प्रेम भरे का हाथ मिलाना होता और ही ढंगजी॥१२॥
सती अंजना सोचे दिल में, मठ हाल में कालो।
क्या कारण है कैसे रूठो, प्रीतम मो मरुसालोजी॥१३॥
परणी पाछी उतरथा सरे, दीनो दायजो हाथ।
बसन्त मालादि सखी पांच सी दीनी साथ पठायजी॥१४॥
दियो दायजो ताजो एसा लोग कहे सब ठीक।
हुई सीख अब मित्रपुत्री को, दे माता यों सीखजी॥१५॥

तर्ज-रसिया नवीन।

मेरी लाडो तू सुसराल सुयश ले पाछी आइजे ए॥ टेर॥
जैन धर्म को मर्म समझ तूं, हिये रमाइजे ए।
मिथ्या पाखण्ड बीच में पड़, भूल न जाइजे ए॥१॥
पति परमेश्वर तुल्य समझ तूं, हुकम उठाइजे ए।
पति जो कड़वे वचन कहे तो मत रीसाइजे ए॥२॥
सासू सुसर की सांचे मन से सेवा बजाइजे ए।
रात दिवस तूं करजे काम, मत आलस लाइजे ए॥३॥
बयण जिठाणी और देवर को दिल न दुखाइजे ए।
सब से हिल मिल रहीजे मतना पड़ मचाइजे ए॥४॥
रहिजे आनन्द मांय सदा सदाचार निभाइजे ए।
दोनों कुल की साख बढ़ें में शोभा बढ़ाइजे ए॥५॥

॥ दोहा ॥

सुनी सीख यह अंजना, करके नीचे नैन ।
हथ जोड़ निज मात को, बोली ऐसे बैन ॥१॥

तर्ज–रसिया नवीन ।

माता देदे शुभ आशीष, सदा सुख सम्पत्ति पाऊंगी ॥ टेर ॥
जो जो आज्ञा आप सुनाई, शीश चढ़ाऊँगी ।
सदाचार शृङ्गार सजाकर, वंश बढ़ाऊँगी ॥१॥
सुख दुख में रह पति के संग में, उन्हें रीझाऊँगी ।
पति भक्ति का हार हिये में, मै पधराऊँगी ॥२॥
मैं कह माता बेटी तेरी, नहीं दूध लजाऊँगी ।
दोनों कुल को म्हारे जग में, ऊँचा दिखाऊँगी ॥३॥
ओलू आसी माता थारी, पत्र पठाऊँगी ।
हाय आज मैं प्यारे पिहर से, दूर होजाऊँगी ॥४॥
अब तो माता जद तूं बुलासी, तब मैं आऊँगी ।
रात दिवस मै याद करूँगी, भूल न जाऊँगी ॥५॥

तर्ज–मूल ।

ऐसे सीख दीवी कन्या ने, हुई सवारी तैयार ।
गावे ओलूं सधवा नारी, मन में धरके प्यारजी ॥३६॥
एक मजल पहुंचावण आये, राजा राणी लार ।
मन्त्री को दे साथ भूपति, गये निज नगरी मझारजी ॥३७॥

इधर सवारी चलती आई, रतनपुरी के मांय।
सन्मुख आयो हर्षित होकर श्री महान महारायजी ॥३८॥
पवनकुँवरजी परख पद्मनी, ले आया निज लार।
नार नगर की गावे बधावा देवन हुई तैयारजी ॥३९॥

तर्ज—बीरा लुमां झूमां होय आयजो।

आसो आसो देवस मे आई, या सती सासरे आईजी ॥टेर॥
है सती सुशीला सयानी जिन मानी मन जिनवानीजी।
सब देख देख सुखपाई प्रभु सुगति जोड़ मिलाईजी ॥१॥
है चन्द्र रोहिणी जैसी, नहीं रति कामकी ऐसीजी।
है सीता राम ही लागे, सब जगमें महान लागेजी ॥२॥

तर्ज—मूल।

सासु बहू पे राजी होकर, खूब कियो सम्मान।
पगे लागणी मांय सती ने, गहरो दियो धनमालजी ॥४०॥
गेहणा लेहणा साड़ी सुन्दर वस्तर विविध प्रकार।
महला रतन जड़ाव का सरे, दीना सुन्दर हारजी ॥४१॥
गांव पांच सौ दिया बहू ने और भी मोटा महल।
शुकचढ़ लीला करो यहां पर मानो सुख से सहलजी ॥४२॥
सासू सुसरा प्रेम करे पिण, पवन न पूछे सार।
पति बिना है पद्मणी रे सूनो सब संसारजी ॥४३॥
परख प्रिया ने पवनकुँवरजी मूं की महल मझार।
सर्प कांचली जैसे छोड़ी फिर नहीं चीमो प्यारजी ॥४४॥

अन्तर हेत हुवे नहीं तो, नैणा नेह न होय।
नेह विनानी तेह नीसरे, वात गमे नहीं कोयजी ॥४५॥
वोल कु वोल न वीसरे, साले शल्य समान।
आरती अति घणी करे अजना, कर्म तणो फल जानजी ॥४६॥

तर्ज-विन ऋतु वरसे मेह।

कैसे मै अब काढ सू ए सजनी, प्रीतम विन दिनरात ॥टेर॥
वसन्तमाला सुन वातड़ी ए, सजनी किम रूठो भरतार।
मालूम मुझको नहीं पड़ी ए सजनी, कहे अञ्जना नार ॥१॥
रग राग भावे नहीं ए सजनी, निशि नहीं आवे नींद।
खान पान खारा लगे ए सजनी, क्यों नहीं आयो वींद ॥२॥
सूना मडप मालीया ए सजनी, सुन्दर मंदिर महल।
रसिया विन नीरस हुआ ए सजनी, खोटा सगला खेल ॥३॥
लाओ जलदी जायने ए सजनी, प्रीतम ने समझाय।
विना पिया जीना वुरा ए सजनी, जीव लहरिया खाय ॥४॥

तर्ज-मूल।

कहे वसन्ती सुनो कुंवरी सा, क्यूं थे करो विचार।
कोई कारण सूं आया नांही, नहीं कोई और विचारजी ॥४७॥
परण्या सो तो आसी आखिर, करसी फिर घर वास।
था जैसी ने छोड़े कैसे, राखो तुम विश्वासजी ॥४८॥
सती कहे क्या करम आवसी, नहीं आने का ढंग।
चँवरी में भी देखलियो मै पियू का बिगड़ा रंगजी ॥४९॥
सुनो सहेली एक हमारी, सो वाता की वात।
पत्र हमारा जाकर देना, पवन पिय के हाथजी ॥५०॥

तर्ज—मीठो खरबूजो ।

प्राणपति परमेश्वर पियूजी कदे पधारोला विरह मि-
टोला ॥ टेर ॥ प्राणाधार ! प्रिय ! प्रियवर ! प्रीतम ! !
पर दया बिचारोला, प्राण ध न ! इस विरह व्यथा से
उबारोला ॥१॥ चरणों की चेरी को आतुर चित से
बिसारोला । कृपानाथ कर कृपा आप कब विपत निवारं
॥२॥ स्वाती बूंद सीप ज्यूं तरसूं कब तक पियू ! तर
सोला । म्हारे ऊपर प्रेम की वर्षा कब बरसावोला ॥ ॥

तर्ज—मूल ।

पत्र लेय के एक सहेली गई पवन के द्वार ।
देख अञ्जना सती सहेली अजरयो पवनकुमारजी ॥४१॥

नमस्कार कर नम्र भाव से दीनो पत्र निकाल ।
पवनकुंवर के लागी दिल में अग्नी झालो झालजी ॥४२॥

पत्र फाड़कर फेंक्यो कुंवरजी पढ़ा न अक्षर एक ।
यह हालत सब सती सहेली, नी नजरों से देखजी ॥४३॥

बात आय ने कह दी सगली, जरा न राखी लाज ।
साच कहूं कुंवरीसा थां पर, कुंवर साब नाराजजी ॥४४॥

सुनी अञ्जना बात पियू की पड़ी धरणी मुरझाय ।
वसन्त मालादि सखियों सारी, पाछे सती को थायजी ॥

अकस निकस गई विरह व्यथा में कर रही यम विलाप ।
मन मोहन मेरे प्राण पिया से कब होगा मिलापजी ॥४५॥

तर्ज—कांटो लागोरे देवरिया ।

कैसे रूठो ए सहेली म्हारो मन मोहन भरतार ।
मन मोहन भरतार म्हारो रूठ गयो करतार ॥ टेर ॥
चुगल खोर कोई लागो काने, झूठी साची कहदी छाने ।
भरमायो भरतार ॥१॥
या कोई गलती हुई हमारी, जिन से पियुड़ो करे खुवारी ।
भुगतू कारागार ॥२॥
पिया बिना अब जिया न लागे, खान पान सब खारा लागे ।
मरसूं खाय कटार ॥३॥

तर्ज—मूल ;

ऐसे आरती करती रति बिन, सती अञ्जना नार ।
प्रीतम कारण झुरे झूरणा, छोड्या सब सिणगारजी ॥५७॥
गांव पांच सौ सासु दिया वे, खोस्या पवनकुमार ।
लीना मंदिर मालिया सरे, नहीं करे सार सम्भारजी ॥५८॥
एक महल में रहे अञ्जना, सहे विरह की मार ।
कुवर कुवरी के प्रेम नहीं यह, फैली नगर मझारजी ॥५९॥
राजा राणी सुनकर दोनों, रहे पूर्ण दुख पाय ।
पवनकुंवर को पास बुलाकर, रहे एम समझायजी ॥६०॥

तर्ज-मैं डरूं एकली बादल में चमके० ।

सुन पुत्र पियारा क्यों तू रीसायो अबला ऊपरे ॥ टेर ॥
यह अबला है दीन विचारी, इनकी राखो शर्म ।
कीड़ी ऊपर कटकी करना, क्षत्री का नहीं धर्मजी ॥१॥

क्यों कीना यह गाँव पोष सो, भूपण और मेंढार।
समझदार होकर के कुमर सा यह क्या किया विचारजी ।७
सती सुलक्षणी सुन्दर विदुषी विनयवती रति जैम।
पड़ो अचम्भो आवे म्हानि, इन पर रूठा केमजी ॥८॥

॥ दोहा ॥

पिता वचनको श्रवणकर, लज्जित हुआ कुमार।
किन्तु नीची दृष्टि कर, उत्तर कहे उदार ॥१॥

तर्ज—खेलन दो गणगोर०।

मत पूछो इस बार पिताजी मत पूछो इस बार।
हो म्हारा मायों का रखवार पिताजी मत करिये लाचार।टेर
आप पिता मैं पुत्र तुम्हारा कैसे कहूं समाचार।
याद आवे म्हने घणो पिताजी नीति को व्यवहार ॥१॥
और जो आज्ञा तुम फरमावो, खेकूं मैं सिरधार।
इसके लिये जो कुछ भी कहा तो, मरस्यूं आप कटार ॥२॥

तर्ज—मूल।

भूप विचारे चित्त में सारे कुंवर सर्व गुणवान।
बैद न खेमा किसी बात का है नीति फरमानजी ॥११॥
खबर पड़ी या मित्र मे सारे, कुंवर करे अन्याय।
सती अञ्जना अबला ऊपर गयो कुंवर रीसायजी ॥१२॥
मित्र आय मस्ती स मिलियो जहां पे पवनकुमार।
प्रेम लाय समझावन कारण बोले वचन विचारजी ॥१३॥

तर्ज— कांई रे जवाब करूं रसिया ।

कांई रे मिजाज करे मन में, मिजाज करे तूं गुमान करे तूं ।
ओ सब साज उड़ेगा छिन में ॥ टेर ॥
बालकपन ऐसे नहीं कीजे, अवला विचारी ने दुख नहीं दीजे ।
कांई इण जुलम कियो है थांरो, कोमल वदनी ने यूं क्यूं मारो ।१।
कीड़ी ऊपर कटकी न कीजे, सोच विचार काम सब कीजे ।
बिन हिम्मत क्यूं परणी नारी, सब मिल लोग देवेगा गारी ।२।

तर्ज—कमली वाले की ।

लाचार करो मत यार मुझे, यूं मेरा मन घबराता है ।
मरे हुए मन मृग ले पर फिर क्यों तूं तीर चलाता है ॥टेर॥
चाहे साज रहै या मिजाज रहे, मत राज रहै मेरी लाज रहै ।
पर क्या कहूं मुझ से दोस्त अरे ! हा ! असही सहा न जाता है ।१
लाख उपाय करो तुम प्यारे, काम एक नहीं आता है ।
नहीं मिलता है मन मोती जो, एक बार कहीं फट जाता है ।२

तर्ज—मूल ।

मित्र विचारे अब नहीं कहना, नहीं कहने में सार ।
तामसमें अरदास न करनी, कहते नीतिकारजी ॥६४॥
और किसी के रती न अटके, सती रही दुख पाय ।
पति प्रेम बिन गई अञ्जना, कजनी ज्यूं कुमलायजी ॥६५॥
खान पान और स्नान छोड़ी, छोड्या सब सिणगार ।
ध्यान हिये जिनवर को धरती, करे सामायिक सारजी ॥६६॥
ऐसे करता केई दिन जावे, एक दिवस की बात ।
पवनकुंवर हित भेज्यो भेटणो, सती अञ्जना तातजी ॥६७॥

क्यों लीना यह गांव पोष सौ, भूषण और भंडार।
समझदार होकर के कुमर सा यह क्या किया विचारजी ।।२
सती सुलक्षणी सुन्दर विदुषी, विनयवती रति प्रेम।
बड़ो अचम्भो आवे म्हाने, इन पर रूठा केमजी ।।३।।

॥ दोहा ॥

पिता वचनको श्रवणकर, लज्जित हुआ कुमार।
किन्तु नीची दृष्टि कर, उत्तर कहे उदार ।।१।।

तर्ज—खेलन दो गणगोर० ।

मत पूछो इस बार पिताजी मत पूछो इस बार।
हो म्हारा प्राणों का रखवार पिताजी मत करिये लाचार।टेर।
आप पिता मैं पुत्र तुम्हारा कैसे कहूं समाचार।
यस आवे म्हाने घणो पिताजी नीति को व्यवहार ।।१।।
और जो आज्ञा तुम फरमावो, कोऊं मैं सिरधार।
इसके लिये जो कुछ भी कहा तो, सरसू आप कदार ।।२।।

तर्ज—मूल ।

भूप विचारे चित्त में खरे कुंवर अयं गुणवान।
कैद न खेला किसी बात का है नीति फरमानजी ।।११।।
खबर पड़ी या मित्र के खरे, कुमर करे अन्याय।
सती अञ्जना अबला ऊपर, गयो कुंवर रीसायजी ।।१२।।
मित्र आय जल्दी से मिलियो जहाँ पे पवनकुमार।
प्रेम साथ समझावन कारण बोले वचन विचारजी ।।१३।।

तर्ज— कांई रे जवाब करूं रसिया ।

कांई रे मिजाज करे मन में, मिजाज करे तूं गुमान करे तूं ।
ओ सब साज उड़ेगा छिन में ॥ टेर ॥
बालकपन ऐसे नहीं कीजे, अबला विचारी ने दुख नहीं दीजे ।
कांई इण जुलम कियो है थांरो, कोमल वदनी ने यूं क्यूं मारो ।१।
कीड़ी ऊपर कटकी न कीजे, सोच विचार काम सब कीजे ।
विन हिम्मत क्यूं परणी नारी, सब मिल लोग देवेगा गारी ।२।

तर्ज–कमली वाले की ।

लाचार करो मत यार मुझे, यू मेरा मन घबराता है ।
मरे हुए मन मृग ले पर फिर क्यों तूं तीर चलाता है ॥टेर॥
चाहे साज रहै या मिजाज रहे, मत राज रहै मेरी लाज रहै ।
पर क्या कहूं मुझ से दोस्त अरे ! हा ! असही सहा न जाता है ।१
लाख उपाय करो तुम प्यारे, काम एक नहीं आता है ।
नहीं मिलता है मन मोती जो, एक वार कहीं फट जाता है ।२

तर्ज–मूल ।

मिश्र विचारे अब नहीं कहना, नहीं कहने में सार ।
तामसमें अरदास न करनी, कहते नीतिकारजी ॥६४॥
और किसी के रती न अटके, सती रही दुख पाय ।
पति प्रेम बिन गई अञ्जना, कजनी ज्यूं कुमलायजी ॥६५॥
खान पान और स्नान छोड़ी, छोड्या सब सिणगार ।
ध्यान हिये जिनवर को धरती, करे सामायिक सारजी ॥६६॥
ऐसे करतां केई दिन जावे, एक दिवस की बात ।
पवनकुंवर हित भेज्यो भेटणो, सती अञ्जना तातजी ॥६७॥

गहणा वस्तर साल दुसाला, मेवा और मिष्ठान ।
और भी मोती हीरा पन्ना भेज्या खूब समानजी ॥६८॥
सती देख मन करे आरती रूठोड़ो भरतार ।
देख भेटसो म्हारे पियूड़ो, करसी मुझ से प्यारजी ॥६९॥

तर्ज—पपैयो बोलयोजी ।

सहेली झटपट आइजे ए, अजि म्हारे प्राण पिया की खबर आय तू वेग सुणाइजे ए । पियाने भेटणो दीजे ए अजि इस दासी का परणाम चरण में फिर कह दीजे ए ॥ ॥ पियाने मरज सुणाइजोजी, अजि म्हने तरस तरस तरसाय पिया अब मत तरसाइजोजी । पियाने ज्यूं त्यूं मनाइजोजी, थांरी परणी जोवे वाट मिलण ने वेगा आइजोजी ॥२॥

तर्ज—मूल ।

वसन्त माला से दासी चाली सखियां के परिवार ।
आई हंस हिया में धरके पवनकुंवर के द्वारजी ॥७०॥
कुंवर साब के महलां मांहि लगे नाटक झणकार ।
वसन्त माला को देखी नजरां प्रजल्यो पवनकुमारजी ॥७१॥
नमस्कार कर वसन्तमाला धन्यो भेटणा ताम ।
कुंवर साब तो गंधर्वां ने बांट दियो है तमामजी ॥७२॥
देख दशा यह वसन्त माला ने ऊठी रीस अपार ।
आई ताम उतावली सरे कुंवरानी के द्वारजी ॥७३॥
सुनो कुंवरी था कान लगाकर साच कहूं समाचार ।
देख लिये मैं नजरां थांरो, मौजू है भरतारजी ॥७४॥

॥ दोहा ॥

सखी लखी पियू की यथा, तथा कही सब साफ।
पवनपति पर प्रेमला, अति करे सती विलाप ॥१

तर्ज—गूजरणी।

समझदार सहेली है, अकलदार सहेली है,
म्हांरो प्राणांरो पियारो साहिब वस कियो,
म्हारा कामणगारा ऊपर कामण कुण कियो ॥ टेर ॥
सखी जादूगर जादू कियो, हे सखि लीयो पियो विलमाय।
सखी या कोई मंत्र से मोहियो, हे सखी जिनसे रह्यो भरमाय ॥१
सखी ऐसो मै नहीं जाणियो, हे सखी अध विच देसी छोड़।
सखी पियूड़े जाल करी घणी, हे सखी है कपटी शिरमोड़ ॥२
सखी जल विन तड़फे माछली, हे सखी घन विन तरसे मोर।
सखी पियू विन नित मै तरसती, हे सखी चन्द्र विना ज्यूं चकोर
॥ समझदार० ॥३॥

तर्ज—मूल।

इण विध सोच करत है निश दिन, पीड़ारो नहीं पार।
तदपि पति पर नहीं नाराजी, करमों का है विकारजी ॥७५
कहे अञ्जना सुणो सहेली, भोंदू नहीं भरतार।
पियूड़ा ने थे यूं मत वोलो, पियू मुज प्राण आधारजी ॥७६
वहिन वुलावण कारण भाई, आवे वारवार।
पियू राजी विन ख़ारा लागे, तीजादि त्योंहारजी ॥७७
सती अञ्जना कारण चिन्ता, करे मात अरु तात।
कुँवरी ऊपर किण विध रूठो, जुल्म करे जामातजी ॥७८

एक दिन आये एक भ्राताजी, बहन मुलाकाण काज।
कैसे मुँह दिखलाऊँ भाई, आई सती ने लाजजी।
आकर देखी माई बहिन में देखा और ही रंग।
प्रेमभाव से पूछे सती को, यह क्या कीना रंगजी।

तर्ज—क्या भुणियो ले।

थारे कारण आवियो सुण बेहनीए
जो सुख दुखमी होय मुझने कैहनीए।
किस विध आमण दूमणी सुण बाई ए,
तू अन्न बिन बैठी होय क्यों कुमलाईए॥ १॥
चन्द्र बदन फीको पड़यो सुण बहनीए
गयो कोमल तन कुमलाय बातां कहणी ए।
के ही सासू गालियां दुख पाई ए
के सुसरो गयो रीसाय क्यों घबराई ए॥ २॥

॥ दोहा ॥

गद गद कंठी हो गई, जल भर आयो नैन।
रोती रोती यों कहे, सुन भाई मुझ बैन॥१॥

तर्ज—मारवाड़ी पनिहारी।

मुज दुख दुख में क्या कहूं सुण माई रे
कहतां आवे लाज रे सुण भाई रे।
दुख पाऊ दिन रात मैं सुण भाई रे
तूं तो आयो आज सुण भाई रे॥ १॥
ना कोई सुसरो रीसीयो सुण भाई रे
नहीं दी सासू गाल रे सुण भाई रे।

कोई दासी दुख दीयो सुण भाई रे,
रूठो है भरतार रे सुण भाई रे ॥ २ ॥
कर चालू पीहरे सुण भाई रे,
इण विरिया के मांयरे सुण भाई रे ।
यू बिन विरथा नार रे सुण भाई रे,
सूनो सब संसार रे सुण भाई रे ॥ ३ ॥

तर्ज—मूल

भगनी का सुन वचन यों भाई, दुख पायो अनपार ।
सुनिये बाई सती अञ्जना, क्यों रूठो भरतारजी ॥८१
सती कहे यह कर्मगती है, होवे ज्यों तकदीर ।
कोई किसी का चूक न इसमें, सुनो हमारा वीरजी ॥८२
जाओ भाई अपने घर तुम, रहना आनन्द मांय ।
सोच फिकर मत करना मेरा, रहे कर्म सतायजी ॥८३
मात पिता को कहना मेरा, भक्ति युक्त परणाम ।
जब तक राजी पियू नहीं होवे, मत लेना मुझ नामजी ॥८४
विलख वदन हो भाई अपनी, नगरी आयो चाल ।
मात पिता ने बाईजीरा, मांड कह्या समाचारजी ॥८५
मात पिता सुण सोच करे अति, सती करे धर्म ध्यान ।
ऐसे करता केई दिन जावे, आगे सुणो बयानजी ॥८६
घोड़ा खेलावण प्रति दिन जावे, सज्जन पवनकुमार ।
आता जातां सती अञ्जना, करले पति दीदारजी ॥८७
दरसन से परसन चित होवे, सती मन धारे धीर ।
एक दिन प्यारे पवनकुंवर की, पड़ी दृष्टि तिन तीरजी ॥८८

तर्ज—गोपीचन्द लड़का ।

सुण मित्र पियारा, या कुण ऊभी है महलां मांयने ॥ टेर ॥
मोहनगारी सूरत प्यारी कैसी है सुकमाल ।
किन्नरी है या अपछर कन्या, अथवा नागकुमारजी ॥१॥
सुन रायकुंवरजी सामी ऊभी है प्यारी आपकी ॥ टेर ॥
सती सुशीला सुन्दर अंगी, है यह अबला नार ।
दर्शन करवा ऊभी आकर, इसकी दया विचारजी ॥२॥
परम प्रतापी पवनकुंवरजी, दीना हुकम लगाय ।
सती महल के आगे अंगी, दीनी भींत चुनायजी ॥३॥

॥ दोहा ॥

सती ध्यान आरत करी, कथी हुई या बात ।
कथी जाय दासी भणी, गती बिगाड़ी नाथ ॥१॥

तर्ज—लावनी ।

सखी किस विध धारूँ धीर भयी घबराई
मुझे पिया बिना सब जगत लगे दुखदाई ॥टेर॥
मैं देखूं सूना महल फटे मेरी छाती
यों निरख निरख के रहूँ सदा बिलखाती ।
रो रो कर कटती रात नींद नहीं आती,
प्रीतम बिन सारी रात तड़फती जाती ॥
मेरे प्राण पिया को जरा दया नहीं आई ॥१॥
मैंने छोड़या मायर बाप और मेरे भाई
मैं छोड़या सब परवार और भौजाई ।

मैं छोड्यो पीहरे को प्रेम पिया संग आई,
मैं मन में धरके आस सासरे आई ॥
मेरी मिटगई मन की मौज खोज रहा नांई ॥२॥
यदि चूक हुई हो नाथ ! चौड़े फरमादो,
जो गलती हुई हो नाथ ! साफ दरसादो ।
यह दासी रहे उदास चरण की चेरी,
चाहे रूठो तूठो नाथ ! शरण हूं तेरी ॥
क्या कीना मै अपराध कियूंनी वतलाई ॥३॥

तर्ज—मूल ।

सती आरती छोड़ सदा ही, करे धर्म चितलाय ।
एक समय का सुनो जिकर तुम, श्रोता ध्यान लगायजी ॥८६
राज सभा में आयो दूत एक, लंका सेती चाल ।
पूछ्यां से सब मांड कह्या है, रावण केरा हालजी ॥६०
वरुणराय को जीतन कारण, आप भणी बुलवाया ।
जलदी से आ जाना भूपती, ऐसा हुकम लगायाजी ॥६१
प्रहलाद भूपति सुनत वचन यह, सेना करी तैयार ।
रण में जातां देख पिताने, बोला पवनकुमारजी ॥६२

तर्ज—म्हारे घरां पधारोजी ।

म्हाने खोटो लागेजी, आप जैसों को रणमें जाणो भूंडो लागेजी।टेर
रगड़ा झगड़ा करना आछा जोर जवानी मांही ।
वूढ़ापा में झगड़ो करनो भलो न भाखे भाई ॥ १ ॥
वूढ़ापा में नीति कहवे धर्म करण की वेला ।
किण कारण कहो झगड़ो करिये, साथे न चाले अधेला ॥२॥
मुझ ने आज्ञा देवो पिताजी, झगड़ो करवा जाऊँ ।
आप तणे परताप वरुण को जीत फते कर आऊँ ॥ ३ ॥

तर्ज- मूल ।

अति हट देख्यो पवनकुंवर को, दी आज्ञा फरमाय ।
रण में रखजा तुम हुशियारी दीना सब समझायजी ॥९३
पहर शस्तर सजकर कुंवर होगयो खूब हुशियार ।
सेनापति को हुकम लगायो फौ सब सैन्य तैयारजी ॥९४
यह सब खबरां सुनने पाई, सती अंजना नार ।
प्राण पिया तो रण में आये, करना केम विचारजी ॥९५
दर्शन करस्यूं प्राण पिया का प्रीतम जगरे जाय ।
शुभ सगुन से वस्तु आऊँ देऊँ हुकम सजायजी ॥९६
वसन्तमाला भी सती संग छे, ऊभी पन्थ मझार ।
हाथी होदे पवनकुंवरजी देखे आंख पसारजी ॥९७
कैसे वस्त्र सिंगारे देखो चित्र कियो है कमाल ।
इण आगे रानी अपछर किन्नर होजावे पैमालजी ॥९८
सुनकर सज्जन कहे कुंवरसा यह मत मानो चित्त ।
यह है प्यारी सती अंजना पूरब पुण्य पवित्रजी ॥९९
सुनकर रूठा पवनकुंवरजी क्यों आई इणवार ।
हाथी पासमें लाके कुंवर ने दी ठोकर की मारजी ॥१००
पड़ी धरण पर पसु खाकर के ज्यों कदली की डार ।
सती सोच मन दूखो मानो पायो दुःख अपारजी ॥१०१

तर्ज—कांकसियारी ।

म्हारा प्राण पियारा प्रीतमजी हा ! इम किम रूठो रे ।
इम किम रूठो रे कलंक दियो झूठा रे ॥ टेर ॥
मैं तो आई आज्ञा करके पिवू का दर्शन करस्यूं रे ।
हाथ जोड़ कर क्षमा मांगस्यूं, शीश चरण बिच धरस्यूं रे ॥
किम हुवो अपूठो रे ॥१॥

सब लोगां के सामे म्हांरी, कीनी खूब खुवारी रे।
इणसे आछो जहर देयकर, मुझने क्यों नहीं मारी रे॥
कुयश छायो भूण्डोरे ॥२॥
रोती रोती सती अंजना, पड़ी धरण मुरछाय रे।
वसन्तमाला वाला को बोले, सती मती अकुलाय रे॥
चलो घर ऊठो रे ॥३॥

तर्ज–आखीर नार पराई है।

सोच सती अब करो मती, मूरख मिलियो पवनपती ॥टेर॥
भीतर पीतल ऊपर झोल, पती आपरो फूटो ढोल।
खबर करी मैं रती रती ॥१॥
ज्यों पूछे ज्यों अति गुमरावे, खर मिसरी ज्यूं मुंड हिलावे।
ऊँध गती है मूढ़मती ॥२॥

॥ दोहा ॥

पति निन्दा को नहीं सुने, सतियों को आचार।
वसन्तमाला को रीस ला, बोली अंजना नार ॥१॥

तर्ज–निश दिन चरखो कात सहेली।

पियू को ऐसे न बोल सहेली, पियू मुझ प्राण पियारो है ॥टेर॥
कुल दीपक मन मोहनगारो घर उजियारो हे।
शिर सेहरो सिणगार हमारो हार हियारो हे ॥ १ ॥
विवेक विनारो वचन तुम्हारो खटके खारो हे।
पति परमेश्वर कयो नीति में हिये विचारो ए ॥ २ ॥

तर्ज—मूल।

ऐसे बातां करती दोनों, आई महल मझार।
सामायिक शुभ मन से करती, अरु पडिकमणो सारजी ॥१०
धर्म ध्यान में समय बीतावे सती अञ्जना तमाम।
पवनकुंवर ने नगरी बाहर कीना प्रथम मुकामजी ॥१०
खान पान कर सेन्या सब ही सुखे करे विश्राम।
पवनकुंवर अब मिले सती से सुनिये कथा तमामजी ॥१०

तर्ज—चन्दा थारी चांदनीसी रातरे।

पवनकुंवरजी बैठा होल्यो डाल रे कांई सज्जन रे सम्म संग करे बातजी। चकवो चकवी बैठा सरवर तीर रे कांई आई रे ऊपर आधी रातजी ॥ १ ॥ सज्जन पवनजी दोनों ही मिल बोलरे कांई बातां रे कर रया खूब किलोलजी। डोल डोलकर बोले दोनों बोल रे कांई आपमें रे प्रेम कथा अनमोलजी ॥ २ ॥ चकवी कर रही है चहचाट रे, कांई कानेरे सुणियो पवनकुमार ने। क्यों कुरलावे कारण कांई बतलाय रे कांई बोल्यो रे सज्जन ने ललकार रे ॥३॥

तर्ज—नाथ कैसे गज को फन्द छुडायो।

चकवी यों क्यूं शोर मचायो क्यों चहचाट लगायोरे ॥टेर॥
कारण रन में रति नहीं दीसे, जिससे जिय घबरायो।
बिन कारण ही क्यों कुरलावे पतो पूरो नहीं पायो ॥ १ ॥
सुनकर सज्जन यूं मन सोचे आछो अवसर आयो।
जिससे सतीको यह अपमानी ऐसो रंग लगायो ॥ २ ॥

चकवी इणविध शोर मचायो ॥ टेर ॥
चकवी कहती चतुर सुनो तुम, चित किनको चमकायो ।
कलक लगाकर किया विछोहा, जिनको विरह फल पायो ॥३॥
सती अंजना पे रंज को कारण, सगलो भेद बनायो ।
ऐसो ढग रग दिखलाकर, पवनकेऽनंग जगायो ॥ ४ ॥

तर्ज—तावडा धीमो पडजारे ।

वचन थूं पवनजी सुणियो रे वचन०,
गुणीयो मुख नवकार एक और मस्तक ने धुणियो ॥ टेर ॥
कैसा प्रेम है इस चकवी का, निज पति चकवे साथ ।
पशुओं में भी पति प्रेम हा ! किसो भन्यो जगनाथ ॥ १ ॥
मुझ को कैसी मिली करकशा, पूरव भव के पाप ।
घर में झगड़ो रहे रात दिन, दिल में लग्यो सन्ताप ॥२॥
सज्जन कहे सुन दोस्त हमारा, क्यूं करो चिन्ता घोर ।
थारे जैसी नारी जग में, नहीं है दूजी ठोर ॥ ३ ॥
सती सुयश तो फैल्यो जग में, गावे गुण सब शहर ।
ऐसे कहता पवनकुंवर को, मिटियो सारो जहर ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

शुभ कर्मों के उदय से, आयो प्रेम अमाप ।
क्रोध हट्यो सती ऊपरे, करे कुँवर सन्ताप ॥१॥

तर्ज—हां सखी चल खास कन्नेडी ।

होय काम मैं खोटो करियो, लोक लाज से जरा न डरियो ।
द्वेष सती के ऊपरे नाहक ही धरियो रे ॥ टेर ॥

मात पिता मुझने समझायो, तो पिया मैं नहीं रस्ते आवी'
मित्र तणी नहीं बात मान मैं उलटो लड़ियो रे ॥१॥
एक बार मैं महलां आऊँ प्रेम लाय प्यारी बतलाऊँ।
मिलन कर मनमांय मित्र से यूं उचरियो रे ॥ २ ॥

तर्ज—शिव शिव ध्यान लगाय रे ॥

हारे सज्जन वेग पधारो दरबार रे। म्हने मिलावो म्हारी नारने
सती हुकम देवण ने आई दीनी मैं लात प्रहार रे।
सती मणी मैं अति दुख दीनो झगड़े को होगयो त्यार रे।
दुख में कैसे जीत होवेगी दुख तो सोच विचार रे।
नामे मुरके दुपकर वालो अबर पड़े न खिंगार रे ॥२॥

तर्ज—मूल।

सज्जन सुन मन सोचियो सरे ऐसा करो उपाय।
रातो रात में पहुचो महलां ज्यूं नहीं होत हंसायजी ॥१०७
सेन्यापति को तेड़ने सरे दीनो हुकम लगाय।
तीन दिनां से हम आवेंगे कुल देवी दीसायजी ॥१०१
तब नक यहां पर रहना प्यारे, करना सार संभाल।
ऐसा कहकर सतीद्वार पे, आये दोनों लालजी ॥१०७
करूँ परीक्षा फिर प्यारी की ऐसा किया विचार।
द्वारपास में आकर धीरे, ऐसी दी ललकारजी ॥१०८

तर्ज—मोरा नणदोसा देवरा ॥

प्रिय! मोरी प्यारी सजना तो पर वारी हो ॥ टेर ॥
कर दिनां की लगन लगी है तुम से लगी इकतारी है।
प्रिय! धन्य बदनी खोल किंवारी मैं आयो हूं मात पियारी है॥१

पवन के पीछे पीछे क्यों तरसाती, वनजा तूं मेरी पियारी है।
जोर जवानी फिर न मिलेगी, सुनले तूं मोहनगारी है ॥२॥

॥ दोहा ॥

सती अंजना और सखी, सुणया अपूरव बोल।
बोली उत्तर में सखी, सुणरे फूटा ढोल ॥१॥

तर्ज—कायथडा ॥

हां रे लंपटी कै तूं मारग भूलियो, हां रे लंपटी कै थारो आगयो काल रे पापी, म्हारा पिया परदेशां में ॥ टेर ॥ हां रे लंपटी वालूं थारी जीभड़ी, हां रे लंपटी चिराऊँ थारी खाल रे पापी म्हारा पिया० ॥ १ ॥ हांरे लंपटी मै ऐसी नहीं कामनी, हां रे लपटी राचूं थारे फन्द रे पापी म्हारा० ॥२॥ हां रे लंपटी क्या तू मेरे सामने, हां रे लंपटी गिणुं न इन्द नरेन्द्र रे पापी म्हारा० ॥३॥

॥ दोहा ॥

सती शील में झिल रही, लखली पवन कुमार।
प्रेम लाय के पुनरपि, बोल्यो वचन विचार ॥१॥

तर्ज—मेरा नन्नासा देवरा ॥

होले होले अब तूं बोल मेरी प्यारी, नहींतर है मेरी खुवारी है। झटपट खिड़की खोल मेरी अञ्जना, मै आयो हूं पवन पियारी है। हो मोरी प्यारी अञ्जना, तो पर वारी है ॥ टेर ॥ १ ॥ जिनके लिये तू झूरे झूरणा, उनको देवे किम गारी है। मै हू तुम्हारा पियू पियारा, तूं है मेरी पियारी है ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

दीपक लेकर देखियो, निरखे पवन कुमार ।
जाय बसन्ती सतीमणी, बोली इणी प्रकार

तर्ज—पनजी मूंडे बोल ॥

पियू घर आयो ए १ सुन सती अञ्जना नाम बड़ायो ए ।
बोल बोल अब बोल मूल तू, थारो माम्य सवायो ए ।
देख देख अब आयो पियूड़ो, बिना बुलायो ए ॥१॥
सुणयो पवन यो सती अञ्जना, अमहद मोद बढ़ायो ए ।
पियू आने से सती हिया में हर्ष न मायो ए ॥ ॥
ऊठी सती तब निज आसन सी वदन कमल विकसायो ए
बोल दुपार जोड़ कर दोनों वचन सुनायो ए ॥२॥

तर्ज—गवरल ईसरजी केवे तो हंसकर बोलन।

भले आया हो प्रीतमजी आऊँ वारणा हो थां पर ब
हो बलिहारी राज पधारया हो ॥ टेर ॥ सती झट ऊठी शी
नमायो पियू दरसण से मन विकसायो अपणो सब अपर
खमायो झट पट आसन लाय बिछायो राज पधारया
॥१॥ आज आंगण में सुरतरु फलियो म्हांरो सारो दुख
टलियो पुण्य जोग से प्रीतम मिलियो म्हारी धन्य घ
धन भाग कि राज पधारया हो ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

स ी सरलता धारिता, पतिव्रता पिय ओर ।
लखकर मन मुदित हुआ, बोला कुंवर किशोर

तर्ज–बना ऊमराव ॥

प्यारी म्हारी तू कुलवन्ती नार, सतवन्ती तूं साची ए म्हांरी घरनार। प्यारी म्हारी सज्यो शील सिणगार, पति प्रेम में राची ए म्हारी घरनार ॥ १ ॥ प्यारी म्हारी मैं हूं वड़ो पुण्यहीन, दुखड़ा थाने दीनाए म्हांरी घरनार। प्यारी म्हारी तू तो लियो गुण चीन, अवगुण एकन लीनो ए म्हारी घर–नार ॥ २ ॥ प्यारी म्हारी तूं है घड़ी गुणवान, मोटी महिमा थारी ए म्हारी घरनार। प्यारी म्हारी क्षमो म्हारो अपमान, जाऊं मैं वलिहारी ए म्हांरी घरनार ॥ ३ ॥ पिया म्हारा तूं है प्राण आधार, मैं हूं दासी थांरी हो म्हांरा भरतार। पिया म्हांरा ऐसो न करियो विचार, मैं चाकर चरणांरी हो म्हांरा भरतार ॥४॥ पिया म्हारा किया मैंने जो कसूर, माफी उणारी दीजो हो म्हारा भरतार। पिया म्हारा घट गयो म्हारो नूर, अब तो किरपा कीजो हो म्हारा भरतार ॥ ५ ॥ पिया म्हारा सब करमां का खेल, कैसो रंग दिखायो हो म्हारा भरतार। पिया म्हारा आज हुवो है मेल, ऐसो लेख लिखायो हो म्हारा भरतार ॥६॥

तर्ज–मूल ॥

ऐसे उत्तर प्रत्युत्तर कीया, पवन अञ्जना नार।
दोनों ही गल वैयां डाली, आया महल मजारजी ॥१०९॥
रति क्रिया में पति पत्नी का, गया तीन दिन रात।
पवनकुंवर कहे प्यारी से यूं, चौथे दिन परभातजी ॥११०॥
प्यारी थारे प्रेम में, कुछ नहीं सूझे मोय।
जाणो दिल चावे नहीं, रेणो किस विध होयजी ॥१११॥

तुम बिन सुख नहीं मिल्ने मिलके सम्यो अवर जंजाल ।
जाऊँ छोड़ नहीं पैर सरीखे, हुवो हाल बेहालजी ॥११२॥
सुख में मुझको आयो पड़सी सुख प्यारी या बात ।
रहसा सुख में महलां मांही सखी वसन्ती साथजी ॥११३॥
पियागमन का वचन श्रवण कर, होगई अधिक उदास ।
हाथ जोड़ चरणां में झुककर करे सती अरदासजी ॥११४॥

तर्ज—मारवाड़ी मांड ॥

सुन प्राण पियारा हाथ बिचारा जाओ मत मुझे छोड़ ॥टेर॥
हाथ पकड़ पतिराज को रे बोली अंजना नार ।
आयो थो तो आवसो रे जाओ नहीं इणवारजी ॥१॥
आप बिना नहीं आवड़े रे सुणजो किरपानाथ ।
सो बातां री बात एक है ले चालो मुज साथ हो ॥२॥
झुक झुक चरणां झुक रही रे गद् गद् बोले बेण ।
पियू गले में लिपट गई रे झब झब भरिया नैण हो ॥३॥

॥ दोहा ॥

प्रेम फास में फस गये, फिर नहीं आना हाय ।
चिन्तातुर हो चित्त में, कहे अंजना नाथ ॥१॥

तर्ज—पनिया भरन कैसे जाना ॥

हम कहे कुंवर मृदुवाणी सुन सील सती तूं स्यानी ॥टेर॥
नहीं जाने का चित चावे निज देश चलो घबरावेजी
कयो मान मेरो कुंवरानी ॥१॥
मैं पीहर ही जा आई अपने क्यों न जावे म्हांसुंजी
मत नाख नयन से पानी ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

रोती रोती बोली अञ्जना, यह तो कीजे काम ।
एक वार तो जावो राज में, ज्यों न होय वदनामजी ॥११५॥
पिया मान हमारी, आप पधारो सीधा राज में ॥टेर॥
गर्भ वृद्धि अव होसी मेरी कुछ तो करो विचार ।
सासू सुसरा देखने सरे, देसी मुझे धिकारजी ॥११६॥
इण से अर्ज है मेरी आप से, जाय कहो समाचार ।
शंका जिण से रती न होवे, शोभा हो संसारजी ॥११७॥
सुन प्राणपियारी, मैं तो सरमाऊं जातां राज में ॥ टेर ॥
कुंवर कहे क्यूं जाऊं राज में, जातां आवे लाज ।
दुनियां दिल क्या जाणसी सरे, क्या केसी महाराजजी ॥११८
मातपिता की शंका मेटण, कहूं एक उपाय ।
गहणा कपड़ा मेरी मुद्रिका, देना उन्हें दिखायजी ॥११९॥
कर्मयोग से जाने की हा !, नहीं आई मन मांय ।
वसन्तमाला को दी भोलावण, सकल कथा समझायजी ॥१२०
रुदन करे असराल अञ्जना, पियू को करे प्रणाम ।
मुखसूं देती ऐसे ओलया, मत लो 'जावां' नामजी ॥१२१॥

॥ दोहा ॥

आणो तो आछो घणो, जाणो जहर समान ।
वालहा तणा विछोहवा, मत दीजे भगवान ॥१
पियू जावो थे जंगमें, हिय में लग्यो हिलोल ।
सुध बुध सारी भूल गई, चित्त चढ़ियो चकडोल ॥२
नयन आसी नींदड़ी, आछो न लागसी अन्न ।
रसिया थामें रात दिन वसियो म्हांरो मन्न ॥३

पड़सूं पलसी आप बिन, जल बिन जिम जलमेव।
भटके खारा खेर सम, मोहन तुम बिन महेल ॥४

सवाल पवनकुंवर का—

॥ दोहा ॥

प्यारी न्यारी नहीं करूं, मैं हिरदा सूं दूर।
पिय इण बिरियां अंग में, आयो मुझ जरूर ॥१॥
प्यारी तू मन में बसी, क्यूं पथरी में आग।
ऐसो कामण क्यूं कियो, कैसी लगाई लाग ॥२॥
प्यारी बिन सारी नहीं, लागे मोय असार।
मिलनो बिछड़नो थारे !, क्यों कीनो करतार ॥३॥
प्यारी आसूं बेगसूं, मन म्हारो तुम पास।
धीरप दिल धारण करो यूं मत होवो उदास ॥४॥

तर्ज—मूल ॥

पति मिलनामन देख सती मन आयो और विचार।
युद्ध में जातां पति ना रोकना कहत नीतिकारजी ॥१२२॥
सोच मुमोच भवना बोली, सुन साहब सरदार।
युद्ध में बैरी जीतजो सरे मत आजो भरतारजी ॥१२३॥

तर्ज —मीठो खरबूजो ॥

सुन बालम सरदार आप म्हनै भूल म जाइजो हो बेगा आइजो हो ॥ टेर ॥ युद्ध में जाकर सुयश कमाइजो मत कायरता लाइजो हो। पड़े बड़े जुंझार मारकर जोर जमाइजो

हो ॥१॥ सामी छाती लइजो भंवरजी !, मत थे पूठ दिखाइजो हो। गढ़-पतियों का गाढ़ काढ़कर, दास बनाइजो हो ॥ २ ॥ हाथ जोड़कर आही अरज है, युद्ध से जीतकर आइजो हो। चरणां की चेरी की पियूड़ा, खबरां लिराइजो हो ॥३॥

जवाब पति का—

सुनो सुलक्षणी नार लार आनंद में रहीजो हो,जस थे लीजोहो।टेर
पाछो वेगो आसूं प्यारी, सोच जरा मत कीजो हो।
सत्यवन्ती कुल नार अञ्जना, रीत में रहीजो हो ॥१॥
महलां में मन मोहनगारी, सुख से क्रीड़ा कीजो हो।
सुनो वसन्ती मेरी प्यारी को, दुख मत दीजो हो ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

ऐसा कहकर पवनकुंवरजी, मिल्या मित्र से जाय।
अब तो चालो कटक मांयने, ठेस्यां ठीक न थायजी ॥१२४॥
कटक लेयने पवनकुंवरजी, लंका नगरी जाय।
भूप भली परे भेटीया सरे, अति रलियायत थायजी ॥१२५॥
लेकर आज्ञा रावण राय की, शुभवेला सुखदाय।
वरुण राय पर ततक्षिण चढ़ियो, दल वल सवल सजायजी ॥१२६
अब तुम सुणो सती कथा को, गर्भ रह्यो तिण रात।
गुप्त पणे का काम है सरे, कोई न जाणे वातजी ॥१२७॥
गर्भ वृद्धि को जान के सरे, माडी दान की शाल।
दीन हीन अरु दुखियारों की, लेवे सती संभालजी ॥१२८॥
सासू आशु खबरां पाई, वहू वधायो पेट।
द्रव्य लुटावे राजनो सरे, पुरी जमाई पेठजी ॥१२९॥

आप कही मत रायने सरे, प्रञना का समाचार।
बहु आपरी प्राण पियाजी, करे बहो व्यभिचारजी ॥११
आज्ञा होवे आपकी सरे पेहूं बहु समझाय।
पुत्र सारी वारता सरे पीहर दूं पहुंचाय जी ॥१२१॥
बैठ पालखी मांय सासुजी आवे सती घर द्वार।
सती अञ्जना खबरां पाई, आई सामी चालजी ॥११२॥
अत्तर का छिड़काव लगाया, और फूलों का ठाठ।
आवे सती मन मोद भरायो सासु आसी इण वाटजी ॥१३
सामी आयी पाये लागी चरणामृत लियो घोल।
वेवाईसू पण कुसले सरे बोली इण पर बोलजी ॥११४॥

तर्ज—म्हे तो थाया हो सगीजी थां रे पावणा।

थां पर वारी हो सासुजी भलां पधारिया हो ॥ टेर ॥
मैं तो दरसण कर सुखपाई घर घर बांटू आज बधाई
आऊं वरणांरी बलिहारी वारेवारियां हो ॥ १ ॥
पूरया सकल मनोरथ आज सासु बधाई म्हारी लाज
गावो सासु गुण सज साज सकल सुकुमारियां हो ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

केतुमती कहे सुणो बहुजी फिट्यो आज को रंग।
उदर वृद्धि किम हुई तुमारे थो कोई फीको ढंगजी ॥११५॥
मोटा घर की पुत्री प्यारे, मोटा घर की नार।
माय साय सब मुझ मे माग्यो मायो बड़ो विचारजी ॥११६
भूपण मिसी पाये लागी, पियु सुण सीमी ल्यार।
दया लाय आया पियु पासा, मुझ घर रयणी मझारजी ॥११७
तीन दिवस मुझ पास बिराज्या पूरी ममनी आस।
पाछे जाकर गया पियूजी, छिदगी सातमो मासजी ॥ ११८॥

तर्ज–तरकारी लेलो० ॥

मं नो नहीं मांनूं साची वातां तूं कहदे अञ्जना ॥ टेर ॥
झूठ बोलतां जरा न लाजे, अयि ! व्यभिचारण नार ।
कैसा अनरथ किया पापणी, धिक धिक तुझे धिक्कारजी ॥१
रे दुष्टे ! दुर्भागण ! डाकण !, लोपी कुल की लाज ।
तू कुल खांपण आई घर में, देख लिवी मै आजरे ॥२॥
पियो तेरे से कबहु न बोल्यौं, क्यों तूं बोले कूड़ ।
निर्णो इसको निकलेला जद, पड़सी मूंडे धूड़जी ॥३॥

॥ दोहा ॥

कटुक वचन सासु तणा, सुण्या अंजना नार ।
उत्तर में आतुर तदा, बोली वचन विचार ॥१॥

तर्ज–तावडा धीमो पडजारे ॥

सासूजी बेड़ा मत बोलो २ एड़ा कांइ रूठ गया हों कड़वा क्यों बोलो ॥ टेर ॥ जाया थारा आया अठे और, रह्या हमारे पास । आ सहिनाणी देखलो सरे, रखो मेरा विसवास ॥१॥ रोती रोती कहे अञ्जना नहीं मैं कीना कर्म । मत दो झूठो आल सासूजी, राखो हमारी शर्म ॥२॥

लाड़ीजी लखण नहीं आछा हो २, खोटा करके काम अबे थे बण रह्या हो साचा ॥ टेर ॥ चोरी कर तूं लाई गहणा, बण रही साहूकार । जाणुं लखण मैं थारा सारा, तूं सेवे व्यभिचार ॥१॥ कंचन छुरी नहीं मारूं पेट में, सो वातां एक वात । पिहर जा परी पापणी सरे, नहीं राखू एक रात ॥२॥

॥ दोहा ॥

सासु फासु मत करो, म्हासू ये तकरार।
श्वास् नासती अंजना, कर रही पुनि पुकार।

तर्ज—हाँ रे भामणा का० ॥

मामो ! म्हारा सासुजी ! अरज सुणो एक माहरी ॥
मामो म्हारा सासुजी ! मत करो इतनी रीस। सुणो म
सासुजी मैं छू दासी आपरी सुणो अरज ममाऊ म्हारो ह
मामो० ॥ १ ॥ सुणो म्हारा सासुजी पियु घर आव जब।
सु० । राखो मुझे घरमांय सु० । ऐंठो का दिन काढ सें सु
सरा दया तो लाय सु० ॥ २ ॥

तर्ज—मूल ॥

सती बचन सुण सासु फासु प्रजली रीस मझार।
तड़क मड़क कर सती मस्तक पे मारी लात महाराजी ॥१३
पापण तू परी जा परी सरे, मारी नजर सूं दूर।
थारे सरिखी बहु लारे मैं हूं धोवां भर पूरजी ॥१४ ॥
बसन्त माला को ऊँची हेर कर देवे ताजणा मार।
कोरथा गहणा मेरे पुत्र का कौन चोर कुण जारजी ॥१४॥
तेरह घड़ी तक हेरी राखी छूटी रतन की धार।
वसन्तमाला कहे रोती रोती चोर है पवनकुमारजी ॥१४॥
जब लग घर में रहे अजना तब लग मुझको नेम।
अनपाणी नहीं लेऊँ लाला नहीं है कुशल न खेमजी ॥१४॥
काला रथ मंगावियो सरे काला सब सिणगार।
केतुमति कहे काय करीने काढो म्हारा घर बारजी ॥१४॥

॥ दोहा ॥

मती अंजना और सखी, करे अरज कर जोड़ ।
मानो अरजी मानजी, थे मांरा शिर मोड़ ॥१॥

तर्ज-कांटा लागो रे देवरिया० ॥

मतना मेलो हो सासुजी म्हांने पिहरिये निरधार ॥ टेर ॥
कलंक लेय किम पीहर जाऊँ, ऐसे जातां मै शरमाऊँ,
मत काढो घर बार ॥ १ ॥
हाथ जोड़ मै अरज करू छूं, मस्तक चरणां बीच धरूं छूं,
एक थारो आधार ॥ २ ॥
पियुड़ो म्हांरो पाछो आसी, साच कहूँ सासू दुख पासी ।
ऐसी तुझे धिक्कार ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

केतुमती अति क्रोध में, सुन्या वचन लिगार ।
अनुचर को बुलवाय के, बोली यों ललकार ॥१॥

॥ तर्ज-लावणी ॥

मत देना कोई आल किसी पर भाई, भुगते हाथो हाथ हुवे दुखदाई ॥ टेर ॥ केतुमती कहे कथन क्रोध भर नैना, है हुकम मेरा यह साफ साफ सुन लेना। इन दोनों को रथ मांय घाल ले जाना, फिर अध विच में छिटकाय लौट घर आना, यदि होगा इसमें गलत मौत तेरी आई ॥१॥ दोनों को काला वेस तुरत पहिराया, जो आभूषण मणि माल तुरत

बुलवाया। सती कहे मरदार सखी समझावे रथ बा-
हे सममाट अगल में आवे, मनुचर कहे कर जोड़ अति इ
पाई ॥ २ ॥

तर्ज–मीठोखरबूजो ॥

केतुमती अति रीस लाय यों हुकम लगायो है यों फुरमायो है ले
काई कहूं मैं बात बाइसा कहतां दिल घबरायो है।
जोड़ अंगल में आपने मुझको बुलवायो है ॥ १ ॥
समझो मेरो अपराध बाईजी, चरणों शीश नमायो है।
इण में नहीं है चूक मेरो मैं हुकम बजायो है ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

गयो सारथी छोड़कर ऊपर आई रैन।
अति दुखित हो अजना, बोली ऐसे बैन ॥१॥

॥ तर्ज–पपैया काहे मचावे शोर ॥

सहेली अब किम धारूं धीर पड़े नयन से नीर ॥ टेर।
परणी अब तो प्रीतम मुझ पर माहक थे नाराज। पिया प्रेम
अब किया मेरे से सासु बिगाड़ी लाज कलंक के काले तन
पर चीर ॥१॥ जग बीच अपजस है मरना कहते नीति-
कार। इसमें मरना श्रेय मुझे है मरूं लाय कटार, सुनत
यों जाय कलेजा चीर ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

आकुल व्याकुल अंजना, आयो नयनां नीर।
तदपि साहस धारकर, सखी बंधावे धीर ॥१॥

॥ तर्ज कमली वालेकी ॥

दिलगीर हुये क्यों वाईजी, तकदीर लिखा वही होता है।
तदवीर करो चाहे लाखों पर, तकदीर लिखा जो होता है॥टेर
जो रोज सुवह को खिलता है, वह श्याम पड़े कुमलाता है।
जो दाग हजरते वैठ गये फिर, रगड़ रगड़ क्या धोता है ॥१
एक दशा नहीं रही कभी, यह गेंद दड़ी ज्यों गोता है।
हल मस्त होय जो फिरता था, वह आज दुखी हो रोता है॥२

तर्ज–मूल ॥

न्द सुणया यों सती अञ्जना, आयो हिरदे होस।
मलदार ने अमल डली ज्यों चढ़ियो दुणो जोसजी ॥१४५॥
ती दुख काटण दिनकर ऊग्यो, प्रगट्यो प्रकट प्रकाश।
खी सती को धीरज देवे, देवे पूरो जासजी ॥१४६॥
हिन्दपुरी आ दीखे सामने, अव मत कीजे वार।
लो वाईजी जे जन करिये, होसी जय जय कारजी ॥१४७॥

तर्ज– मैं अंगरेजी पढगई हूं ॥

नहीं पीहरिये चालूं, मुझको शर्म सताती ॥ टेर ॥ कलंक
य किम पीहर जाऊँ, साच कहुं सहियर शर्माऊं, हा हा
से हालूं॥१॥ जोगिन वनकर अलख जगासूं, सुत होने से
र जल जासूं, पूरण पतिव्रत पालूं॥२॥

तर्ज–मूल।

: कर्मो की माया वहिनी, सती मतीकर सोच।
ाहुत मिलियां सव सुख होसी, ऊञ्चो घर आलोचजी ॥१४८

कलक हुमारा ऊतर जासी नहीं सांच को आंच ।
केतुमती क्यूं माता नहीं है, कुछ तो करसी जांचजी ॥११९॥
आखिर मन समझाय धीर धर चाली दोनों बाल ।
गमनभमित हो सती अंजना बोली ऐसे सवालजी ॥१२०॥

तर्ज—मोटर धीरे धीरे हांक० ॥

सखियर धीरे धीरे हाल मखन कोमल कुमलापो ए ॥टेर॥ कभी न चाली पाली प्यारी चढ़ती थी सुखपाल कहिये कैसे चालूं चरण मेरे सुकमाल ॥१॥ तीखे कंकर लागे लागे तन होवे ये हाल । रुधिर धार से चरण भये मम जिसड़ो परवा लाल ॥२॥

तर्ज—मूल ॥

चलती चलती आखिर आई नगर पर कालो भेष ।
घूंघट पट से मुख ढक करके कीनो पुर में प्रवेशजी ॥१२१॥
गली होय के चली चली लेग डर में अति उमंग ।
पीहरिया की आश पाईके है कुदरत को ढगजी ॥१२२॥
नार उदासी नगर निवासी देख हुये सब दंग ।
संग सहेली स्याह रंग है, इस किम बदला ढंगजी ॥१२३॥
लोक नगरमा लाखों लारे मुख मुख बोले बोल ।
लजवन्ती ज्यों नारी शर्मावे पहुंची गढ़मी पोलजी ॥१२४॥

॥ दोहा ॥

द्वारपाल को जोश था, बोली सती सवाल ।
जो कहती हैं पाल मं, जाय कहो नरपाल ॥१॥

तर्ज–मांड मारवाडी ॥

सुन भाई प्यारा, वचन हमारा, जाय कहो नरपाल ॥ टेर ॥
पुत्री आई आपकी रे, निर्मल मन निकलंक ।
सासु फासु द्वेषकर मोपे, दीनो कालो कलंकजी ॥१॥
जो विसवास हो आपने प्रभु, राखो मुझने पास ।
पीतम आवे जहां लगे म्हांने, आपसूं यह अरदासजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

द्वारपाल भूपाल ने, जाय कही ततकाल ।
पहिपति सुन मूर्छित हुवा, बोला शीघ्र सवाल ॥१

तर्ज—कव्वाली ॥

काढो कन्याने घर बार कुलको कलंक लगाने वाली । कु० दोनों लोक लजाने वाली ॥ टेर ॥ कहना तुम यों ललकार देना मुख से उन्हें धिकार, चल तूं अयि ! व्यभिचारण नार, प्यार कर यार बनाने वाली ॥१॥ मतले यहां रहने का नाम, तुमने किया नाम बदनाम, करके ऐसे खोटा काम, हा ! हा ! नहीं शर्माने वाली ॥ २ ॥ मुझको मत मुंह दिखलाय, कुन देखत ही विष खाय, झट पट मुंह ले यहा से जाय, कुल में दाग लगाने वाली ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

कही सही नृपति कही, आतुर अनुचर आय ।
कदली दल ज्यों धरणी पे, पड़ी बाल मुरझाय ॥१

तर्ज–कोरो काजलियो ॥

बसन्तमाला बसने करी काई चाले शीत समीर पापी बावलियो । सावचेत हुई सुन्दरी काईं मैंणा बरसे नीर पापी बावलियो ॥ १ ॥ बसन्तमाला चाला कहे मोरा काल देखी वेस पापी बावलियो । पूछ ताछ नहीं ओंच की उल्ट करियो द्वेष पापी० ॥ २ ॥ हट करके रहती नहीं मैं कहर्त मुख मुख बात पापी० । पीछे मनु पिछतावसो काईं जब मसल आमात ॥३॥ इसमो कह सती अञ्जना काईं गई माता के पास पापी० । माताना मोह हो पयो काईं सती मन में विसवास पापी० ॥४॥

तर्ज—मूल ॥

भूखी प्यासी बासी साथे, दुर्बल होगई देह ।
पहुंची पुहुंची आईं आखिर निज माता के गेहजी ॥१४४॥
सती शर्मीसे परे नयन से आंसू मोतीयो भूम्‍न ।
मुख मुरझायो मोहमगारो, हा ! राहू प्रशो ज्यों चन्दजी ॥१४५
मंदिर मांही माता हीडे चर्खे हिंडोले पाट ।
घूमर घाले मादक माथे सखियों केरा ठाटजी ॥१४७॥
बसन्त माला मीर सती अंजना ऊभी द्वार के पार ।
दुःख भरी माता को ऐसे यक दीनी ललकारजी ॥१४८॥

तर्ज—मैं अंगरेजी पढगई हूं ॥

मैं सासरे सत आई हूं सुन तूं मेरी मैया ॥ टेर ॥
तेरी गोद में तुमने पाली मेरे मोद में होती काली ।
मैं बदी तेरी दौ आई हूं ॥ १ ॥

सासू मो सिर कलंक चढ़ाया, काला वेस मुझे पहनाया।
जिनसे मैं शर्माई हूं ॥ २ ॥
पिता साहब ने हुकम लगाया, प्यासी ने नहीं नीर पिलाया।
गाढी मैं घबराई हूं ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

हींडे हींचती मातने, सुनली ताम पुकार।
लखी पुत्रिका अंजना, बोली निजर निहार ॥१॥

तर्ज–आखिर नार पराई है ॥

जब ही अन जल खाऊँगी, कन्या बार कढाऊँगी ॥ टेर ॥
कलंक लेय क्यों आई आज, इनको जरा न आवे लाज।
मैं नहीं मुंह लगाऊंगी ॥१॥
बांझ प्रभु हा! क्यों नहीं कीनी, क्यों कुलटा यह कन्या दीनी।
इनका नाक कटाऊंगी ॥२॥

॥ दोहा ॥

आई क्यों यहां अंजना, माता का नहीं प्रेम।
चेडी नेड़ी आय के, बोली वेड़ी एम ॥१॥

तर्ज—वीरालूंबां भूंबां होय आई जो ॥

म्हांरी बुरी लगावेला कांइजी, तूं क्यों पीहरिये आईजी ॥टेर॥
क्यों खोटा कर्म कमाया, थे कुलने चावल चढायाजी।
थे अब तो कुछ शर्मावो, म्हाने मूंडो मती दिखावोजी ॥१॥
मत मंदिर अन्दर आना, चले झटपट यहां से जानाजी।
है माताजी का कहना, मत खड़े मिन्ट भर रहनाजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

सखी ध्यांसको लालकर, बोली यों ललकार ।
चल पल धम खामोश हो, बोलो वचन विचार ॥१॥

तर्ज—रसिया नवीन ॥

पहिले कछु बिचारी बोल सखी पीछे पिछताओगी ॥ टेर ॥
सन्मुख मुझको गाली देते नहीं शरम आओगी ।
जितनी करी सताय आज उतनी दुख पाओगी ॥१॥
भूखी प्यासी दासी को देख तुम दया न लाओगी ।
जब दिन मेरे घर आवेंगे फिर घबराओगी ॥२॥
पति पवन जब युध से आसी फिर शर्माओगी ।
सबके मुंह पे धूर पड़ेगी वदन छिपाओगी ॥३॥

तर्ज—चन्दा थारी चांदनीसी रातरे ॥

देखी थारे मात तणी तो बातरे कांई कुसमन देख न करे जैसी हनकरी । सूकी कीमी कांई थारे तातरे कांई जिसरदेख दुखेक भागे मीकरी ॥१॥ चालो बाई चालो सूंडो आजरे कांई काली देख किरदो है मां बापरो । कट्टि अजना है नहीं किन को चूकरे कांई फस है देख पूरब भवरे पापरो ॥२॥

तर्ज—फागसियारी ॥

सूखी प्यासी अजना मार्ग घर आईरे माई घर आईरे गाढी घबराई रे तेडया। मएद बाई को देख देखके मेजाईजी मिड़कीरे। झट पट ऊठ दौड़ मौड़ा की झटके देवी खिड़की रे सखियां शर्माईरे ॥१॥ आड़ो देख दोनूं सखियों को गाढो दिल दुख पायोरे। बारीमां सु मोजाईजी पेको वचन सुनायो रे एकी बतलाईरे ॥२॥

तर्ज—म्हाने खोटो लागेजी ॥

मोने भूंडो लागेजी, नणद बाई ओ वेश आपरो आछो न लागेजी ॥ टेर ॥ घर घर में थे फिरो ढींडता, जग नहीं शर्माओ । लाज शर्म सब ऊँची धरदी, म्हाने मती लजावो ॥१॥ कुण दीना है पीला चावल, अठे आप क्यों आया । दोनों कुल ने दाग लगायो, आछा कर्म कमाया ॥२॥

॥ दोहा ॥

सखी लखी यह रीत हा !, ऊठी ऊरमें झाल ।
पीस दांत और रीसला, बोली यों ततकाल ॥१॥

तर्ज-गनगोर की चाल मे ॥

भोजाई थे म्हारा थारा वचन विचारी बोलोजी २ अब तो जलदी आडो खोलोजी ॥ टेर ॥ ल्होड़ीजी लखणांरा लाडा, आडा क्यो थे अड़ियाजी । मै थांरो कहो कांई बिगाड्यो, वचन बोलो अणघड़ियाजी ॥१॥ घर आयो मा जायो कहवे, अब तो नीचे आवोजी । और थांरे मू नहीं हुवे तो, पाणी आकर पावोजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

नणद भोजाई बीचमें, आयो आतुर बीर ।
बीर देख सती अंजना, कहै नयन भर नीर ॥१॥

तर्ज-गनगोर की चाल में ॥

पावोनी अब नीर भाइजी म्हाने पावोनी अब नीर हो म्हारा जामण जाया बीर भाइजी म्हाने पावोनी अब नीर ॥

टेर ॥ शोक वचन म्हाने मुंडा बोले, लागे ज्यों तीक्ष तीर। अब म्हारी लाज राख म्हारा वीर देख दुं फाड़ गये सब चीर दुख की दासी मापी होगई, आय कलेजे चीर। व्याली दासी वीर मरू मैं सूखो नयनां नीर ॥२॥

तर्ज– पपैयो वोल्योजी ॥

यहिन किम वीर विसार्यो ? अजि म्हाने कर दीनी है मनाई माई हम वोल्याजी ॥टेर॥ कृपा करके थारी आवेजी अजि म्हारी अखियां भर भर आई ॥१॥ पिता ने करी मनाई जी, नगरिपुर में आय फिराई। कोई मत पानी पाईजोजी, अजि अब कहो करूं क्या थाई माई हम वोल्योजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

ऐसे सुनके अञ्जना, पड़ी धरणि मुर्छाय।
सावचेत हो शीघ्रही बोली यों अकुलाय ॥१॥

तर्ज–हो सरदार थारो पचरग मोल्यो० ॥

हो सरदार पसी क्यों थे आय फिराई म्हांका राज, हो महाराज अपसा की नहीं करुणा आई ॥ टेर ॥ मैं तो आई आसकर रे आऊं पिता के पास। पूछ नहीं निश्चय कियोरे जलदी करी उदास। हो महाराज थांकी पे तो समझ सिकाई म्हांका राज ॥१॥ मैं कांई खोटी आपरोरे रहती पलांतें आय प्रीतम माता सासरे अब देन। सब समझाय। हे मेरी माय थें तो अब चित्त में सिटकाई म्हांका राज ॥ २ ॥ पीछे तुम पितुतापमारे साथ कई नहीं भूल। ऐसे कहकर सती अञ्जना चली यहां से ऊठ। हो महाराज मोरी थांकी म्याग गमाई म्हांका राज ॥३॥

॥ दोहा ॥

सखी कहै सती अंजना, अति मति करो विचार।
मनमें अब तुम मानलो, स्वारथियो संसार ॥१॥

॥ तर्ज कमली वालेकी ॥

ब मतलव के संग साथी है, दुनियां में किसी का कोई नहीं।
ाय अपने अपने गर्जी है दुःख दरदी दिल का कोई नहीं ॥टेर
ानी वनी के है भीडू और आन वनी के कोई नहीं।
सुख में साथी लाखों है और दुख का साथी एक नहीं ॥१॥
तकदीर टिकाने जव थी, था मुझ से न्यारा एक नहीं।
तव मेरा मेरा करते थे, अव तेरा प्यारा एक नहीं ॥२॥

॥ दोहा ॥

ऐसे आखिर आगई, माणक चौक मंझार।
नागरीक नरसे सती, कर रही एम पुकार ॥१॥

तर्ज–तरकारी लेलो मालन आई रे० ॥

नगरी का लोका कोइ तो पिलावो पानी आय के ॥ टेर ॥
प्यासां मरती मरूं हाय मैं, नीर नयन में आयो।
मात पिता तो मुझ पर रूठे, पानी भी नहीं पायोरे ॥१॥
अयि! नगरी का लोकां आवो, मतना तुम भय खावो।
दीन दुखी दुर्वल अवला की, जरा दया दिल लावोरे ॥२॥

॥ दोहा ॥

ऐसे कहतां अंजना, दृग भर आयो नीर।
हृदय विदारक आहसे, जाय कलेजा चीर ॥१॥

तर्ज—छन्द मालिनी ॥

सब नगर निवासी देख आये उदासी।
अति दुखित पियासी अखना और दासी॥
सब जन भय आवे चित्त में दुख पावे।
पर जल न पिलावे, पास कोई न आवे॥१॥

तर्ज–छन्द द्रुतविलम्बित ॥

नगरिमें गरि में बरखा भई सुजनता समता अकुला रही।
जल नहीं तु कहां अब लावनो, पुर भयो सगलो अनभावनो॥

तर्ज—छन्द मालिनी ॥

शिर पर अति चोटी, हाथ लाटी लिये है।
जल भरकर लोटी स्नान सुखी किये हैं॥
अतिकर करुणाई चित्त मे पास आई।
इम किम कुमलाई बोल तू बोल पाई॥१॥

॥ छन्द द्रुतविलम्बित ॥

सुपति की पति की घटना सही।
तब कथा विकथा, घटना कही॥
जनकजी क जहां जननी रहे।
मुरझाये तु नहीं जन! नीर है॥१॥

॥ छन्द–मालिनी ॥

सुनकर अकुलायो, चिमने शीश नायो
नहि मन घबरायो, धैर्य ऐसे बधायो॥

मुझ विनय सुनीजे, देर माता न कीजे।
झट पट अब पीजे, नीर ठंडा तु लीजे ॥१॥

तर्ज—ख्याल की चाल में ॥

सुन विप्र पियारा, मैं तो नही पियूं पानी पुण्य का ॥ टेर ॥
पानी बूंद एक पिऊ पुण्य की, पीता लागे पाप।
कष्ट पड्यां भी कायम रहणो, कह्यो नीति में साफजी ॥१॥
और रहस्य है इनमें भाई, किम लोपूं पितु आन।
इनसे कहना मेरा मानलो, जावो घर मतिमानजी ॥२॥

सुन सती सयानी, मतकर नादानी पानी पीजिये ॥ टेर ॥
मैं हूं नोकर माता तेरा, तूं मोटी महारानी।
अरज दास की मान अरोगो, छोड़ो आना कानीजी ॥३॥
भीड़ पड़े फिर आन कान क्या, सबसे प्यारे प्रान।
पानी पीकर शांति कीजे, मुझ अरजी लो मानजी ॥४॥
न्याय युक्त है तेरा कहना, पर है एक विचार।
राजाजी नाराज होवेगा, होसी तेरा बिगारजी ॥सुन विप्र०॥५
चाहे राजा मुझ पर रूठे, लूटे सब घर बार।
कूटे काटे फांसी देवे, छूटे नहीं उपकारजी ॥ सुन सती०॥६॥
पानी कैसे पीऊँ प्यारे, होवे तुजको दुःख।
पर प्राणी को दुख देकर के, नहीं मानूं निज सुखजी ॥सुन विप्र०७
नगरी बाहिर चालो बाई, पालो पिता की आन।
पानी पायां बिन नहीं जाऊँ, दिल में लीनी ठानजी ॥सुन सती०॥८

॥ दोहा ॥

पानी पाकर विप्रवर, गयो श्राप निज द्वार ।
सती सखी तब सखी कहे, चालो विपिन मझार ॥१॥

तर्ज—याद प्रभु आवे रे दरदमें ॥

चालो अब बाई संभालो विपन ने
संभालो विपन मे पालानी पनमे ॥ टेर ॥

पीहर सासरे आसरो नांहि कसकर कपड़े श्रो वसकर मगम ॥१
वन मृगनन के मन में रहोगे भूल जाय तू सकरे सदन मे ॥२

॥ दोहा ॥

चली श्रलीसंग अंजना, आई विपिन मझार ।
कर्मरेख जग बाकड़ी, देखो सब नर नार ॥१॥

तर्ज—मन चलियो तू वेर ॥

माता सांभलो हो मयियण कोइ मत दीजो आल ॥ टेर ॥
आल दियां उगदे भलो हो मयियण बधो कर्म जंजाल ।
भुगतलेसा जीवने हो मयियण करदे हाल बेहाल ॥१॥
आल दियो सती अंजना हो मयियण पूरब भव में विचार ।
बारह घड़ी का हो गया हो मयियण बारह वर्ष ।

मुझ विनय सुनीजे, देर माता न कीजे।
झट पट अब पीजे, नीर ठंडा तु लीजे ॥१॥

तर्ज—ख्याल की चाल में ॥

सुन विप्र पियारा, मै तो नहीं पियू पानी पुण्य का ॥ टेर ॥
पानी बूंद एक पिऊं पुण्य की, पीतां लागे पाप।
कष्ट पड्यां भी कायम रहणो, कह्यो नीति में साफजी ॥१॥
और रहस्य है इनमें भाई, किम लोपूं पितु आन।
इनसे कहना मेरा मानलो, जावो घर मतिमानजी ॥२॥

सुन सती सयानी, मतकर नादानी पानी पीजिये ॥ टेर ॥
मै हूं नोकर माता तेरा, तूं मोटी महारानी।
अरज दास की मान अरोगो, छोड़ो आना कानीजी ॥३॥
भीड़ पड़े फिर आन कान क्या, सवसे प्यारे प्रान।
पानी पीकर शांति कीजे, मुझ अरजी लो मानजी ॥४॥

न्याय युक्त है तेरा कहना, पर है एक विचार।
राजाजी नाराज होवेगा, होसी तेरा विगारजी ॥सुन विप्र०॥५

चाहे राजा मुझ पर रूठे, लूटे सव घर यार।
कूटे काटे फांसी देवे, छूटे नहीं उपकारजी ॥ सुन सती०॥६॥
पानी कैसे पीऊँ प्यारे, होवे तुजको दुःख।
पर प्राणी को दुख देकर के, नहीं मानूं निज सुखजी ॥सुन विप्र०७
नगरी वाहिर चालो बाई, पालो पिता की आन।
पानी पायां बिन नहीं जाऊँ, दिल में लीनी ठानजी ॥सुन सती०॥८

॥ दोहा ॥

पानी पाकर विप्रवर, गयो आप निज द्वार ।
सती मणी मव सखी कहे, चालो विपिन मझार ॥१॥

तर्ज—याद प्रभु आवे रे दरदमें ॥

चालो मब बाई संभालो विपन,मे
संभालो विपन ने पालोमी पनमै ॥ टेर ॥

पीहर सासरे आसरो नांही कसकर कपड़े श्रो वसकर मनमें ॥१
वन मृगनमके गम में रहेंगे मूल आप तू सखारे सघन में ॥२

॥ दोहा ॥

सती अलीसंग अंजना, आई विपिन मझार ।
कर्मरेख जग वांकड़ी, देखो सय नर नार ॥१॥

तर्ज—मन चलियो तूं घेर ॥

आता सांभलो हो भवियण कोइ मत दीजो आल ॥ टेर ॥
आल दियां उगटे घणो हो भवियण बड़ो कर्म जंजाल ।
मुगतरावेसा बीचमे हो भवियण करदे दास बेहाल ॥१॥
आल दियो सती अंजना हो भवियण पूरब भव में विचार ।
बारह घड़ी का हो गया हो भवियण बारह वर्ष विचार ॥२॥

कहां पीयर कहां सासरो हो भवियण, कहां माता कहां वीर।
घर रखणी अलगी रही हो भवियण, जरा न पायो नीर ॥३॥
कहां रथ पिंजस पालखी हो भवियण, कहां दासी और दास।
दुख पावे दोनों जणी हो भवियण, नहीं कोई दूजो पास ॥४॥
सती अति रोवे आरडे हो भवियण, करे रुदन विकराल।
रोती रोती इम भणे हो भवियण, सुण सहिअर मुज हाल ॥५॥

तर्ज—छोटी मोटी सहियां रे।

सुन मेरी सहियर ए दुखों से दिन काटना ॥ टेर ॥ अति दुःख पाया मैने पिया के प्यार में, बारे बारे वरसों तक नहीं वतलावना ॥ १ ॥ अति दुख पाया मैंने सासू की कार में, कलक लगा करके जगल में मुझे काढ़ना ॥२॥ फिर दुख पायो मैंने पियर के द्वार पै, भाई भोजाई ने नीर नहीं पावना ॥३॥

॥ दोहा ॥

वसन्नमाला वाणी वदे, कीजे वन में केल।
सुख दुख मिलना बिछुड़ना, सब कर्मों का खेल ॥१

तर्ज—होरी काफी।

कही कर्मन की गत न्यारी, टरे ना किन से टारी ॥ टेर ॥ ब्रह्मा विष्णु महेश शेष सब, कर्मन के वसकारी। पांडव राम राय हरिचन्द से, बड़े बड़े अवतारी, भमें वन वन भिखियारी ॥१॥ सुख दुःख संपति विपति वियोग है, चल दल ने अनुहारी। पूरव भव के कर्मोपार्जित, पावत है नरनारी लिख्यो यों नीति मझारी ॥२॥

॥ दोहा ॥

मन्त्री वसन्ती सती भयी, एम बधाई वीर।
धीर सती दिल धार कर, चली समावी वीर ॥१॥

तर्ज—

जोड़ जो समस्या हो सतियों में पड़ी पीड़ा रो नहीं पार सुमानी। रति सम सुन्दर पुण्य पुरंदरी, कोमल तन सुकुमार सुमानी ॥ १ ॥ काट विजोलेहो हरदम हींदती करती नूतम केल सुमानी। या सती वन में विलखी टलबले ज्यों जल बिन जल वेल सुमानी ॥२॥ चरण चरणी पै हो सतियाँ नहीं धर्यो चलती चढ़ महाझोल सुमानी। कोमल पगतल रुधिर प्रवाह से चरण हुआ चढ़ चोल सुमानी ॥ ३ ॥ मारग भाखर कांटा काकरा चुभे चरणों में तीर सुमानी भूखी प्यासी हो दासी साथ है फट गया तन का चीर सुमानी ॥४॥

॥ दोहा ॥

सती शैल के शिखर पर, बैठी ध्यान लगाय।
अब पीछे या चरित्र भी, चतुर सुनो चितलाय ॥१॥

तर्ज—मूल

सती गया से महेन्द्र पुरी का नागरिक नर नार।
राजा और रानी को देवे मुख २ सब धिक्कारजी ॥१४॥
पूंछ ताछ नहीं करी जरासी, खोटो कियो अपाल।
माय फिराई नगरी मांही, कीसा कर्म चण्डालजी ॥१५॥
नगर झुरे सतियों के कारण गुण गावे नर नार।
रानी मुख से अब पिछताबे कीनो नहीं विचारजी ॥१६॥

तर्ज—तावड़ा धीमो पडजा रे।

काम मैं आछो नहीं कीनो २ दीयो सति ने दुःख नाहक अपजम शिर लीनो ॥टेर॥ मेरी लाडली सती अञ्जना, आशा कर आई मै निरभागन ऐसी निकली जरा न वतलाई ॥ १ ॥ अकल गई थी निकल हमारी, विकल भई मुझ देह। पानी तक नहीं पायो उनको, आसूं वरसे मेंह ॥२॥

॥ दोहा ॥

पाछल वुद्धि नार की, पड़ी धरणी मुरजाय।
महाराजाजी आय के, रहे एम समझाय ॥१॥

तर्ज-हणभुणियो ले।

किस कारण इण रीत सुं सुणो राणीजी, थे डव डय भरिया नेण हो महाराणीजी। इतनो सोच करो किसो सुणो राणीजी, थे सांच कहो मुझ वेण हो महाराणीजी ॥ १ ॥ के थांने लागी भूतणी सुण राणीजी, के थारो दुखे शीष हो महाराणीजी। के कोई हुकम न मानियो हो महाराणीजी जिणसुं आई रीस हो महाराणीजी ॥२॥

॥ दोहा ॥

रोना धोना रोक के, कर कुछ सोच विचार।
हाथ जोड़ राणी कहे, सुण प्रिय ! प्राणनाथ ॥१॥

तर्ज—गूजरणी की।

अकलदार पियूड़ा रे प्राणाधार पीयूड़ा, म्हारा प्राणों रा पियारा कांई पूछीयो पीयू निकम्मो अपयश क्यू लीयो। टेर ॥ म्हांरी प्राणोंरी पियारी सती अञ्जना देवो आई पीयर की तीर। पीया आप फिराई शहर में पीया पायो नहीं ॥ नीर ॥ १ ॥ पीया बेगम आत है मायरी पीया अकल कठांसू होय। पण अकल कीहाँ गई आपरी पीया जिवसू रही मैं खोय ॥२॥

॥ दोहा ॥

तत्क्षण नृप बुलाय के, मन्त्री को तत्काल।
बोला आतुरता सहित, शोधन करके लाल ॥१॥

तर्ज—जावो जावो अए मेरे साधो रहो गुरु के

सावो सावो हो मेरी समता सुणिये मन्त्री धीर ॥ टे बारह बरस से बाई आई आया घरकर पीर। गर्भवती सती अञ्जना सहती अनहद पीर ॥ १ ॥ तो भी हमने सुनि हीम हो सुन मन्त्री गंभीर आप फिराई नगरी भर में कोई मत पाना नीर ॥ २ ॥ अब तुम जाकर बन २ ढूंढो कर को तदबीर। कम्या देखे बिन हम सबका हृदय धरे ना धीर ॥३

तर्ज—मूल

सारा वनकू सोधियो सरे मिली न अञ्जना नार।
फिर पछतावो क्या हुवे सरे पहिली करो विचारजी ॥१६२॥
अब तुम श्रोता सांभलो सरे, सातेवों को अधिकार।
वन में इत उत फिरे अञ्जना दुःखों को नहीं पारजी ॥१६३॥

वसन्तमाला कहे सुण तूं बाई, बाप तेरो चण्डाल ।
माता तेरी पापणी और भाई है कंगालजी ॥१६४॥
पानी तक नहीं पायो प्यारी, और कहूं क्या वात ।
आल दियो फिर झूठो उलटो, नहीं राखी एक रातजी ॥१६५॥
सती कहे तूं मतिकर निन्दा, पुण्यवन्त मारो तात ।
पतिव्रत पालनहारी माता, पितु भक्त है भ्रातजी ॥१६६॥
पीहर और सासरे मांही, मत कर किन पर रोष ।
पूर्व भव में कर्म कमाया, दे कर्मों ने दोषजी ॥१६७॥
पग में भागो कांटो सती के, आंटो काढे जाम ।
चलियो न जावे अति दुःख पावे, बोली सखी को तामजी॥१६८

तर्ज—कांटो लागो रे देवरिया !

काटो लागोए पग मांय सहेली पैंड भर्यो ना जाय ॥टेर॥
किन विध चालू कहिये बाई, चलतां चलतां मैं घबराई, जीव रह्यो दुःख पाय ॥१॥ जिण में कांटो आंटो काढे, देखो स्थान कोई यहां ठाडे, जोवो इत उत जाय ॥२॥

॥ दोहा ॥

सखी शिखर पर जाय के, देखे निजर पसार ।
मुनिवर देख्या ध्यान में, पाई हर्ष अपार ॥१॥

तर्ज —चालो सजनी बहिली ।

चालो जल्दी बाई, देखोनी वन के मांही; मोरी सजनी ज्ञानी गुरु उभा ध्यान में ॥ टेर ॥ भलो भाग्य बाईजी थांरो, सांचा सतगुरु मिलिया । दरसन करसां चरण भेटसां, अब

तो दुखड़ा दलिया ॥१॥ संयम रागी तृसना त्यागी, पूरन वैरागी। ध्यान ध्यान में लीन मुनीश्वर शिव शिवपुर सुख पी ॥२॥ सखी अञ्जना सुन सुख पाई मुनिवर पासे आई। नीची सुख सुख शीश नमाई बोली कर लघुताई ॥३॥

तर्ज—व्रजराज आज सांवरो

गुरुदेव की मुझे सेव पुण्य योग से मिली, पुण्य योग से मिली शुभ योग से मिली ॥ टेर ॥ धन्य धन्य आज मेरी धन्य की घड़ी कितने दिनों से वैद ? मेरी कामना फली ॥ १॥ मुनिराज के दीदार मानों चन्द्र की कली, है देव शांति मानों कुंज की कली ॥२॥

॥ दोहा ॥

ध्यान पार मुनि यों कहे, हो सब का कल्यान।
सुन पाई तव अजना, पूरब भव व्याख्यान ॥१॥

तर्ज-नामेला पुत्तर जाणिये।

कर्म न छूटे रे जीवड़ा करिये संयम को। कर्मगति है वांकड़ी भावपो भी जिम गिरमोह ॥१॥ पूरब भव के माय में हरिपो में सोक को वास। घड़ी तेरह तोई रा़खियो, पाड़ोसल घर में पास ॥ २ ॥ माता तो इत उत ढल बले यूं तो किमो उपहास। आखिर में सुत सूं दियो जब आयो माता

मोट-कई एक पुस्तकों में सामग्री के भोमा उद्योतरथ का भी लिखा है।

ने जास ॥३॥ रही तू घर में वांजड़ी, फिर लीनो संयम भार। अन्ते आलोचना नहीं करी, गई फिर स्वर्ग मझार ॥ ४ ॥ स्वर्ग थकी चव यहां हुई, कन्या राज कुमार। कर्म तणे परताप सूं, पावो दुःख अपार ॥५॥ तेरह वर्ष तेरह घड़ी, वढ़ गयो पूरो व्याज। पति छतां विरह रह्यो, सासु विगाड़ी लाज ॥६॥ पाडोसण सखी आ हुई, दुख पावे तुम साथ। मिलसी पति कुशले तुमें, जीत के आसी थारो नाथ ॥७॥ अब तो सदा सुख पाव सो, होगयो दुखरो अन्त। गर्भ तुमारे पुत्ररो, शूरवीर पुण्य वन्त ॥८॥

॥ दोहा ॥

मुनि मुख मंजुल वचन यह, सुणया अंजना ताम।
रोम रोम हर्षित हुये, बोली कर परणाम ॥१॥

तर्ज–जध्त्रा की।

मुनि मन मोहन सोहन सूरत प्यारी हो, सुखकारी मुनिराज उपकारी मुनिराज। गाऊँ गुण जश जाऊँ मैं बलिहारी हो मुनीन्द्र। जन मन रंजन भंजन भव भय भारी हो, सुखकारी मुनिराज। मुनि मन मंजन खल दल गंजन कारी हो मुनीन्द्र ॥१॥ सुरपति नरपति वंदित जय जय कारी हो सुखकारी मुनिराज, सतगुरु कान्त शान्त गुणधारी हो मुनींद्र। कीरति कन्त अनन्त सन्त गुणधारी हो सुखकारी मुनिराज। जिनके पदकज धोक त्रिकाल हमारी हो मुनिंद ॥२॥

॥ दोहा ॥

धर्म ध्यान करते रहो, कहकर यों मुनिराय।
विद्याधारण योग से, उड़े गगन गति जाय ॥१॥

तर्ज—पपीहा काहे मचावे शोर।

गगन में गमन कियो मुनिराज। सतगुरु धर्म की जहाज ॥ ग० ॥ बैठी सतियों ध्यान में हुआ सूर्य तब अस्त। वनचर घूमे विपिन में तिमिर भयो है समस्त मस्त इक आयो है मृगराज ॥१॥ आकुल व्याकुल हो सती पड़ी दर्द की दाद। गर्भवती सती पीर हो भजन करे नवकार दीनी फिर इस पर इक आवाज ॥२॥

तर्ज—नवकार ही मन्त्र बड़ा है।

अब कैसा कष्ट पड़ा है कोई कीजो रक्षा आय के ॥टेर॥ सुनो वन के सुर अधिकारी हम आई शरण तिहारी हम दीन हैं अबला बिचारी बचाओ करुणा लाय के यह सम्मुख शेर खड़ा है ॥ १ ॥ यदि शील धर्म में साची हूं मन से हैं राची सब क्षेमा रग रग माची फिर करना रक्षा आय के बाकी झूठा झगड़ा है ॥ २ ॥

तर्ज—मूल।

करुणा झन्नता सुनी वनविच वन रक्षक सुर राज।
अष्टापदी का रूप बनाकर देखा क्या है दंगल आजजी ॥१६६॥
सुन वन में दो सतियां आई दुःख पाय बिन पार।
मरी हद में ऐसी हालत धिक मारे जम बारजी ॥१७०॥

ऐसा सोच विचार देवता, बना सिंह शार्दूल।
दे आवाज़ मृगराज हटायो, ज्यों वायु आगे तूलजी ॥१७१॥

खास स्वरुप बनाय देवता, नहीं मन कीनो मान।
सती चरण में शीश झुकाकर, देव गयो निज स्थानजी ॥१७२

रात्री गई और रवि उदय हो, खिली सकल वनराय।
सती अञ्जना सखी संगाते, मारग चाली जायजी ॥१७३॥

कर्म योग से मारग विच में, करतो मुख फुंकार।
क्रोधारुण हो सर्प भयंकर, पड्यो सती की लारजी ॥१७४॥

तर्ज—मल्ली जिन बाल ब्रह्मचारी।

शील की महिमा है भारी रे २ मिट जावे संताप पाप सब है शाताकारी ॥ टेर ॥ सती अञ्जना धीरज धर कर ऐसे विचारी करूँ परीक्षा में प्रीतम की, सुन सहियर प्यारी ॥१॥ प्रीतम हो तन मन सेती पूरण ब्रह्मचारी। तब तूं नाग भाग कर जाना, मान आन मारी ॥२॥

तर्ज—मूल।

सर्प गयो सती मन सुख पायो, आयो हर्ष अपार।
पियो हमारो है पुण्यवन्तो, शीलवन्त सुखकारजी ॥१७५॥

दोनों सतियों वन में रहवे, भोजन वन फल खाय।
धरम शरण में रहे रात दिन, सुख मांहे दिन जायजी ॥१७६॥

चैत्र मास की वद अष्टमी ने, पुष्य नक्षत्र शशिवार।
[illegible] जायो वीर कुमारजी ॥१७७॥

तर्ज–गजल

हुआ चमत्कार राम बैसा उजाला हो तो ऐसा हो आया सुख भवानी बाला य साला हो तो ऐसा हो ॥ टेर ॥ बड़ा है वीर बजरंगी अवर ओधार है अंगी, शांति सुकुमार सुसंगी मिलाता हो तो ऐसा हो ॥ १ ॥ हुआ उद्योत भूतल में, हुई सब शांति थल थल में करे सुर आय जयकार पुकारा हो तो ऐसा हो ॥ २ ॥ राक्षस कुल नाश कन्दन को विद्याधर वृन्द मन्दन को सीताबर राम नन्दन को सितारा हो तो ऐसा हो ॥ ३ ॥

मामो कहे सुण भाणजी सरे अब मत करिये सोच ।
म्हारे साथ में आप पधारो, ऊंचो घर आलोचजी ॥१८५॥
बैठ विमाने चालिया सरे, सती गोद हनुमान ।
मोती झूमका लेवन कारण, कुंवर करे अनुमानजी ॥१८६॥
उछल्यो कुंवर तोड़कर मोती, पड़यो भूमि पर जाय ।
सती अजना देख दशा यह, इण विध रही अकुलायजी ॥१८७

तर्ज-रसिया नवीन ॥

म्हांरो लाल गिऱ्यो सुकुमार लार मैं भी गिर जाऊंगी । मैं भी गिर जाऊंगी हाय मैं तो मर जाऊँगी ॥ टेर ॥ अब नहीं हरगिज जिन्दी रहूंगी मैं दुःख पाऊंगी । लकड़ वाल कर जालो जाल में, मैं जल जाऊँगी ॥ १ ॥ जब तक लाल नहीं देखूंगी, अति दुःख पाऊंगी । हा ! कर्मों ने यह क्या कीना, किम शांति मनाऊंगी ॥२॥

तर्ज-कोरो काजलियो !

मामो ऐसे बोलियो, सुनो सती अरदास, कुंवर पुन्य-वन्तो ॥टेर॥ सोच रति तुम मति करो, हृदय रखो विश्वास ॥ १ ॥ पुत्र तेरो मरियो नहीं तूं कहण हमारी मान । इण की सुर सेवा करे, कांई प्रगटो जग में भाण ॥ २ ॥ नीचे जाकर देखियो, कांई तूटी तरू की डार शिला तणो चूरण । कियो कांई रम रहो है सुकुमार ॥ ३ ॥ चकित हुआ चित्त में तदा, कांई लेकर तब बाल । आय सती ने सूंपीयो, फिर बोला एम सवाल ॥४॥ चिन्ता चित्त से छोड़ के, कांई करिये यों अभि-मान । वीर जननी मैं जगत् में जनमियो श्री हनुमान ॥५॥

तर्ज–मूल

शीघ्र गति से चालिया, आया है मोसाल।
सती धर्म में लीन है, पल्ले मंगल माल ॥१८८॥
पवन पवन को जीत के, ले लंका सूं मान।
सीधा आया निज नगरी में पिता दियो सम्मानजी ॥१८९॥
मात पिता को वन्दन करिके आयो महलां मांय।
इत उत देखी सती न लाधी, फाक रहे कुलरायजी ॥१९०॥
माता धड़ धड़ धूंजन लागी आई पुत्र की बार।
रोती रोती इस पर बोली सुन जाया सुकुमारजी ॥१९१॥

तर्ज–हां सगीजी ने पेडा भावे

हां लाल सुनो अर्ज हमारी काया कपे कहतां सारी, क्या कहूं हा! इकनाक सती मैं विपदा डारी रे ॥ टेर ॥ गर्भ देख मैंने बलकारी, ऊंची टेर सती को मारी। कहा सती न सुन मुझे हा! कर लाचारी रे ॥ १ ॥ तो भी मुझे दया न आई कैसी कुमति उंपी आई, करके काला मंप देश से बार निकाली रे ॥२॥ पापल बुद्धि मार कहावे वक्त में अकल कहां से आवे। हां बेगम की जाव रहे नहीं, गम हितकारी रे ॥३॥

॥ दोहा ॥

पवन श्रवण कर शीघ्र ही, प्रजल्यो कोप मझार।
पर माता को देख के, बोला वचन विचार ॥१॥

तर्ज--बन को भेज दिये दो भैया

माता ! जबर जुलम कर डार्‍यो बन को भेज दी दो सतियां ॥ टेर ॥ अगर तुझे था निर्णय करना, देनी थी पत्तियां । जैसी हुई थी वैसी मैया, लिख देता बतियां ॥ १ ॥ मैया तूं है समझदार, क्यों छाई कुमतियां । सतियों की हा! या न लाई, गजब करी गतियां ॥२॥

॥ दोहा ॥

यों कहे चाले पवजी, आई माता दौड़ ।
हाथ पकड़ कर लाल का, बोली वेकर जोड़ ॥१॥

तर्ज--मारवाडी मांड

सुन लाल हमारा चाल दियारा, अर्ज मातारी मान ॥टेर॥ ऐसे हुआ तो लालजीरे, कहना था मुझे आय । क्यों दुख देती हाय सती को, क्यों होता अन्यायजी ॥१॥ भूल हमारी पुत्र भूल कर करिये भोजन चाल । पीयर होगी विनणी रे, लेसां सार संभालजी ॥२॥

तर्ज-पाणीडो भरवा दे.

मैया मत करिये लाचार, झटपट जावण दो ॥ टेर ॥ भोजन माता किस विध भावे, जीव मेरा तो अति घबरावे, आवे दुःख अपार ॥१॥ नारी विना नहीं नीर पीऊँगा, प्यारी विना अब नहीं जीऊँगा, मरसूं खाय कटार ॥ २ ॥ माता का झट हाथ छुड़ाकर, अपने मित्र के महलों आकर, बोला यों ललकार ॥ ३ ॥

तर्ज–लंगडी चाल

जोगी बन तन भस्मी रमाऊँ, प्यारी ढूंढकर लाऊँगा,
न मिले मेरी नार यार मैं जहर खाय मर जाऊँगा ।टेर। बि
बिना यह दुनियां सारी मुझको झूठी लगाती है बिना सा
के गति हमारी दिन दिन बिगड़ी जाती है । प्यारी बिना
महल अटारी खाना सोना पीना क्या बिना प्रिया के
कहूं मैं जगत् बीच में जीना क्या । मरी हुई या जीती है
खबर खास मैं लाऊँगा ॥१॥

तर्ज–मूल

मित्र कहे सुन पवनकुंवरजी यों मत करो बयान ।
चलो शीघ्र अब खबर लगावें, आकर मित्र ससुरालजी ॥११
चढ़ घोड़े तब दोनों आये महीन्द्रपुरी के पास ।
आये आया पवनकुंवरजी सुन भयो नृप उदासजी ॥११३॥
कन्या कहती जो जो बातां निजरां मांई आज ।
हाय करू क्या मैं मर जाऊँ, किस विध राखूं लाजजी ॥११४

तर्ज–दोय नारगी दोय अनार

भूपति मन में करे विचार आये आया पवनकु मारटेर
मैं मर जाऊँ या विष खाऊँ, हा ! अब जाऊँ अग्नि मझार ॥१
कहां पर जाऊँ कन्या लाऊँ, किम दिखलाऊँ मुख विकार ॥२
भूपति बरचे सब परिजन मे कोई मत देना बात विगार ॥३
सम्मुख आई दरबार मांई लाया जमाई कर सत्कार ॥४
जीमन त्यारी होगई सारी, निजर न आई है निज नार ॥५

तर्ज–पनजी मूंडे बोल.

पवनजी बोलेरे २ विन सती हमारो, मन डम डोलेरे ॥टेर॥
सती दर्श करियां विन भाई, चित्त चैन नहीं पावेरे।
खारा लागे खेल सभी, नहीं भोजन भावेरे ॥१॥
हाल तांई तो सती तणों मैं, रती पतो नहीं पायोरे।
वसन्तमाला भी सखी न दीसे, दिल घबरायोरे ॥२॥
इतेक फिरती निज शाला कीं, छोटी बाला आईरे।
गोद बिठाकर मोद लाय के, यों बतलाईरे ॥३॥
बोलो बाई थांरी फूंफी अठे आई के नाई रे।
रोती रोती बोले बाई, कहूं अब काई रे ॥४॥

तर्ज–आखिर नार पराई है.

एक दिन फूफी आई थी, पिता नहीं बतलाई थी ॥टेर॥
माता से उण करी पुकार, फिरी फेर सौ बधव द्वार, सब ने बार कढ़ाई थी ॥ १ ॥ फूफी का लख काला वेष, राजा राणी करियो द्वेष, प्यासी ने निकलाई थी ॥ २ ॥ कोई मति इण ने बतलाओ, भोजन और पाणी मत पाओ, ऐसी आण फिराई थी ॥३॥

॥ दोहा ॥

हाल श्रवण कर बाल से, उठी जालो ज्वाल।
थाल फेंक तत्काल ही, बोल एम सवाल ॥१॥

तर्ज-लंगडी लावणी

चलो मित्र अब देर न करिये घोड़ों ऊपर जीन करो। इत उत जंगल झाड़ी पहाड़ी, खोज सती को जबर करो ॥ टेर ॥ भोजन करिये किस विध भावे याद आवे मैंने घड़ी घड़ी। खबर करां अब जाकर आपों जीती है कि मरी पड़ी। बिना मिले अब सती अञ्जना मैं नहीं भोजन खाऊँगा। अपति में जलकर मर जाऊं काशी में कट जाऊँगा। मित्र कहे मित्र जाती छतियां मूंछो क्यों ये मलीन करो ॥१॥ झटपट निकले महलों बाहिर बन की ओर सिधाये हैं मालूम पड़ते महिन्द्र सेमखी दौड़ पवन पे आये हैं। हाथ जोड़ कर अरज करे जो बाता हमारी माफ करो, भूल चूक यह होगई मुझ से आप बड़ा दिल साफ करो। पवन कहे मुझे मतलमा मरजो पसी भी अरजी न करो ॥२॥

तर्ज—माने खोटो लागे जी।

म्हाने नहीं सुहावेजी २ सुसराजी थों काढ़ता थाने शरम न आवेजी ॥ टेर ॥ सोच समझ के काम करो यों कहते नीतिकार। अकल गई थी कठे आपकी अब क्या करो विचार ॥१॥ पेटी में निकाली परन्तु पाणी भी नहीं पायो। हाय ! दया नहीं आई थाने आयो हुकम लगायो ॥२॥ घर अब कैसे ठहरूं शर्म करो ये लाल। पानी तक पीने का मुझको लाभ लाल तहाल ॥३॥

तर्ज—मूल

पवनकवंर तो पवन गति से, चालियो विपिन मझार।
महीन्द्रराय और मत्री सारे, कर रहे खूब विचारजी ॥१६५॥
मात पिता और सासु सुसरा, आये पवन की लार।
फोजां सारी सोधन लागी, नदी गुफा और पहारजी ॥१६६॥
सती मिली नहीं जद पवनकवंरजी, चलने हुआ तैयार।
मात पिना और सासु सुसरा, वरजे वारवारजी ॥१६७॥
इतेक अणुचर इण पर बोला, सती मिला मोसाल।
बैठ विमाने चालिया सरे, आय मिलीया तत्कालजी ॥१६८॥
सती हर्ष ला शीष झुकायो, साथे वीर कुमार।
देख पवन मन मुदित होकर, बोले वचन रसालजी ॥१६९॥

तर्ज-तुमको लाखों प्रणाम

धन धन तूं अवतारी प्यारी, लाखों श्याबास, पतिव्रत पालनहारी तुमको लाखों श्याबास ॥ टेर ॥ मैंने अनहद दुःख दिराया, सासू ने शिर कलंक लगाया तूं ने रखी इकतारी ॥१॥ वन में विध विध कष्ट उठाया, नहीं धर्म से प्रेम हटाया, जाऊँ मै वलिहारी ॥२॥ वसन्त माला भी सखी सयानी, दुःख सुख में आ रही अगवानी, है मन मोहन गारी ॥३॥

तर्ज-छोटी मोटी सुईयांए.

प्राण पति सरदार ऐसे नहीं फरमावना ॥टेर॥ मै हुं आप के चरणों की दासी, तूं मुझ प्राणाधार हार मन भावना ॥१॥ मात पिता और सासु सुसरा, है सब को उपकार, शील जश छावना ॥२॥ आप प्रताप आज दु:स टलियो, मिलियो मंगल माल आनन्द वरतावना ॥३॥

॥ दोहा ॥

सासु प्यारी आय के, इन पर बोली साफ।
भूलचूक सब आपरी, बहुअर करिये माफ ॥१॥

तर्ज—गहरोजी फूल गुलाबरो

धन धन तू सती अञ्जना, धन धन हो थांरो अवतार। धन पीहर धन सासरो धन धन हो थांरो अमपार ॥ १ ॥ दं जगदम्बा अम्बिका तू हिज है सतियों सिरदार। बाल्य वय लग पालियो ब्रह्मचर्य हो खांडारी धार ॥ २ ॥ पति पर रति ना रीस की दीनों हो पति दुःख अपार। पतिव्रत धर्म न हारियो राखी हो कुलवटरी कार ॥ ३ ॥ कलंक दियो थां ऊपरे दीनों हो मैं दुःख अपार। माफी मांगूं आपसे, दीजो हो दिल दया विचार ॥४॥

तर्ज–गनगोर की

सासूजी थे मारा थांरा चरण पखाली पूजूंजी।
चरण पखाली पूजूं थांने हाथ जोड़कर पूजूंजी ॥ टेर ॥
आप बड़ा गुणवान सासूजी म्हारो मान बढ़ायोजी।
पूर्व भव के कर्म प्रतापे इतनो दुःख उठायोजी ॥१॥
आप दियो तो सब दुःख दियो मैंने किया फल पायाजी।
ऐसी सुलक्षणी सती अञ्जना अपना अवगुण गायाजी ॥२॥

तर्ज—हींडे हालो रे.

आनन्द आयोरे २ ओ सती अञ्जना जश जग छायोरे ॥टेर॥
सती वचन सुन सासुजी को, हद विन हिय हरपायोरे।
किन्ही उपर नहीं दोष दियो, निज अवगुण गायोरे ॥१॥
मात पिता भी आय सती पे, निज अपराध खमायोरे।
भाई भोजाई सभी सती ने शीश झुकायोरे ॥२॥
शीलवती अति सती अञ्जना, पतिव्रत धर्म निभायोरे।
नरनारी मिल मुक्त कण्ठ से, सति गुण गायोरे ॥३॥
सती मामा को सव मिल करके, पूरो मान वढ़ायोरे।
देख पौत्र को प्रह्लाद भूप के मोद न मायोरे ॥४॥

तर्ज—मूल

दादा दादी देख पौत्र को, हनुमत निज कुल हीर।
यह निश्चय नामी नर होगा. वश विद्याधर वीरजो ॥२००॥
भक्ति युक्त अति भाव धरी ने, मामे कर मनुहार।
सज्जन गण संतोषिया सरे, पवनंजय को प्यारजी ॥२०१॥
पाच सात दिन प्रीत धरी ते, रह्या घणो रस रग।
शीख मांग कर पहुंच गया सव, निज २ घर उछरंगजी ॥२०२
पवनकुवरजी निज परि कर ले आया नगरी मझारजी।
मामो पिन पहुंच.वन आयो, वरत्या जय जयकारजी ॥२०३॥
पवनकुंवर को पाट वैठाकर, ले खुद संजम भार।
तप जप से आतम शुद्ध करके, पहुचा स्वर्ग मझारजी ॥२०४॥
राज्य कार्य सव पवन चलावे, वरते मगल माल।
वसन्तमाला ने पूछने सरे, करे सार सम्हालजी ॥२०५॥

हनुमान कुमरजी पढ़कर हो गये, बहत्तर कला निधान ।
वानर विद्या हांसी की पढ़ सीखी, उसमें चौदह वय बलवानजी ।
एक दिन बैठे सभा जोड़कर पवन वीर हनुमान ।
लंकापुरि से अनुचर आयो दूत बड़ो गुणवानजी ॥२०७॥
वरुण राय फिर माने नाहीं रावण का संदेश ।
हनुमत बोले सुनो पिताजी दो मुझको आदेशजी ॥२०८॥

तर्ज—मेरे प्रभु कदमों में बुलालो मुझे.

पिता युद्ध करने को मैं जाऊँगा मैं ।
भुजबल को अजमाऊँगा मैं ॥ टेर ॥
इस अपानी का पराक्रम काम क्या फिर आयगा ?
आपके आगे हे स्वामिन् ! मुझको युद्ध बतलायगा ।
अपने जौहर को जाके दिखलाऊँगा मैं ॥१॥
आपके परताप से यह वरुण को समझायगा ।
मान मर्दन कर उसी का शीश नीचा आयगा ॥
जग में जीत पताका फहराऊँगा मैं ॥२॥

तर्ज—घनश्याम की महिमा अपार

पिता कहे धर प्यार सुत मेरी सीख स्वीकार ॥ टेर ॥
वरुणराय का काम खलास मान कहन तूं मेरे लाल !
रहिये महल मझार ॥ सुत० ॥१॥
जीमय में जाओ ना भाई खेल नहीं समझो मन मांई ।
पीछे करोला विचार ॥२॥
विना वचन सुन कहे हनुमाना मुझे जग में विजय पाना ।
लीना है दिल में धार ॥३॥

तर्ज-मूल.

देख वीरता वजरंगी की, पवनजी करे विचार ।
जाओ जग में कुंवर साहब, पिन रहना हुय हुंसियारजी ॥२०६

दल बल प्रबल सजाय के सरे, चाले श्री हनुमान ।
निज नानेरे आयके सर, प्रथम कियो प्रमाणजी ॥२१०॥

आई श्री हनुमान कुमर के, मन में ऐसी बात ।
इस नगरी से दुःखित होकर, निकली मेरी मातजी ॥२११॥

दूत भेजियो नानाजी ने, थानो म्हारी आन ।
नहीं तर थांरी रहसी नाही, थोड़ी सी भी शानजी ॥२१२॥

तर्ज-राधेश्याम की.

सुन दूत वचन ज्यों भूत लगा त्यों महेंद्ररायरी साया है ।
काला मुख कर मार जूत सर दूत भणी निकलाया है ॥
वस कह देना तेरे मालिक को मैं फौरन ही आ जाता हूं ।
मुझको आन मनाने का मै उसको मजा चखाता हूं ॥
सौ पुत्रों के साथ वीर वे दल बल ले तैयार हुए ।
कायर नर को छोड़ और सब वीर, पुरुष हुसियार हुए ॥
रण भेरी जो वहां बजती थी और घाव निशान लगाया है ।
महिंद्र भूप निज सेना लेकर नगरी बाहिर आया है ॥
नानाजी के निकट आय कर खड़ा वीर हनुमान हुआ ।
मानों आया सूर्य उतर कर ऐसा ही अनुमान हुआ ॥
महिंद सेन यों बोला उसको तूं तो अब तक बच्चा है ।
तू मेरे से नहीं जीतेगा यह कहन हमारा सच्चा है ॥

॥ दोहा ॥

नानासा की नीति को, सुनकर मारी फाल।
बजरंगी आगी कुंवर, बोला शीघ्र सवाल ॥१॥

तर्ज–राधेश्याम

मत करिये मगरूरी इतनी धूल मांय मिल जायेगी।
अब तीर हमारे चालेंगे तब समझ रह जायेगी॥
मैं छोटा हूं या मोटा हूं यह मालूम भी पड़ जायेगी।
अब जोश हमारा देख आपकी होस हवा उड़ जायेगी॥
बाणियों से बाणियों जुध करके अब आगी धुम मचाई है।
तीन पहर तक बजरंगी ने अपना जोर दिखाया है॥

॥ दोहा ॥

बांध लिया मामा और नाना, सभी करके पूछ।
कहो जोर अब कहां गया, कहे तान कर मूछ ॥१

तर्ज–मूल

मम माता को अति दुःख दीना जिणसुं किया संग्राम।
मैं हूं बालिको प्रभु आपको हनुमन्त मेरो नामजी ॥२१३॥
लोलीया पम्पम हुई रंग रलीया हनुमन्त सका आय।
गयल राजा सम्मुख आयो देख देख हरखायजी ॥२१४॥
बरुणराय पर चढ़ीयो पवन सुत लंकपुरी की तीर।
साथ रावणजी पिता आया लघु वय देखी वीरजी ॥२१५॥

वानर विद्या को फैलाकर, जीतो हनुमन्त वीर।
वरुण कहे मैं संजम लेसूं, आया सब तिण तीरजी ॥२१६॥

वरुणराय को संजम देकर, दीयो पुत्र ने राज।
देख वीरता हनुमन्तजी की, खुशी हुवो महाराजजी ॥२१७॥

रावण भाणजी सुग्रीव कन्या और हजार।
वजरंगी से व्याही एक दम, वरतीया जय जयकारजी ॥२१८॥

दत्त डायजो दियो रावण ने, जिण को छेह न पार।
सीख लेय हनुमानजी आया निज नगरी में चालजी ॥२१९॥

पवन अञ्जना देख पुत्र ने, पाया चकित अपार।
ऐसे करता गयो काल कितोही, सुख भोगे संसारजी ॥२२०॥

संसार असार जान के, दोनों पवन अञ्जना लार।
हनुमान को राज पाट दे लीनो संजम भारजी ॥२२१॥

पवन कवँर और सती अञ्जना, वसन्तमाला भी लार।
अन्ते अनसन कर्म खपावी, गया मोक्ष मझारजी ॥२२२॥

जयमल्ल गच्छ जग में जयकारी, कीरति कमला कन्त।
जिनके अष्टम पाट विराजे, गुरु मेरे गुणवन्तजी ॥२२३॥

पूज्य श्री कानमल्लजी, सतगुण के भंडार।
शान्त सरल विद्वान् हुये थे, गुण गावे नर नारजी ॥२२४॥

तस्य शिष्य मुनि चैनमल ने, कीना चरित्र तैयार।
सती अञ्जना सरस रसीलो, सब जीवां सुखकारजी ॥२२५॥

उगणीसे पच्याणु वरसे आखा तीज त्यौंहार।
गाव खांगटे मरुधर माही, आया सेखेकालजी ॥२२६॥

कोठारी कमलमलजी श्रावक हैं सुखकारी ।
जिनके शांति भवन में ठहरे, पढ़े मृतु शाताकारीजी ॥२२७॥

यद्यपि ओछा अधिको होवे, ओछी पुस्तक जोय ।
तेहनो त्रिकरण योग से, मिथ्या दुष्कृत मोय ॥२२८॥

श्रवण पठन को सार यही है पालो शुद्ध मन शील ।
शिव घर संपति संपदा सारे कर सदा ही लीलजी ॥२२९॥

सती अञ्जना पवन वीर का, गुण गायो नरनार ।
जय बोलो जिन राज की सारे बरते जय जय कारजी ॥२३०॥

ॐ शांति ! शांति !! शांति !!!